हनुमद्-रहस्यम्

लेखक-आचार्य पं० शिवदत्तमिश्र शास्त्री



प्रकाशक-

श्रीठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी। मू०-३०) रु०



'शिव' ग्रन्थमाला : ग्रन्थाङ्क-२३

हनुमद्-रहस्यम्

(हनुमत्तन्त्र-हनुमत्पञ्चाङ्ग-हनुमत्सिद्धि-हनुमदुपासनोपेतम्)

'शिवदत्ती' हिन्दी-व्याख्या-सहितम्

*

लेखक तथा सम्पादक

व्याकरणाचार्य-साहित्यवारिधि-

आचार्य पण्डित श्री शिवदत्तमिश्र शास्त्री

(उत्तर प्रदेश शासन द्वारा सम्मानित)

*

प्रकाशक

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी-२२१००१

१९८८ ई०]

[मूल्य

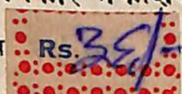


प्रकाशक :

श्री ठाकुर प्रसाद पुस्तक भण्डार

कचौड़ीगली, वाराणसी-२२१००१

दूरभाष-६६४२०

मूल्य 

मुद्रक—

सत्यशिव प्रेस

क्षारानगर, वाराणसी

'Shiva' Granthamala : Granthank-23

The Hanumad-Rahasyam

OR

Hanumattantra, Hanumat Panchanga, Hanumatsiddhi and Hanumadupasana

[With the Hindi Commentary]

*

By

Acharya Pt. Shri SHIVADUTTA Mishra
Shastri
Vyakarnacharya, Sahityavaridhi

*

Published By
Shree THAKUR PRASAD PUSTAK BHANDAR
Kachaurigali, Varanasi-221001

1988]

[

Publishers :
SHREE THAKUR PRASAD PUSTAK BHANDAR
Kachaurigali, Varanasi-221001



1988
Rs. 



Printer :
Satya ShivA press
Daranagar
Varanasi-221001

प्रस्तुत संस्करण

प्रस्तुत संस्करण हनुमद्-उपासना प्रेमी विद्वानों के समक्ष उपस्थित करते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। थोड़े समय में इस संस्करण का समाप्त हो जाना ही इस बात का सूचक है कि हनुमद्-साहित्यान्वेषी सुधी जनों ने अपनी रुचि के अनुकूल सामग्री इसमें अवश्य प्राप्त की है। मेरा विचार था कि प्रस्तुत संस्करण को और भी अधिक संशोधित एवं परिवर्धित रूप में प्रस्तुत किया जाय, किन्तु कार्याधिक्य से समयाभाव एवं पुस्तक प्रकाशन में शीघ्रता के कारण अभीष्ट परिवर्तन एवं परिवर्धन न होकर मात्र पूर्व संस्करण की अशुद्धियों का ही सुधार तथा आंशिक परिवर्धन के साथ पुस्तक प्रकाशित की गयी है।

आशा है, पूर्व संस्करण की भाँति प्रस्तुत संस्करण का भी विद्वत्समाज में समुचित समादर होगा।

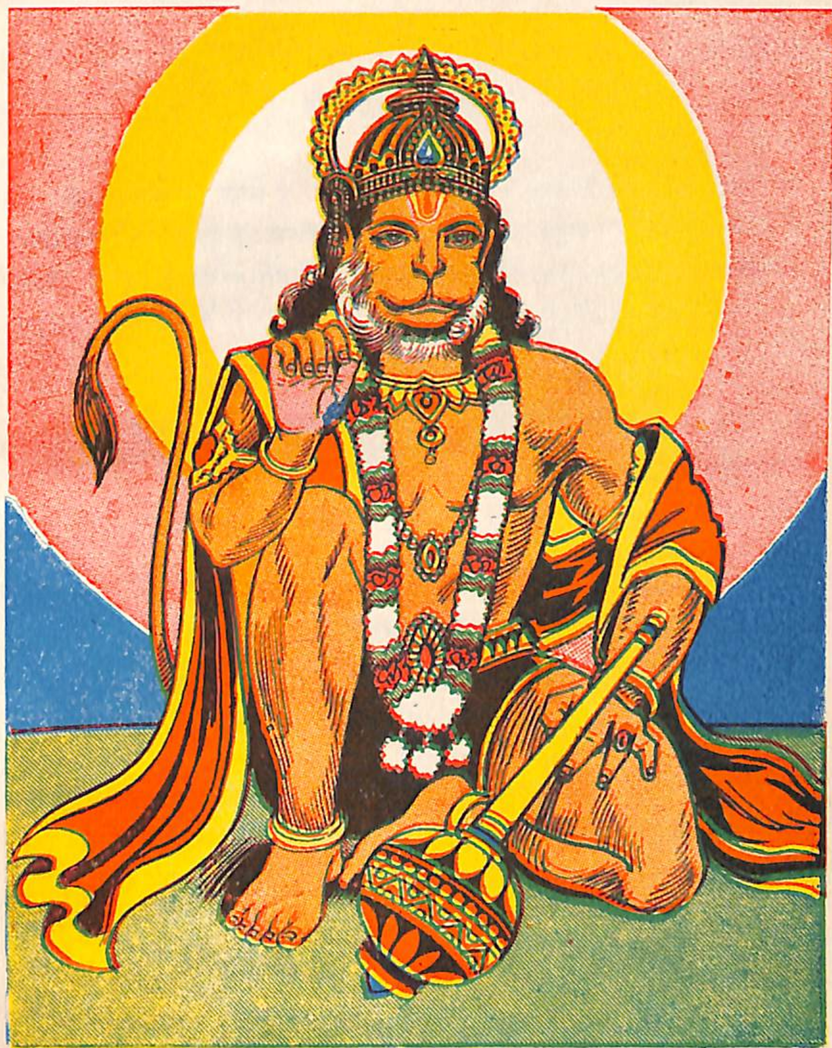
अक्षय तृतीया
१९ अप्रैल, १९८८
वाराणसी-१

—शिवदत्त मिश्र शास्त्री
सी० के० ५।२६ ए०
भिखारीदास लेन, वाराणसी-१

हनुमत्-पूजन-सामग्री

चन्दन, रोरी	खड़ाऊं
केसर, सिन्दूर	अबीर, बुक्का
धूपबत्ती, नारा	पंचामृत
मौली, रूई	बालू
पान, सुपारी	पेड़ा, बतासा
लवंग, इलायची	यज्ञोपवीत, वरण-सामग्री
चावल	हनुमान्‌जी की मूर्ति
पुष्प, माला	हनुमद्-यन्त्र
तुलसी, दूर्वा	सुगन्धित द्रव्य, तेल-इत्र, वगैरह
कपूर	चौकी १
रुद्राक्षमाला, जपमाली	लाला कपड़ा
आसन, पंचपात्र	सफेद कपड़ा
आचमनी	केला का खम्भा
तष्टा, अर्घा	अशोक की पत्ती
नारियल	आम्रपल्लव
गिरिगोला	सुतरी
हल्दी की बुकनी	बन्दनवार
गंगाजल	दियासलाई
नवग्रह की लकड़ी	कलश, दीया, पंचरत्न
हवन के लिए लकड़ी	पंचपल्लव
तिल, जव, घृत, चीनी	सप्तमृत्तिका
कड़वा तेल	सर्वौषधि
पंचमेवा	गोमूत्र
हनुमान्‌जी के लिए वस्त्र	गोबर
आभूषण	यज्ञपात्र
सुवर्णपुष्प (कटसरैया)	

इति हनुमत्पूजन-सामग्री ।





सम्पादकीय

इस पुस्तक का नाम है : 'हनुमद्-रहस्य'। नाम से ही प्रायः विषय का स्पष्टीकरण हो जाता है। अर्थात् हनुमद् = भक्तराज हनुमान्जी की प्रसन्नता के लिए, उनके रहस्य = गोपनीय विषय-ध्यान, उपासना-सम्बन्धी पूजा-अर्चा-अनुष्ठान-विधान एवं चरित्र-चित्रण का ज्ञान कराने वाली पुस्तक।

"वज्रदेहं पुत्रवरमुमाकान्तस्तदाऽब्रवीत्।
एकादशो महारुद्रस्तव पुत्रो भविष्यति॥"

—बृहज्ज्यो०, हनुम० उ०

"पवनात्मा बुधैर्देव ईशान इति कीर्त्यते।
ईशानस्य जगत्कर्तुर्देवस्य परमात्मनः॥
शिवा देवी बुधैरुक्ता पुत्रश्चास्य मनोजवः।
चराऽचराणां भूतानां सर्वेषां सर्वकामदः॥"

—लिंगपुराण, उत्तर भाग, अ० १३

उपर्युक्त श्लोक के अनुसार रामदूत हनुमान्जी को जब कि रुद्रावतार माना गया है, फिर उनके विषय में कुछ लिखना मानो दीपक के द्वारा सूर्य का दर्शन कराना है। तथापि अपनी बुद्धि के अनुसार जनता-जनार्दन की जानकारी के लिए कुछ लिखना आवश्यक है।

हनुमत् जीवन-चरित

एक समय ऋष्यमूक पर्वत पर, केसरी नामक वानर-राज की सती-साध्वी अंजनी (अजना) नाम की भार्या ने पुत्र-प्राप्ति के लिए आशुतोष भगवान् शंकर की उग्र तपस्या सात हजार वर्ष पर्यन्त की। उसकी तपस्या के फलस्वरूप भगवान्

सदाशिव ने सन्तुष्ट होकर उसे वरदान माँगने के लिए कहा। वरस्वरूप में पुत्र-प्राप्ति के लिए शंकरजी से उसने कहा। भगवान् शिव ने इस प्रकार कहा—"हे अंजने ! हाथ फैलाकर मेरे ध्यान में मग्न हो, आँख बन्द कर खड़ी रहो, तुम्हारी अंजलि में पवनदेव द्वारा प्रसाद रखकर अन्तर्ध्यान होने पर उस प्रसाद के खाने पर निश्चय ही एकादश रुद्रावतारस्वरूप परम तेजस्वी तुम्हें पुत्ररत्न प्राप्त होगा।" इस प्रकार कहकर भगवान् सदाशिव वहीं अन्तर्ध्यान हो गये और अंजनी उसी स्थान पर किंकर्तव्यविमूढ़ हो खड़ी रही। इसी बीच चक्रवर्ती राजा दशरथ के यज्ञ में कैकेयी के हाथ से एक चील पिण्ड लेकर आकाशमार्ग में उड़ गयी। उस समय भयंकर आँधी-तूफान से वह पिण्ड चील के मुख से छूटकर वायु-द्वारा अंजनी की पसारी हुई अंजलि में गिरी। तत्क्षण उस पिण्ड को अंजनी ने खा लिया। जिसके फलस्वरूप नव मास व्यतीत होने पर अंजनी के गर्भ से चैत्र शुक्ल पूर्णिमा मंगलवार की मंगलमय वेला में मौंजी, मेखला, कौपीन, यज्ञोपवीत एवं कानों में कुण्डल धारण किये हुए मूंगे के समान रक्तवर्ण वाले मुख एवं पूँछ युक्त वायुपुत्र अत्यन्त बुभुक्षित (भूखे) वानररूप में एकाएक प्रकट हुए।

तत्पश्चात् हनुमान्जी ने माता से कहा कि मुझे बहुत भूख लगी है। उस समय अंजनी अपने पुत्र की क्षुधा शान्त करने के लिए फल लेने हेतु घर के कमरे में गयी। अत्यन्त बुभुक्षित रोते हुए बालक हनुमान्जी ने आकाश में उगते हुए रक्तवर्ण वाले सूर्य को लाल फल समझकर तत्क्षण आकाश की ओर सिंह के समान गर्जना करते हुए हाथ और पैर को फैलाकर उछल गये। उनके आकाश में उछलने के साथ ही समस्त पर्वत विचलित हुए, तथा सभी दिशाएँ रक्तवर्ण की हुईं। और उस अंजनीपुत्र मारुति के मन के समान वेग से तत्क्षण हनुमान्जी मुख फैलाकर सूर्य के निकट पहुँच गये। उस समय दैवयोग से राहु सूर्य को ग्रस रहा था। उसी बीच हनुमान्जी ने उसे अपनी पूँछ की करारी चोट से घायल किया, जिससे वह राहु अत्यन्त भयभीत होकर मूर्च्छित हो गया। तत्पश्चात् वह इन्द्र की शरण में जाकर वानर की पूँछ द्वारा मूर्च्छित होने का समस्त वृत्तान्त कहा। उसे सुनकर इन्द्र अत्यन्त आश्चर्य-चकित होते हुए तत्क्षण अपने प्रधान अस्त्र वज्र लेकर देवताओं की समस्त सेना सहित वे राहु के साथ हनुमान्जी के पास आये। इधर हनुमान्जी ने हाथ में सूर्य को पकड़कर जब यह जाना कि यह

फल नहीं है तब उसे परित्याग कर आकाश-मार्ग से ही अपनी माता के पास जाते हुए मार्ग के बीच राहु तथा समस्त देवताओं की सेना को अपने साथ युद्धरत देखकर हनुमान्‌जी की आँखें क्रोध के कारण रक्तवर्ण की हुईं और उसी समय इन्द्र-देवसेना तथा राहु को उस युद्ध में परास्त किया। उसी समय देव-राज इन्द्र व्याकुल होकर अपने वज्र-द्वारा वायुपुत्र महाबलशाली हनुमान्‌जी के हनु (दाढ़ी) प्रदेश पर प्रहार किया। जिससे हनुमान्‌जी मूर्च्छित हुए और तीनों लोक में हाहाकार मच गया। तदनन्तर वायु ने अपने पुत्र को मूर्च्छित देखकर अत्यन्त क्रोधित हो देवताओं के समक्ष इस प्रकार कहा-"जिसने मेरे पुत्र हनुमान् को मारा है ऐसे इन्द्र को तत्क्षण मैं मार डालूँगा। कारण कि समस्त चराचर के प्राण एवं पितृभूत वायुरूप से मैं ही हूँ।" इस प्रकार कहकर चरा-चर मात्र के श्वासोच्छ्वास (ऊपर को खिंची हुई साँस) रूप वायु को खींच लिया। उस समय ब्रह्मा, रुद्र आदि समस्त देवगण तत्क्षण पवन देव के पास आकर इस प्रकार कहने लगे—

"हे पवनदेव ! आप अपने, समस्त चराचर मात्र पुत्र को पवन रोककर क्यों नष्ट करते हैं।" इस प्रकार कहने पर वायु ने कहा–"यदि मेरा पुत्र जीवित नहीं हुआ, तो मैं इसी समय समस्त देवताओं को नष्ट कर दूँगा।" वायु के इस वचन को सुनकर विष्णु आदि सभी देवगणों ने उनसे कहा।

विष्णु ने कहा–"हे पवनदेव ! इस पूर्णपिण्ड से उत्पन्न आपका यह पुत्र अत्यन्त निर्मल तथा ब्रह्मा के कल्प पर्यन्त चिरंजीवी होगा।"

शिव ने कहा–"मेरे तृतीय नेत्र से उत्पन्न अग्नि सभी शत्रुगण को भस्मसात् कर देगी। परन्तु वह अग्नि भी इस बालक का कुछ अनिष्ट नहीं कर सकेगी, तथा मेरे अमोघ शूल आदि अस्त्र-शस्त्र भी इसका कुछ बिगाड़ नहीं सकेंगे।"

ब्रह्मा ने कहा–'हे मरुत् ! आज से मेरे ब्रह्मास्त्र, ब्रह्मदण्ड, ब्रह्मपाश तथा अन्य शस्त्र आदि भी इसका कुछ अनिष्ट नहीं कर सकेंगे।"

इन्द्र ने कहा–"प्राणिमात्र के आधारस्वरूप पवनदेव ! मैं आपके पुत्र को वरदान देता हूँ कि आज से मेरा अमोघ वज्र भी इस पर कुछ प्रभाव नहीं दिखा सकेगा और इसका शरीर निश्चय ही वज्र के समान होगा। तथा हनु

(दाढ़ी) में मेरे द्वारा वज्र प्रहार के कारण ही आपके इस पुत्र का नाम 'हनुमान्' होगा।"

कुबेर ने कहा–"आपके इस पुत्र-द्वारा सभी असुरों का विनाश होगा।"

यम ने कहा–"हे वायु ! मेरे कालदण्ड का भय आज से आपके इस पुत्र पर अपना प्रभाव नहीं दिखा सकेगा।"

वरुण ने कहा–"मेरे परममित्र पवन देव ! आज से आप का यह पुत्र मेरे समान शक्तिशाली होगा। तथा भयंकर से भयंकर युद्ध में भी इसे थकावट का अनुभव नहीं होगा।" उसी समय विश्वामित्रजी ने भी खिले हुए कमल की एक सुन्दर माला हनुमान्जी के गले में पहना दी।

इस प्रकार समस्त देवतागण हनुमान्जी को वर प्रदान कर अपने-अपने लोक में चले गये।

ब्रह्मर्षियों का शाप और वरदान

सम्पूर्ण वरदान प्राप्त करने के पश्चात् उपस्थित ऋषिगण सशंकित होकर कहने लगे—"यह हम लोगों के आश्रम में रखे हुए फल-मूल-कन्द, भिक्षा, लंगोटी, आँचल तथा कमण्डलु आदि को लेकर भाग जाता है और नष्ट भ्रष्ट कर देता है। अतः हम लोगों के लिए यह बड़ा हानिकर होगा।" इतना कहकर उन लोगों ने हनुमान्जी को शाप (श्राप) दे दिया–"इसे अपने बल-पुरुषार्थ एवं बुद्धि आदि का भी ज्ञान नहीं रहेगा।"।

तब ब्रह्मा आदि ने कहा–"आपलोगों ने यह शाप देकर बड़ा अनुचित किया।"

तत्पश्चात् ऋषियों ने कहा—"यदि कोई इसे बल, पुरुषार्थ आदि का स्मरण करा देगा तो इसे सम्पूर्ण वरदान के अनुसार कार्य करने में अपनी शक्ति का ज्ञान हो जायेगा।"। (वाल्मीकि रामायण, उत्तर काण्ड, २५-४० सर्ग तक[1])

उसके बाद अपने पुत्र हनुमान् को लेकर वायु भी अंजनी के समीप पहुँच गये। जिस समय अंजनी ने अपने पुत्र मारुति को देखा, उस समय अत्यन्त

---

१. अधिक जानकारी के लिए विष्णुपुराण और महाभारत को देखना चाहिए।

विह्वल नेत्रों से उसे अपनी गोद में बैठाकर तथा प्रेम से आलिंगन एवं चुम्बन कर स्तनपान कराया।

इस प्रकार समस्त देवाधिदेव के अंशभूत श्री अंजनीनन्दन पवनसुत हनुमान् ऐसे पुत्ररत्न प्राप्त कर वे दोनों अत्यन्त प्रसन्न हुए। तभी से चैत्र[1] शुक्ल पूर्णिमा को हनुमान्‌जी की जयन्ती आज भी (विशेष कर दक्षिण प्रान्त में) स-समारोह मनायी जाती है।

इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु एवं इन्द्रादि देवों द्वारा वर प्राप्त, साक्षात् एकादश रुद्रों में शिवका अवतार, समस्त चराचर का एकमात्र रक्षक, भक्तराज श्री रामदूत हनुमान्‌जी की भलीभाँति उपासना एवं स्तोत्र-पाठ-पूजन-अनुष्ठान, व्रत-कथा द्वारा जो प्रत्यक्ष चमत्कार और निखिल कार्यसिद्धि सद्यः प्राप्त होती है वह अन्य किसी भी देवी-देवता-द्वारा नहीं, यह ध्रुव सत्य है। किंवदन्ती यह बात सुनी जाती है कि जगद्गुरु आद्य शंकराचार्यजी एवं सन्तशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी हनुमत्-उपासना द्वारा ही विशिष्ट सिद्धियाँ प्राप्त की थीं जिनके रचित 'हनुमत्पंचरत्न' तथा 'तुलसीकृत रामायण', 'हनुमान-चालीसा', 'हनुमान बाहुक' आदि अनेकशः ग्रन्थ ख्यातिप्राप्त हैं।

परन्तु खेद है कि सर्वथा विशुद्ध, आधुनिक शैली से संशोधन-सम्पादन एवं समस्त हनुमत्साहित्य का एकत्र संग्रह अब तक कोई प्रकाशित नहीं था। हनुमत्पंचांग, हनुमद्-उपासना आदि कुछ पुस्तकें प्रकाशित भी हैं, किन्तु सम्प्रति उपलब्ध नहीं हैं। एवं सर्व-साधारण जन के उपयोगी भी नहीं हैं, क्योंकि उनमें इस समय की राष्ट्रभाषा हिन्दी टीका का अभाव है। जब कि सम्पूर्ण भारतवर्ष की जनता राष्ट्रभाषा को समझती और बोलती है। एतदर्थ सम्प्रति हनुमत्-उपासना सम्बन्धी एक अच्छी पुस्तक की नितान्त आवश्यकता थी। इस अभाव की पूर्ति के लिए ही प्रस्तुत पुस्तक की रचना की गयी है।

इसमें विषय हैं—१. हनुमत्पूजाविधि, २. हनुमत्पूजापद्धति, ३. हनुमत्पटल, ४. एकमुख-हनुमत्कवच (१), ५. पंचमुखहनुमत्कवच (२), ६ सप्तमुख-हनुमत्कवच (३), ७. एकादशमुखहनुमत्कवच (४), ८. हनुमत्स्तोत्र, ९.

---

१. अन्यमतानुसार यह जयन्ती कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी, या कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा अथवा चैत्र शुक्ल एकादशी को भी मनायी जाती है।

हनुमत्सहस्रनाम, १०.सहस्रनामावली, ११. शत्रुञ्जयहनुमत्स्तोत्र, १२. हनुमदष्टक, १३. हनुमत्पंचरत्नस्तोत्र, १४. संकष्टमोचनस्तोत्र, १५. हनुमदुपनिषद् १६. हनुमत्कल्प, १७. हनुमद्-व्रतपूजापद्धति, १८. हनुमद्-व्रतोद्यापनविधि, १९. हनुमद्-व्रत-कथा, २०. हनुमल्लक्षप्रदक्षिणा विधान, २ . हनुमद्-दीपदानविधि, २२. हनुमत्-अनुष्ठान-विधान, २३. हनुमद्-तन्त्र, २४. हनुमद्-वडवानलस्तोत्र, २५. हनुमान-चालीसा, २६. संकटमोचन-हनुमानाष्टक, २७. बजरंगबाण, २८. हनुमान-साठिका, २९. हनुमान्-लहरी, ३०. हनुमान बाहुक, ३१. आरती।

इसका संशोधन-सम्पादन तथा अनुवाद का कार्य भी मैंने बड़ी सावधानी के साथ किया है, तथापि मानव-दोष से सम्भव त्रुटियों के लिए क्षमा-प्रार्थी हूँ, एवं कृपालु पाठकों से नम्र निवेदन है कि जहाँ-कहीं किसी प्रकार भी त्रुटि रह गयी हो, तो उसे सूचित करें जिसे मैं अग्रिम संस्करण में उसका सुधार करा सकूँ।

इसकी सुन्दर छपाई-सफाई आदि कार्य के लिए 'श्री ठाकुरप्रसाद पुस्तक भण्डार, कचौड़ी गली, वाराणसी' के संचालक-श्री **द्वारिका प्रसादजी अग्रवाल** विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र अनन्त श्रीविभूषित पूज्यपाद स्वामी श्री करपात्रीजी महाराज, काशीपीठाधीश्वर अनन्त-श्रीविभूषित पूज्यपाद जगद्गुरु शंकराचार्य (ब्रह्मीभूत) स्वामी श्रीमहेश्वरानन्दजी सरस्वती तथा शङ्करानन्दजी सरस्वती महाराज का भी मैं विशेष आभार मानता हूँ जिन लोगोने अपने अत्यन्त व्यस्त कार्य-क्रम में भी मेरे ऊपर असीम अनुकम्पा कर, प्रस्तुत पुस्तक में अपनी शुभ कामना एवं हनुमत्तत्त्वविमर्श का उल्लेख कर, ग्रन्थ को गौरवान्वित किया है।

प्रस्तुत पुस्तक के सम्पादन में हमें जिन ग्रन्थों से सहायता मिली है, उन विद्वान् ग्रन्थ सम्पादकों एवं प्रकाशकों का भी आभारी हूँ।

अन्त में, मैं जिन भक्तराज हनुमान्जी की असीम अनुकम्पा से यह परम पुनीत कार्य सम्पन्न कर सका हूँ, उन्हीं के चरण-कमलों में समर्पित कर, अपने को कृतार्थ मानता हूँ।

मकर संक्रान्ति
१४ जनवरी, १९८८
वाराणसी-१

—शिवदत्त मिश्र शास्त्री
सी० के० ५/२६ ए०,
भिखारीदास लेन, वाराणसी-१

सकल-निगमागम-पारावारीण सर्वतन्त्र-स्वतन्त्र-वर्तमान-शङ्कराचार्य

स्वरूप, भारतीय-सनातनधर्म-संस्कृति सभ्यतोद्धारक-अनन्त-

श्रीविभूषित-पूज्यपाद- (श्रीहरिहरानन्द सरस्वती)

श्रीकरपात्र स्वामि महाराज

की

शुभ सम्मति

श्री पण्डित शिवदत्तमिश्र जी शास्त्री द्वारा सम्पादित हिन्दी व्याख्या सहित 'हनुमद्-रहस्य' मैंने आद्योपान्त देखा। भगवान् श्रीराम के विषय में महर्षि वाल्मीकि ने कहा है—

"अमोघं देव ! वीर्यं ते न ते मोघाः पराक्रमाः ॥
अमोघं दर्शनं राम ! अमोघस्तव संस्तवः।
अमोघास्ते भविष्यन्ति भक्तिमन्तो नरा भुवि ॥

(युद्धकाण्ड ११७, श्लोक २९-३०)

'भगवान् की भक्ति करने वाले पुरुष भी अमोघ होते हैं। कारण, उनकी लौकिक कामनाओं की पूर्ति के लिए हनुमान्‌जी सर्वदा अग्रसर रहते है।' आकर ग्रन्थों में कहा गया है—

"लौकिके समनुप्राप्ते मां स्मरेद् रामसेवकम्।"

"लौकिक कार्य उपस्थित होने पर, उसकी पूर्ति के लिए भक्त को चाहिए की राम का सेवक मुझे (हनुमान् का) स्मरण करे। मैं सेवक की कामना-पूर्ति के लिए सदा उपस्थित रहता हूँ।"

हनुमान्‌जी की सुन्दर उपासना के लिए एक ग्रन्थ की इस समय नितान्त आवश्यकता थी। आचार्य पण्डित श्री शिवदत्त मिश्रजी ने विविध प्रामाणिक ग्रन्थों से हनुमत्–उपासना का विषय उद्धृत कर इसमें समुचित उपासना का वर्णन किया है। अब तक हिन्दी व्याख्या सहित हनुमत्साहित्य का एकत्र संग्रह अनुपलब्ध होने के कारण रामभक्त हनुमान् के उपासकों के लिए यह पुस्तक सर्वथा उपयोगी है।

ब्रह्मकुटीर, नारदघाट
वाराणसी

करपात्रस्वामी

शुभ कामना

"न कालस्य न शक्रस्य न विष्णोर्वित्तदस्य च ।
श्रूयन्ते तानि कर्माणि यानि युद्धे हनूमतः ।।"

अर्थात् युद्ध में हनुमान्‌जी जैसा पराक्रम यम, इन्द्र, विष्णु और कुवेर आदि लोकपालों में भी नहीं देखा जाता । ऐसा स्वयं भगवान् राम ने हनुमान्‌जी का यशोगान किया है ।

वे त्रैलोक्य-विजयी रावण के विषय में भी कहते हैं—'यदि स्वर्ग में भी सीता नहीं मिलीं तो मैं स्वयं रावण को ही बाँधकर ले आऊँगा ।'

"यदि वा त्रिदिवे सीतां न द्रक्ष्यामि कृतश्रमः ।
बद्ध्वा राक्षसराजानमानयिष्यामि रावणम् ।।"

एक वार अर्जुन ने अपने बाणों से समुद्र पर सेतु (पुल) बाँधकर हनुमान्‌जी से कहा--'तुम्हारे राम ऐसा क्यों नहीं कर सके ?' हनुमान् क्षुभित हो सेतु पर कूदे, किन्तु देखा कि अर्जुन के बाणों का बना हुआ सेतु (पुल) कुछ भी नहीं डगमगाया । आश्चर्य के साथ देखा तो पाया कि समुद्र का जल रक्त-रंजित है । योगसमाधि से उन्हें विदित हुआ कि उसके नीचे भक्तवत्सल भगवान् कृष्ण कमठ (कछुआ) बनकर बैठे हैं और हनुमान् के भार को सम्हाल रहे हैं, किन्तु उसे सहन न करने के कारण उनके मुख से रक्त बहने लगा । बाद में भगवान् ने अपनी लीला का संवरण किया और प्रकट होकर अर्जुन तथा हनुमान् की मैत्री करायी । धन्य हैं हनुमान्, जिनका पराक्रम परात्पर प्रभु श्रीकृष्ण भी नहीं सम्हाल सके ।

हनुमान्‌जीके स्वरूप में भगवान् शिव ने स्वयं अवतार ग्रहण किया था । योगिराज जिस 'पवन' (प्राणवायु) के निरोध से परम सिद्धियों के देवता हुए, वे ही वायुरूप से हनुमान् के अवतार हुए । 'सिद्धासन से प्राण-निरोध होने पर

[1]अष्टसिद्धियाँ स्वयं उठकर खड़ी हो जाती हैं।' इसे श्रीकृष्ण ने स्वयं उद्धव से श्रीमद्भागवत के एकादश स्कन्ध में प्रतिपादन किया है।

धर्म की रक्षा ऐसे ही महात्मा कर सकते हैं, जो स्वयं निष्काम हों। जिनमें समर्पण नहीं, त्याग और कर्त्तव्यमात्र की पूर्ति की निष्ठा नहीं, ऐसा कोई भी व्यक्ति सच्चा सेवक नहीं हो सकता, जो धर्म-सेतु की रक्षा के लिए पूर्णतः उद्यत नहीं हो। इसीलिए गीता में भगवान् ने स्वधर्म और निष्काम या आसक्ति रहित कर्मसाधना को सिद्धि-सोपान माना है। हनुमान्‌जी जैसे सेवक न होते तो अवश्य ही राम के सत्-पक्ष को विजयश्री न मिलती। जाम्बवान् ने युद्धकाण्डमें ठीक ही कहा है 'यदि हनुमान् जीवित हैं तो हम सब के न रहने पर भी भगवान् राम की विजय निश्चित है।'

सेवक के लिए उक्त निष्काम भाव या अपरिग्रह के अतिरिक्त जिन अन्य गुणों की अपेक्षा है, उनमें एक है ब्रह्मचर्य और दूसरा है सत्य। ब्रह्मचर्य का अर्थ है, शारीरिक सप्त धातुओं का सार–शुक्र नामक धातु का संरक्षण। सत्य का अर्थ है–शरीरेन्द्रिय मन के द्वारा समुचित विषय का ग्रहण। हनुमान् इन दोनों के आदर्श हैं। उनका शरीर अखण्ड ब्रह्मचर्य के लिए प्रसिद्ध है। उनके बल की सीमा नहीं। इसीलिए उन्हें शरीर से वज्रांग, वज्रसंहनन कहा जाता है।

सत्य के लिए हनुमान्‌जी का चरित अद्वितीय है। वे जिन भगवान् राम की शरीरेन्द्रिय मन के सहित वाणी से वन्दना करते हैं उन्हें हृदय से भी उतना ही चाहते हैं। वीतराग तपस्वियों को भी लोकसंग्रह कर्म करना अनिवार्य है।

ऐसे दिव्य चरित का ध्यान मानव की सफलता का सोपान है। इसके लिए अनेकानेक पथ हैं। उनमें स्तोत्र-पाठ तथा अनुष्ठान भी अन्यतम है। देवरिया मण्डलान्तर्गत 'मझौली राज्य' (सम्प्रति वाराणसी) निवासी आचार्य पं० श्री शिवदत्त मिश्रजी ने भक्तों के लिए यह कार्य सुलभ कर दिया है। हनुमद् रहस्य का अनुवाद सहित प्रकाशन करये वैसे ही सनातन-पथ के अनुयायियों की सेवा

---

१. 'अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा।
प्राप्ति-प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाऽष्टसिद्धयः ॥—अमरकोष

कर रहे हैं, जैसे इन्होंने 'बृहत्स्तोत्ररत्नाकर', 'वाञ्छाकल्पलता', 'गायत्री-रहस्य', 'बगलोपासनपद्धति' आदि अनेक ग्रन्थों का कुछ वर्ष पूर्व प्रकाशन कर किये हैं।

हमें प्रसन्नता है कि पण्डित श्री मिश्रका ध्यान इस ओर गया और इन्होंने अपने इस संकल्प को स-परिश्रम अध्यवसाय से मूर्त रूप भी दिया है। मुझे आशा है कि हनुमत्-उपासना-प्रेमी भक्तों के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी सिद्ध होगी। भगवान् इन्हें इसी प्रकार के सत्कार्य के लिए अधिकाधिक सुविधा प्रदान करें। मैं इनकी प्रतिदिन प्रवर्धमान उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड
वाराणसी

—महेश्वरानन्द सरस्वती
(ब्रह्मीभूत काशीपीठाधीश्वर,
जगद्गुरु शंकराचार्य)

*

हनुमत्तत्त्व-विमर्श

अनन्त-श्रीविभूषित ऊर्ध्वाम्नाय, श्रीकाशी-सुमेरु-पीठाधीश्वर
जगद्गुरु शङ्कराचार्य

स्वामी श्रीशङ्करानन्द सरस्वती जी महाराज

वर्तमान भारतवर्ष में सर्वत्र आञ्जनेय महाबल रामभक्त श्री हनुमान् जी का आराधन, पूजन एवं स्तवन आबाल-वृद्ध करते चले आ रहे हैं। सभी वर्ण, आश्रम एवं सम्प्रदाय के लोग पवन-सुत हनुमान् जी के जयघोष में आनन्द-विह्वल हो जाते हैं। विभिन्न प्रकार की कामनाओं की पूर्णता के लिए विशिष्ट पद्धति का अवलम्बन कर महावीर हनुमान् जी की उपासना विद्वज्जनों में प्रचलित है। इसी दृष्टिकोण से सुप्रसिद्ध विद्वान् **आचार्य पण्डित शिवदत्तमिश्र** जी ने हनुमद्-रहस्य नामक ग्रन्थ का प्रणयन कर भारतीय जनता का महान् उपकार किया है।

पुराणों एवं ऐतिहासिक ग्रन्थों में हनुमान् जी की उत्पत्ति तथा चरित्र के विषय में वर्णन विभिन्न प्रकार से उपलब्ध होता है। श्रीहनुमान्जी शंकर-सुवन, केशरी-नन्दन और पवनसुत आदि विभिन्न नामों से वर्णित होते हैं। सन्त-शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास जी हनुमान-चालीसा में 'शंकर-सुवन केशरी-नन्दन' तथा 'अंजनि-पुत्र पवन-सुत नामा' के रूप में स्पष्ट रूप से शंकर-सुवन, केशरी-नन्दन एवं पवन-सुत नामों से स्तुति करते हैं।

शिवावतार हनुमान्

वायुपुराण के आधार पर हनुमान् जी भगवान् शिव स्वरूप हैं।

'आश्विनस्याऽसिते पक्षे स्वात्यां भौमे चतुर्दशी।
मेषलग्नेऽञ्जनीगर्भात् स्वयं जातो हरः शिवः॥'

अगस्त्य-संहिता में—

'ऊर्जे कृष्णचतुर्दश्यां भौमे स्वात्यां कपीश्वरः।
मेषलग्नेऽञ्जनीगर्भात् प्रादुर्भूतः स्वयं शिवः॥'

कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी, भौमवार, स्वाती नक्षत्र, मेषलग्न में अञ्जनी के गर्भ से स्वयं भगवान् शिव के प्रकट होने के कारण श्री हनुमान् जी को रुद्रावतार माना गया है। 'रुद्रावतार संसार-दुःखभारापहारक !, लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय।' आदि से भी स्पष्ट है।

शंकर-सुवन हनुमान्

गोस्वामी तुलसीदास जी ने हनुमान चालीसा में 'शंकर-सुवन-केशरी-नन्दन' ऐसा उल्लेख किया है। यह पाठ भी उपयुक्त ही है। क्योंकि शिवपुराण में हनुमदुत्पत्ति की एक कथा मिलती है, जो इस प्रकार है—

किसी समय भगवान् शंकर ने भगवान् विष्णु से कहा कि आपके सभी स्वरूपों का मैंने दर्शन किया, परन्तु मोहिनी रूप का अब तक दर्शन नहीं किया। कृपया उस रूप का भी दर्शन कराइए। तदनुसार उन्हें भगवान् के मोहिनी रूप का दर्शन हुआ। कहते हैं, उस रूप के साक्षात्कार होते ही भगवान् शंकर का तेज स्खलित हो गया। उस तेज को सप्तर्षियों ने पत्र-पुटक (दोने) में रख लिया। पश्चात् राम-कार्य के निमित्त शिव की प्रेरणा से गौतम पुत्री अंजना में कान के द्वारा सप्तर्षियों ने स्थापित कर दिया।

इस विषय में दूसरे ढंग से भी एक कथा मिलती है। मोहिनी दर्शन से स्खलित शंकर के तेज को देख कर शिव और विष्णु ने उसके विषय में विचार-विनिमय कर, दोनों ने मुनिरूपधारण कर उस तेज को पत्र-द्रोण में लेकर अरण्य प्रदेश में जाते समय तपःपरायणा एक कन्या (अंजनी) को देखा। और मुनियों ने कहा कि, ऐ तपस्विनि कन्यके ! क्या तुमने दीक्षा लिया है। बिना दीक्षा के तपश्चर्या फलीभूत नहीं हो सकती। अतः तुम्हें दीक्षा लेना आवश्यक है। उस कन्या ने कहा—मुनिवर ! मैं दीक्षा के लिए अन्यत्र कहाँ जाऊँ ? आप ही दीक्षा दे देवें। पुनः मुनि वेशधारी बिष्णु ने अंजना को दीक्षा दी। दीक्षा देते समय शंकर तेजको मन्त्र से अभिमन्त्रित कर कान के द्वारा अंजना के गर्भ में स्थापित किया। इसलिए श्रीहनुमान् जी शंकर सुवन कहलाये।

पवन-तनय हनुमान्

पर्वतश्रेष्ठ सुमेरु पर अंजनीपति केशरी का शासन था। एक दिन मानव रूप से अंजना भ्रमणशील थीं। उनके मनोहर स्वरूप को देखकर पवन देवता मुग्ध होकर अदृश्य रूप से अंजना का आलिंगन किये। अंजना ने कहा—कौन दुरात्मा मेरा पातिव्रत्य भंग करने को उद्यत है। मैं अभी शाप के द्वारा उसे भस्म कर दूँगी। अंजना की बात सुनकर पवन देवता कहने लगे—

'अञ्जनाया वचः श्रुत्वा मारुतः प्रत्यभाषत।
न त्वां हिंसामि सुश्रोणि ! मा भूत् ते मनसो भयम्॥
मनसाऽस्मि गतो यत्त्वां परिष्वज्य यशस्विनि।
वीर्यवान् बुद्धिसम्पन्नस्तव पुत्रो भविष्यति॥
महासत्त्वो महातेजा महाबल-पराक्रमः।
लङ्घने प्लवने चैव भविष्यति मया समः॥'

—वा० रा०, का० ४, स० ६६, श्लो० १८।१९

'स तां भुजाभ्यां दीर्घाभ्यां पर्यष्वजयत मारुतः।
मन्मथाविष्ट-सर्वाङ्गो गतात्मा तामनिन्दिताम्॥'

—वा० रा०, का० ४, सं० ६६, श्लो० १५

'सा तु तत्रैव सम्भ्रान्ता सुव्रता वाक्यमब्रवीत्।
एकपत्नीव्रतमिदं को नाशयितुमिच्छति॥६६।१६
स त्वं केशरिणः पुत्रः क्षेत्रजो भीमविक्रमः।
मारुतस्यौरसः पुत्रस्तेजसा चापि तत्समः॥'

—वा० रा०, कि० का०, स० ६६, श्लो० ३०

पवन-तनय की सार्थकता वाल्मीकि रामायण के उपर्युक्त उद्धरणों से भी सिद्ध होती है। वस्तुतः शवतराज श्री हनुमान् जी के विषय में अधिक तर्क-बुद्धि न रख कर, श्रद्धाभक्ति पूर्वक उनके चरणारविन्द की आराधना ही सर्व-सिद्धि प्रदायक है।

पण्डित **शिवदत्त मिश्र जी** द्वारा रचित प्रस्तुत ग्रन्थ, उनके उन बहुचर्चित एवं बहुप्रशंसित ग्रन्थ-रत्नों में श्लाघ्य परम्परा में है, जिनके अन्तर्गत दुर्गार्चन-पद्धति, शिव-रहस्य, गायत्री-रहस्य, गायत्री-तन्त्र, बगलामुखी-रहस्य, श्रीराम-रहस्य, ग्रहशान्ति-पद्धति, बृहत्स्तोत्र-रत्नाकर एवं वाञ्छाकल्पलता आदि शताधिक ग्रन्थ विद्वत्समुदाय में प्रतिष्ठा एवं प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं।

यह हनुमद्-रहस्य अपने में सर्वांग परिपूर्ण है। इसमें हनुमत्पूजा-पद्धति, हनुमत्कवच, स्तोत्र, शत्रुञ्जय-हनुमत्स्तोत्र एवं हनुमत्-अनुष्ठान-विधान आदि विषय बहुत ही प्रामाणिक और महत्त्वपूर्ण है। हिन्दी अनुवाद के साथ हनुमत्साहित्य का इतना बड़ा संग्रह एकत्र अभी तक कहीं उपलब्ध नहीं था। पुस्तक की सर्वाधिक उपयोगिता तो इसी से सिद्ध है कि इतने अल्प समय में ही इसका चतुर्थ संस्करण हो रहा है। इसके लिए मैं हृदय से शुभ कामना करता हूँ कि **श्री मिश्रजी** का यह सत्प्रयास निर्बाध गति से चलता रहे। और मुझे पूर्ण विश्वास है कि पूर्व संस्करणों की भाँति प्रस्तुत संस्करण भी अधिकाधिक प्रचार-प्रसार के साथ विद्वत्समाज में विशेष समादृत होगा।

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड
वाराणसी
माघकृष्ण ११,२०३८

शङ्करानन्द सरस्वती

श्रीकाशी-सुमेरु-पीठाधीश्वर
जगद्गुरु शङ्कराचार्य

*

व्याकरण-न्याय - वेदान्त - धर्मशास्त्र - साहित्य - आदि विषयों के प्रकाण्ड
और प्रत्युत्पन्न मति, कुलपरम्परा के सरयूपारीण विद्वान्, वाराणसेय-
संस्कृत - विश्वविद्यालय के भूतपूर्व वेदान्त - विभागाध्यक्ष
उत्तर प्रदेश शासन द्वारा सम्मानित
स्व० पण्डित श्री रघुनाथ शर्मा जी
की

शुभ-सम्मति

'श्रीहनुमद्-रहस्य' नामक पुस्तक आद्योपान्त मैंने देखी। इसमें हनुमान्जी के अनेक स्तुति-स्तोत्र दिये गये हैं। इसके साथ-साथ पूजा-पद्धति एवं उपासना-पद्धति भी है। यह पुस्तक अपने में सर्वाङ्ग पूर्ण है। हनुमान्जी के सम्बन्ध में इतना बड़ा संग्रह अभी आज तक मुद्रित नहीं हुआ है। इस स्तोत्र-संग्रह में शत्रुंजय-स्तोत्र अत्यन्त उग्र तथा सद्यः फलप्रद है। यह मेरा अनुभव है। राम को प्राप्त करनेके लिए हनुमान्जी प्रहरी हैं। और हनुमान्जी के प्रसाद के लिए हनुमद्-रहस्य-स्तुति सुगम मार्ग है। वाल्मीकि रामायण देखने से प्रतीत होता है कि हनुमान्जी को अपना प्रभाव विस्मृत रहता है, अतः स्तोत्रों के द्वारा उनके पराक्रमों के संस्मरण कराने पर वह अत्यधिक प्रसन्न होते हैं। रामजी हनुमान्जी के ऋणी अपने को मानते हैं।

"मय्येव जीर्णतां यातु यत्त्वयोपकृतं हरे!।
नरः प्रत्युपकारार्थी विपत्तिमभिकाङ्क्षति ॥"

यह रामजी का वचन है। हनुमान्जी रुद्रावतार हैं, यह 'शत्रुंजयस्तोत्र' पढ़ने से प्रतीत होता है। हनुमान्जी रामजी के निष्काम भक्त हैं। **आचार्य पण्डित शिवदत्त मिश्रजी** ने प्रस्तुत पुस्तक का सग्रह और मुद्रण करके महान् लोकोपकार किया है। इससे हनुमत्-उपासना प्रेमी भक्तों का पूर्ण कल्याण होगा। शास्त्रीजी की अहर्निश समुन्नति की कामना करता हूँ।

मातृसदन, छाता
(बलिया) —पण्डित रघुनाथ पाण्डेय

हनुमत्-पूजा-विधिः

साधक को चाहिए कि वह पूर्वाभिमुख कुशासन या ऊर्णासन पर बैठ कर,

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

इस मन्त्र से अपने शरीरपर जल छिड़क कर, हनुमान् जी की मूर्ति के सामने हाथ में जल, अक्षत, पुष्प लेकर संकल्प करे।

ॐ तत्सदद्य मासानां मासोत्तमे मासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नोऽहं सकलकामनासिद्ध्यर्थं (अमुक-मनोरथपरिपूर्त्यर्थं वा) अनन्यश्रीसीतारामसेवक-असुरदल-संहारक-लक्ष्मणप्राणदाता-ऽञ्जनीनन्दन-श्रीहनुमत्पूजनं करिष्ये।

इस प्रकार संकल्प-वाक्य पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

तत्पश्चात् दाहिने हाथ में पुष्प लेकर हनुमान्‌जी का ध्यान करे।

ध्यानम्—वन्दे विद्युद्-वलय-लसितं ब्रह्मसूत्रं दधानं
कर्णद्वन्द्वे कनकवलये कुण्डले धारयन्तम्।
सत्कौपीनं कटिपरिहृत कामरूपं कपीन्द्रं
नित्यं ध्यायेदनिलतनयं वज्रदेहं वरिष्ठम्।

प्रतप्त-जाम्बूनद-दिव्यभासं
देदीप्यमाना-ऽग्नि-विभासुराक्षम्।
प्रफुल्ल—पङ्करुह—शोभनास्यं
ध्याये हृदिस्थं पवमानसूनुम् ॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

कर्णिकार-सुवर्णाभं वर्णनीयं गुणोत्तमम् ।
अर्णवोल्लङ्घनोद्युक्तं तूर्णं ध्यायामि मारुतिम् ॥

इति हनुमते ध्यानं समर्पयामि ।

इससे हनुमानजी की मूर्ति पर पुष्प चढ़ावे ।

आवाहनम्—श्रीरामचरणाम्भोज - युगल - स्थिरमानसम् ।
आवाहयामि वरदं हनुमन्तमभीष्टदम् ॥

इति हनुमते आवाहनं समर्पयामि ।

इससे पुनः मूर्ति पर पुष्प चढ़ावे ।

आसनम्—नवरत्नमयं दिव्यं चतुरस्रमनुत्तमम् ।
सौवर्णमासनं तुभ्यं कल्पये कपिनायक ! ॥

इति हनुमते आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि ।

इससे मूर्ति पर अक्षत चढ़ावे ।

पाद्यम्—सुवर्णकलशानीतं सुष्ठु वासितमादरात् ।
पादयोः पाद्यमनघं प्रतिगृह्ण प्रसीद मे ॥

इति हनुमते पाद्य समर्पयामि ।

इससे हनुमानजी की मूर्ति पर आचमनी से जल चढ़ावे ।

अर्घ्यम्—कुसुमा - ऽक्षत - सम्मिश्रं गृह्यतां कपिपुङ्गव ! ।
दास्यामि तेऽञ्जनीपुत्र ! स्वमर्घ्यं रत्नसंयुतम् ॥

इति हनुमते अर्घ्यं समर्पयामि ।

इससे आचमनी में जल, अक्षत, पुष्प तथा गन्ध रखकर मूर्ति पर चढ़ावे

आचमनम्—महाराक्षसदर्पघ्न ! सुराधिप-सुपूजित ।
विमलं शमलघ्न ! त्वं गृहाणाऽऽचमनीयकम् ॥

इति हनुमते आचमनं समर्पयामि ।

इस मन्त्र से हनुमानजी को आचमन (जल) समर्पित करे ।

पञ्चामृतस्नानम्

मध्वाज्य-क्षीर-दधिभिः सगुडैर्मन्त्रसंयुतैः ।
पञ्चामृतैः पृथक् स्नानैः सिञ्चामि त्वां कपीश्वर ! ॥

इति हनुमते पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि ।

इस मन्त्र-द्वारा हनुमान्‌जी को पञ्चामृत से स्नान करावे ।

शुद्धोदकस्नानम्

सुवर्णकलशानीतैर्गङ्गादि — सरिदुद्भवैः ।
शुद्धोदकैः कपीश ! त्वामभिषिञ्चामि मारुते ॥

इति हनुमते शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि ।

यह श्लोक पढ़कर हनुमान्‌जी को शुद्ध जल से स्नान कराये । तत्पश्चात् 'सिन्धोरिव०' मन्त्र पढ़कर घृत मिश्रित सिन्दूर मूर्ति पर लगावे ।

कटिसूत्रम्—ग्रथिता नवभी रत्नैर्मेखलां त्रिगुणीकृताम् ।
मौञ्जं मौञ्जीमयं पीतां गृहाण पवनात्मज ! ॥

इति हनुमते कटिसूत्रं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को कटिसूत्र (करधनी) समर्पित करे ।

कौपीनम्—कटिसूत्रं गृहाणेदं कौपीनं ब्रह्मचारिणः ।
कौशेयं कपिशार्दूल ! हरिद्रक्तं सुमङ्गलम् ॥

इति हनुमते कौपीनं परिधापयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को कौपीन (लँगोटी) धारण करावे ।

उत्तरीयम्

पीताम्बर - सुवर्णाभमुत्तरीयार्थमेव च ।
दास्यामि जानकीप्राण-त्राणकारण ! गृह्यताम् ॥

इति हनुमते उत्तरीयवस्त्रं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को दुपट्टा ओढ़ावे ।

यज्ञोपवीतम्

श्रौत-स्मार्त्तादिकर्तॄणां साङ्गोपाङ्गफलप्रदम् ।
यज्ञोपवीतमनघं धारयाऽनिलनन्दन ! ॥

इति हनुमते यज्ञोपवीतं परिधापयामि ।

इस मन्त्र से हनुमान्जी को यज्ञोपवीत धारण करावे ।

गन्धम्—दिव्यकर्पूरसंयुक्तं मृगनाभिसमन्वितम् ।
स-कुङ्कुमं पीतगन्धं ललाटे धारय प्रभो ! ॥

इति हनुमते गन्धमनुलेपयामि ।

इस मन्त्र से हनुमान्जी को सुगन्धित गन्ध (चन्दन) लगावे ।

अक्षतान्—हरिद्राक्तानक्षतांस्त्वं कुङ्कुमद्रव्यमिश्रितान् ।
धारय श्रीगन्धमध्ये शुभशोभनवृद्धये ॥

इति हनुमते अलङ्करणार्थेऽक्षतान् समर्पयामि ।

इससे हनुमान्जी को अक्षत चढ़ावे ।

पुष्पाणि—नीलोत्पलैः कोकनदैः कह्लारैः कमलैरपि ।
कुमुदैः पुण्डरीकैस्त्वां पूजयामि कपीश्वर ! ॥
मल्लिका-जातिपुष्पैश्च पाटलैः कुटजैरपि ।
केतकी - वकुलैश्चेश्तैः पुन्नागैर्नागकेसरैः ॥
चम्पकैः शतपत्रैश्च करवीरैर्मनोहरैः ।
पूजये त्वां कपिश्रेष्ठ ! स-बिल्वैस्तुलसीदलैः ॥

इससे हनुमान्जी पर सुगन्धित पुष्पमाला चढ़ावे ।

धूपम्—दिव्यं सुगुग्गुलं साज्यं स-दशाङ्गं स-वह्निकम् ।
गृहाण मारुते ! धूपं सुप्रियं घ्राणतर्पणम् ॥

इति हनुमते धूपं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्जी को अगरबत्ती दिखावे ।

दीपम्

घृतपूरितमुज्ज्वालं सितसूर्यसमप्रभम् ।
अतुलं तव दास्यामि व्रतपूर्त्यै सुदीपकम् ॥

इति हनुमते दीपं प्रदर्शयामि ।

इससे हनुमान्जी को दीप दिखावे ।

नैवेद्यम्

स-शाका-ऽपूप-सूपाढ्य-पायसानि च यत्नतः ।
स-क्षीर-दधि-साज्यं च साऽपूपं घृतपाचितम् ॥

इति हनुमते नैवेद्यं निवेदयामि ।

इससे हनुमान्जी को नैवेद्य समर्पण करे ।

पानीयम्

गोदावरीजलं शुद्धं स्वर्णपात्राऽऽहृतं प्रियम् ।
पानीयं पावनोद्भूतं स्वीकुरु त्वं दयानिधे ! ॥

इति हनुमते पानीयं समर्पयामि ।

यह पढ़कर मूर्ति के सामने जल गिरा दे ।

उत्तरापोशनम्

आपोशनं नमस्तेऽस्तु पापराशितृणानलम् ।
कृष्णावेणीजलेनैव कुरुष्व पवनात्मज ! ॥

इति हनुमते उत्तरापोशनं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्जी को उत्तरापोशन (जल) समर्पण करे ।

हस्तप्रक्षालनम्

दिवाकरसुतानीतजलेन स्पर्शगन्धिना ।
हस्तप्रक्षालनार्थाय स्वीकुरुष्व दयानिधे ! ॥

इति हनुमते हस्तप्रक्षालनं समर्पयामि ।

यह वाक्य पढ़कर हनुमान्जी के सामने जल गिरा दे ।

शुद्धाचमनीयम्

रघुवीरपदन्यास - स्थिरमानसमारुते ।
कावेरीजलपूर्णेन स्वीकुर्वाचमनीयकम् ॥

इति हनुमते शुद्धाचमनीयं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को शुद्ध आचमनीय जल प्रदान करे ।

दक्षिणाम्

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥

इति हनुमते द्रव्यदक्षिणां समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को दक्षिणा चढ़ावे ।

सुवर्णपुष्पम्

वायुपुत्र ! नमस्तुभ्यं पुष्पं सौवर्णकं प्रियम् ।
पूजयिष्यामि ते मूर्ध्नि नवरत्न - समुज्ज्वलम् ॥

इति हनुमते सुवर्णपुष्पं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को सुवर्णपुष्प (कटसरैया) चढ़ावे ।

ताम्बूलम्

ताम्बूलमनघ स्वामिन् ! प्रयत्नेन प्रकल्पितम् ।
अवलोकय नित्यं ते पुरतो रचित मया ॥

इति हनुमते पूगीफलसहितं ताम्बूलं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को सोपारी सहित पान चढ़ावे ।

नीराजनम्

शतकोटि - महारत्न - दिव्य - सद् - रत्नपात्रके ।
नीराजनमिदं दृष्टेरतिथीकुरु मारुते ॥

इति हनुमते नीराजनं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी की आरती करे ।

पुष्पाञ्जलिम्

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानर अमृत आजातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ।।

इति हनुमते पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी को पुष्पांजलि अर्पण करे ।

प्रदक्षिणाम

पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष ! त्वमेव शरणं मम ।।
यानि कानि च पापानि जन्मान्तर-कृतानि च ।
तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ।।

इति हनुमते प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

इससे हनुमान्‌जी की प्रदक्षिणा करे ।

नमस्कारम्

अतुलितबलधामं हेमशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि ।।
उल्लङ्घ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः ।
आदाय तेनैव ददाह लङ्कां
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ।।
गोष्पदीकृतवारीशं मशकीकृतराक्षसम् ।
रामायणमहामालारत्नं वन्देऽनिलात्मजम् ।।

अञ्जनानन्दनं वीरं जानकीशोकनाशनम् ।
कपीशमक्षहन्तारं वन्दे लङ्काभयङ्करम् ॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥
आञ्जनेयमतिपाटलाननं काञ्चनाद्रिकमनीयविग्रहम् ।
पारिजाततरुमूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम् ॥
नमस्तेऽस्तु महावीर ! नमस्ते वायुनन्दन ! ।
विलोक्य कृपया नित्यं त्राहि मां भक्तवत्सल ! ॥
यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकाञ्जलिम् ।
बाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुतिं नमत राक्षसान्तकम् ॥

इति हनुमते नमस्कारं समर्पयामि ।

उपर्युक्त श्लोक पढ़कर हनुमानजी को प्रणाम करे ।

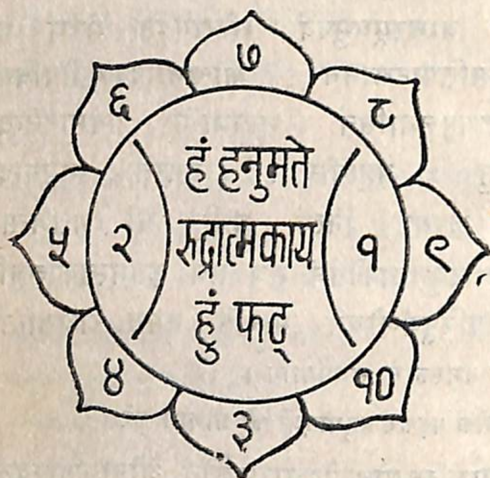
अनेन यथाशक्ति-षोडशोपचारपूजनेन श्रीमारुतिनन्दनो हनुमान् प्रीयतां न मम ।

यह वाक्य पढ़कर, हनुमानजी के बायें हाथ में जल समर्पित कर पश्चात् हनुमत्स्तोत्र, कवच आदि का पाठ करे ।

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-
हनुमत्पूजाविधिः समाप्तः ।

❀

द्वादशाक्षरी-हनुमन्मन्त्र-यन्त्रम्



यन्त्रविधान-जगज्जननी पार्वती के प्रश्न करने पर, गारुडीतन्त्रानुसार साम्बसदाशिव ने द्वादशाक्षर मन्त्र (हं हनुमते रुद्रात्मकाय हुँ फट्) का विधान बताया। नदीतट, निर्जन स्थान, पर्वत अथवा वन में जपभूमि को शुद्ध कर, स्नानादि नित्यक्रिया से निवृत्त हो हनुमत्प्रीत्यर्थं इस द्वादशाक्षर हनुमान् जी के मन्त्र का एक लाख जप रूप पुरश्चरण का संकल्प कर, इसी मन्त्र से अंगुष्ठ-हृदयादि न्यास कर एक लाख जप करने से साधक के समस्त कार्य निश्चय ही सिद्ध होते हैं। साधक को चाहिए कि इस द्वादशाक्षर मन्त्र का तब तक जप करे जब तक रात्रि के चतुर्थ पहर में पवनसुत हनुमान् जी का साक्षात् दर्शन न हो जाय। यह प्रयोग अनुभूत है।

(विशेष जानकारी के लिए मन्त्रमहार्णव, पू० ख०, हनु० त०, नवम तरंग देखें।)

*

विषय-सूची

*

* श्रीहनुमते नमः *

ध्यानम्

अतुलित-बलधामं स्वर्ण-शैलाभदेहं
दनुज-वन-कृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकल-गुण-निधानं वानराणामधीशं
रघुपति-प्रिय-भक्तं वातजातं नमामि ॥१॥

मनोजवं मारुत-तुल्य-वेगं
जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानर-यूथ-मुख्यं
श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥२॥

उल्लङ्घ्य सिन्धोः सलिलं सलीलं
यः शोकवह्निं जनकात्मजायाः ।
आदाय तेनैव ददाह लङ्कां
नमामि तं प्राञ्जलिराञ्जनेयम् ॥३॥

*

श्रीहनुमते नमः

आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्र-शास्त्रि-संस्कृतं

हनुमद्-रहस्यम्

'शिवदत्ती'-हिन्दीव्याख्या-विभूषितम्

०

हनुमत्पूजापद्धतिः

पितरं सन्तशरणं जयन्तीं मातरं तथा।
मया प्रणम्य हनुमद्-रहस्यं प्रविकाश्यते॥

गुरुं श्रीगायत्रीं गजवदनमानन्दसदनं
कपीशं रुद्रांशं समुदित-दिनेशाभममलम्।
प्रणम्य स्वान्तेऽहं सकलजनप्रीत्यै हनुमतः
प्रकुर्वे मन्त्राढ्यां पटलमनुगां पद्धतिमिमाम्॥ १॥

तत्राऽऽदौ साधको ब्राह्मे मुहूर्ते शयनादुत्थाय, मानसिक-स्नानं कुर्यात्। ततः श्रीगुरोर्दीक्षाकालिकस्वरूपं स्वशिरसि

हनुमन्तं नमस्कृत्य शिवदत्तेन धीमता।
हनुमद्-रहस्य-व्याख्या 'शिवदत्ती' वितन्यते॥

ग्रन्थकार ग्रन्थ की निर्विघ्नतापूर्वक समाप्ति हेतु ग्रन्थारम्भ में मंगलाचरण करते हैं—गुरु, श्रीगायत्री, आनन्दभवन श्रीगणपति तथा उदय होते हुए सूर्य की आभा के समान विशुद्ध रक्तवर्ण वाले श्रीहनुमान् जी को हृदय में प्रणाम कर, मैं सब लोगों के कल्याणार्थ पटल के अनुसार मन्त्रपूर्वक हनुमत्पूजा-पद्धति का निर्माण कर रहा हूँ॥ १॥

साधक सर्वप्रथम ब्राह्म मुहूर्त में शयन से उठकर, मानसिक स्नान करे। पुनः दीक्षाकालिक अपने गुरु के स्वरूप का ध्यान करे, उनके

ध्यात्वा, तत्पादोदकधारयाऽन्तर्गतमलं प्रक्षाल्य, शुद्धात्मा श्रीगुरुं ध्यायेत्। यथा-स्वशिरसि शुक्लसहस्रदल-कमल-कर्णिकान्तर्गता-ऽक-थादिवर्ण-त्रिकोणगत - हंसोभय - पार्श्वबिन्दौ द्विनेत्रं [1]वरा-ऽ[2]भय-कराम्बुजं शान्तं दिव्यवसन-परीधानं दिव्य-गन्धस्रगनुलेपन-विभूषितं वामाङ्क-विराजमान-निजशक्तिं कृपा-सान्द्रस्मित-वदनारविन्दं श्रीगुरुं ध्यात्वा, [3]पञ्चोपचारैः सम्पूज्य,

---

चरणामृत से अपने अन्तःकरण के मल को दूर कर विशद्ध हो, अपने गुरु का ध्यान करे। उसका प्रकार इस तरह है—अपने सिर में स्वच्छ सहस्र दल कमल-कर्णिका के भीतर 'अ, क, थ' इन तीन वर्णों से बने हुए, त्रिकोण में रहने वाले, 'हं, स' के दोनों पार्श्व बिन्दु में दो नेत्र वाले, वर तथा अभय मुद्रा को कमल में धारण किये हुए, शान्त, दिव्य वस्त्रों से सुशोभित, उत्तम गन्धों से संयुक्त, वामांग में विराजमान, अपने शक्ति को धारण किये हुए मन्द-मन्द स्मित वाले, अपने गुरु का ध्यान करे, फिर आवाहनपूर्वक पंचोपचार से पूजन करे, पश्चात् गुरु के उपदेशानुसार

---

१. अधःस्थितो दक्षहस्तः प्रसृतो वरमुद्रिका।

अपि च—

दक्षिणहस्तमुत्तानं विधायाऽधः प्रसारयेत्॥

२. ऊर्ध्वीकृतो वामहस्तः प्रसृतोऽभयमुद्रिका।

३. गन्धं पुष्पं च धूपं च दीपं नैवेद्यमेव च।

प्रदद्यात् परमेशानि! पूजा पञ्चोपचारिका॥

अपि च—

ध्यानमावाहनं चैव भक्त्या यच्च निवेदनम्।

नीराजनं प्रणामश्च पञ्च पूजोपचारकाः॥

—परशुराम-कल्पसूत्रम्

गुरूपदिष्टमार्गेण पादुका गुरुत्र यमन्त्राश्च दशधा त्रिधा च जापित्वा, नमेत् -

नमोऽस्तु गुरुवे तस्मै स्वेष्टदेव-स्वरूपिणे ।
यस्य वाक् सकलं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥ १ ॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २ ॥
अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराऽचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ३ ॥
अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञाना-ऽञ्जन-शलाकया ।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ४ ॥

पादुका तथा गुरु के तीन मन्त्रों को दस बार, फिर तीन बार जप कर निम्नलिखित श्लोकों से उनकी प्रार्थना करे—

अपने इष्टदेवतास्वरूप हम उन गुरु को नमस्कार करते हैं। जिनके दिये गये उपदेशात्मक वाक्य संसार के समस्त विषों का विनाश करते हैं ॥१॥ गुरु ही ब्रह्मा हैं, गुरु ही विष्णु हैं, गुरु ही महेश्वर देव हैं तथा गुरु ही साक्षात् परब्रह्मस्वरूप हैं, उस गुरु को मैं नमस्कार करता हूँ ॥२॥ अखण्ड मण्डलाकार यह समस्त चराचर जगत्, जिनसे व्याप्त है तथा जिन्होंने परब्रह्म परमात्मा का दर्शन कराया है, उस गुरु को मैं नमस्कार करता हूँ ॥३॥ जिन्होंने ज्ञानांजन शलाका (अर्थात् ज्ञानरूपी आँख में आँजन लगाने वाली सलाई) से अज्ञानरूपी अन्धकार से अन्धी आँखों में दिव्य दृष्टि प्रदान की, उस श्रीगुरुको मैं नमस्कार करता हूँ ॥४॥

एभिः श्लोकैः प्रणम्य, पुनः स्तुवीत–

नमस्ते नाथ! भगवन्! शिवाय गुरुरूपिणे।
विद्यावतार–संसिद्ध्यै स्वीकृताऽनेकविग्रह! ॥ १ ॥
नवाय नवरूपाय परमार्थैकरूपिणे।
सर्वाऽज्ञान-तमोभेद-भानवे चिद्घनाय ते ॥ २ ॥
स्वतन्त्राय दयाक्लृप्त-विग्रहाय शिवात्मने।
परतन्त्राय भक्तानां भव्यानां भव्यरूपिणे ॥ ३ ॥
विवेकिनां विवेकाय विमर्शाय विमर्शिनाम्।
प्रकाशिनां प्रकाशाय ज्ञानिनां ज्ञानरूपिणे ॥ ४ ॥

इन श्लोकों से[1] प्रणाम कर, फिर स्तुति करे—

हे नाथ, हे भगवन्, आपको नमस्कार है, आप गुरु के रूप में साक्षात् शिव हो। हे प्रभो, आप विद्या के अवतार हैं तथा सिद्धि के लिए आप अनेक रूप धारण करते हैं ॥ १ ॥ आप सदैव नूतन तथा नूतन रूपवाले हैं, मुक्ति के तो आप मानों स्वरूप ही हैं। सम्पूर्ण अज्ञान रूपी अन्धकार को नष्ट करने के लिये आप सूर्यस्वरूप हैं और आप साक्षात् चिद्घन हैं ॥ २ ॥ आप स्वतन्त्र हैं, आपने संसारी प्राणियों पर दया कर शरीर धारण किया है, आप साक्षात् शिव हैं, आप भक्तों के परतन्त्र हैं और भव्यों में भव्यस्वरूप हैं ॥ ३ ॥ विवेकियों में विवेक हैं और विचारशीलों में आप विचार हैं। प्रकाश करने वालों में आप प्रकाश हैं तथा ज्ञानियों में आप ज्ञान हैं ॥ ४ ॥

---

1. उरसा शिरसा दृष्ट्या मनसा वचसा तथा।
पद्भ्यां कराभ्यां जानुभ्यां प्रणामोऽष्टाङ्ग ईरितः ॥
बाहुभ्यां च स-जानुभ्यां शिरसा मनसा धिया।
पञ्चाङ्गकः प्रणामः स्यात् सर्वत्र प्रवराविमौ ॥ —इति तन्त्रान्तरे

पुरस्तात् पार्श्वयोः पृष्ठे नमस्कुर्यामुपर्यधः ।
सदा मच्चित्तभावेन विधेहि भवदासनम् ॥ ५ ॥
त्वत्प्रसादादहं देव ! कृतकृत्योऽस्मि सर्वतः ।
मायामृत्युमहापाशाद् विमुक्तोऽस्मि शिवोऽस्मि च ॥ ६ ॥
प्रातःप्रभृति-सायान्तं सायादि-प्रातरन्ततः ।
यत्करोमि जगन्नाथ ! तदस्तु तव पूजनम् ॥ ७ ॥

इति क्षमाप्य, कुण्डलिनीं ध्यायेत्[1]—

मूलादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तं सर्वतेजोमयीं पराम् ।
कोटिसूर्य-प्रतीकाशां चन्द्रकोटि—सुशीतलाम् ।

मैं अपने आगे-पीछे, पार्श्व, पृष्ठ, ऊपर तथा नीचे विराजमान आप को नमस्कार करता हूँ। हे प्रभो, मेरे चित्तकी भावना के अनुसार आप आसन ग्रहण करें ॥ ५ ॥ हे प्रभो, आपकी प्रसन्नता से मैं सफल मनोरथ हूँ। तथा आपके प्रसाद से माया-मृत्यु के महापाश से विमुक्त हूँ तथा साक्षात् शिवस्वरूप हूँ ॥ ६ ॥ प्रातःकाल से सायंकाल तक तथा सायंकाल से प्रातःकाल तक हे जगन्नाथ ! मैं जो भी कार्य करता हूँ, उससे आपकी पूजा हो ॥ ७ ॥

इस प्रकार गुरु से क्षमा-प्रार्थना कर, कुण्डलिनी का ध्यान करे, कुण्डलिनी का स्वरूप इस प्रकार है—

नाभिमूल से आरम्भ कर ब्रह्मरन्ध्रपर्यन्त, करोड़ों सूर्य के समान दिव्य तेजःस्वरूपा तथा करोड़ों चन्द्रमा के समान सुशीतल, उदय होते

---

१. ध्यानेन मन्त्रसिद्धिः स्याद् ध्यानं सर्वार्थसाधनम् ।
ध्यानं विना भवेन्मूको सिद्धमन्त्रोऽपि पुत्रक ॥
—सा० तन्त्र०, ५ पटल, श्लो १८

उद्यद्दिनकरद्योतां यावच्छ्वासं दृढासनः ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा, तत्प्रभा-पटल-व्याप्तं स्वदेहं विचिन्त्य, वक्ष्यमाण-मूलमन्त्रर्ष्यादिकं कर-षडङ्गौ च कृत्वा, ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, मुद्राः प्रदर्श्य, मूलं दशधा जपेत् ।

ततः स्वगुरु-देवता-ऽऽत्मनामैक्यं विभाव्य, देवं स्तुत्वा,

प्रातःप्रभृति सायान्ते सायादि-प्रातरन्ततः ।
यत्करोमि हरीशान ! तदस्तु तव पूजनम् ॥ १ ॥

इति निजकृत्यं समर्पयेत् ।

अथ सहजसिद्धं गुरूपदेशेन ज्ञातमजपाजपं कुर्यात् । यथा—

हुए सूर्य के समान तेजस्विनी, साक्षात् परस्वरूपा कुण्डलिनी का ध्यान दृढ़ आसन से प्रत्येक श्वाँस में करे ॥ १ ॥

इस प्रकार ध्यान कर, 'कुण्डलिनी के तेज से मेरा शरीर व्याप्त है' ऐसी भावना कर आगे कहे जाने वाले मन्त्र से ऋष्यादि करन्यास तथा षडंगन्यास कर, ध्यान करे, पुनः मानसोपचार से कुण्डलिनी का पूजन कर, मुद्रा प्रदर्शित करे और मूल मन्त्र का दश बार जप करे ।

पुनः अपने गुरु तथा इष्टदेवता में एकता की भावना कर, इष्ट-देवता की स्तुति करे । स्तुति का स्वरूप इस प्रकार है—

हे प्रभो ! प्रातःकाल से सायंकाल पर्यन्त तथा सायंकाल से प्रातः-काल पर्यन्त मैं जो भी कृत्य करता हूँ उससे आपकी पूजा हो ॥ १ ॥

ऐसा कहकर, अपना कृत्य भगवान् को समर्पण करे । पुनः गुरु के द्वारा उपदिष्ट सहजसिद्ध अजपा जप करे । उसका प्रकार अथवा विनियोग यह है—

ॐ अस्य श्री अजपा-मन्त्रस्य हंस-ऋषिः, अव्यक्ता-गायत्री छन्दः, हंसो देवता, हं बीजम्, सः शक्तिः, सोऽहं कीलकं मोक्षार्थे जपे विनियोगः।

ऋष्यादिकं कृत्वा, हसां सूर्यात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। हसीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा। हसूं निरञ्जनात्मने मध्यमाभ्यां वषट् हसस्त्रौं निराभासात्मने अनामिकाभ्यां हुम्। हसौं अव्यक्तात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। हसः अनन्तात्मने करतल-करपृष्ठाभ्यां फट। एवं हृदयादिषु विन्यस्य, 'ॐ भूर्भुवः स्वरोम्' इति दिग्बन्धनं कृत्वा, ध्यायेत्–

विनियोग—इस अजपा जप रूप मन्त्र का 'हंस' ऋषि हैं, 'अव्यक्त गायत्री' छन्द है, 'हंस' देवता, 'हं' बीज, 'सः' शक्ति तथा 'सोऽहं' कीलक है, मैं मोक्ष की इच्छा से इसका जप करता हूँ।

पश्चात् ऋष्यादिक न्यास करे। 'हसां सूर्यात्मने अंगुष्ठाभ्यां नमः' इस मन्त्र से दोनों अँगूठे का, 'हसीं सोमात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा' इस मन्त्र से दोनों तर्जनी का, 'हसूं निरञ्जनात्मने मध्यमाभ्यां वषट्' इस मन्त्र से दोनों मध्यमा का, 'हसस्त्रौं निराभासात्मने अनामिकाभ्यां हुम्' इस मन्त्र से दोनों अनामिका का, 'हसौं अव्यक्तात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्' इस मन्त्र से दोनों कनिष्ठिका का तथा 'हसः अनन्तात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' इस मन्त्र से दोनों करतल तथा करपृष्ठ का स्पर्श करे। इसी प्रकार पूर्वोक्त मन्त्रों से क्रमशः हृदय, शिखा, सिर, दोनों बाहु, दोनों नेत्र तथा 'अस्त्राय फट्' से चारों ओर से थपोड़ी बजाता हुआ 'ॐ भूर्भुवः स्वरोम्' से अपने चारों ओर की रक्षा के लिए पीली सरसों का विकिरण करता हुआ नीचे लिखे मन्त्रों से ध्यान करे।

अग्नीषोम-गुरुद्वयं प्रणवकं बिन्दुत्रिनेत्रोज्ज्वल
भास्वद्रूपमुखं शिवाङ्घ्रियुगलं पार्श्वस्थसूर्यानलम् ।
उद्यद्भास्कर-कोटि-कोटि-सदृशं हंसं जगद्व्यापिनं
शब्दब्रह्ममयं हृदम्बुजघटे नीडे सदा संस्मरेत् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा [८]' 'हसहंसाय विद्महे सोऽहं हंसाय धीमहि । तन्नो हंसः प्रचोदयात् ।' इति आत्माऽष्टाक्षरमन्त्रं गायत्रीं च यथाशक्ति जपित्वा, पूर्वदिनकृतमजपाजप निवेदयेत् ।

'पूर्वेद्युरिव सूर्योदयादारभ्याऽद्य सूर्यास्तपर्यन्तं

करोड़ों सूर्य के समान तेजस्वी, त्रिलोक में व्याप्त शब्दब्रह्ममय, हंस-प्रणवबिन्दुरूप शिव के त्रिनेत्र के समान देदीप्यमान तथा अत्यन्त समीप स्थित सूर्य एवं अग्नि के सदृश जाज्वल्यमान, अग्निसोमरूप शिव के दोनों चरण-कमल का हृदयरूपी घट में सर्वदा स्मरण करे ॥ १ ॥

इस प्रकार शब्दब्रह्म का हृदय में ध्यान करता हुआ मानसोपचार से उस शब्दब्रह्म की पूजा करे—ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा' [८] 'हंसहंसाय विद्महे सोऽहं हंसाय धीमहि । तन्नो हंसः प्रचोदयात् ।' इस प्रकार 'ॐ ह्रीं हंसः सोऽहं स्वाहा' इस आत्मा के आठ अक्षर का तथा 'हंसहंसाय'—इत्यादि गायत्री का यथाशक्ति जप कर पूर्वदिन के अजपा जप का निवेदन करे ।

'पुनः पूर्व दिन के समान प्रातःकाल सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक

श्वासोच्छ्वासरूपेण षट्शताधिकमेकविंशत्सहस्रकं जपं तत्तद्-देवताभ्यो निवेदयिष्ये ।' इति सङ्कल्प्य, समर्पयेत्।

व-श-ष-स-दलयुक्ते सम्यगाधारपद्मे
तरुणमरुणवर्णं वारणास्यं द्विनेत्रम् ।
अभय-वरदहस्तं चारुपाशाङ्कुशाढ्यं
करयुगलमनन्यं चिन्तयेद् विघ्नराजम् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'वं नमः हंसः सोऽहं, शं नमः हंसः सोऽहं, षं नमः हंसः सोऽहं, सं नमः हंसः सोऽहं, पूर्वदिनकृत-षट्शतमजपा-जपमाधारस्थित-गणपतयेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य ।

श्वासोच्छ्वासरूप से २१६०० जप का तत्तद् देवता को निवेदन करने का संकल्प कर, उस दिन के कुल २१६०० श्वास रूप मन्त्र का निवेदन करे।

आधार पद्म के 'व श ष स' रूप दल पर अत्यन्त रक्त वर्ण वाले, हाथी के समान मुखवाले, दो नेत्र वाले, अभय तथा वर रूप में दोनों हाथों में सुन्दर पाश तथा अंकुश को धारण करने वाले विघ्नराज गणेश का ध्यान करे ॥ १ ॥

इस प्रकार गणेश का ध्यान कर, मानसोपचार से विघ्नराज गणेश का पूजन करे । 'वं नमः हंसः सोऽहं, शं नमः हंसः सोऽहं, षं नमः हसः सोऽहं, सं नमः हंसः सोहं' इस प्रकार दिन के पूर्वभाग में किये हुए ६०० अजपा जप को आधारपद्म में स्थित गणपति को निवेदन करता हूँ, ऐसा कहकर निवेदन करे । तदनन्तर,

ब-भ-म-य-र-ल-संज्ञैरक्षरैर्दीप्तपद्मे

सुरुचिरमुपविष्टं चिन्तयेत् पद्मयोनिम् ।

अभय-वरदहस्तं चारु-कुम्भा-ऽक्षमाला-

विकसित-करपद्मं सृष्टिकृद्विश्वमूर्तिम् ॥ २ ॥

इति स्वाधिष्ठाने ब्रह्माणं ध्यात्वोपचारैः सम्पूज्य, 'वं नमः हंसः सोऽहं, भं नमः हंसः सोऽहं, मं नमः हंसः सोऽहं, यं नमः हंसः सोऽहं, रं नमः हंसः सोऽहं, लं नमः हंसः सोऽहं, पूर्वदिनकृत-षट्सहस्रमजपाजपं स्वाधिष्ठानस्थित-ब्रह्मणेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य ।

डाद्यैः फान्तगतैः प्रकल्पितदले पद्मे निविष्टं हरिं

मार्तण्डद्युतिमादिपूरुषमजं नारायणं श्रीयुतम् ।

'ब, भ, म, य, र, ल' संज्ञक अक्षर रूपदल से जो कमल सुशोभित हो रहा है, उस पर शान्तचित्त से बैठे हुए ब्रह्मदेव का ध्यान करे। जिनके हाथ, अभय, वर, सुन्दर कुम्भ तथा अक्षमाला से सुशोभित हैं, जो सृष्टिकर्त्ता तथा समस्त विश्वरूप हैं ॥ २ ॥

इस प्रकार अपने हृदय-स्थान पर ब्रह्मा का ध्यान कर, मानसोपचार से उनका पूजन करें, 'वं नमः हंसः सोऽहं' से लेकर 'लं नमः हंसः सोऽहं' तक दिन के पूर्व भाग में छह हजार ६०००) अजपा जप को करे। फिर 'स्वाधिष्ठानस्थित-ब्रह्मणेऽहं षट्सहस्रमजपाजपं निवेदयामि' कहकर जप को निवेदित करे। तदनन्तर,

'ड' अक्षर से प्रारम्भ कर 'फ' अक्षर पर्यन्त दलों से निर्मित पद्म पर बैठे हुए श्रीहरि का ध्यान करे। जिनका शरीर सूर्य के समान देदीप्यमान हो रहा है, जो अज आदि पुरुष तथा नारायण रूप से विख्यात हैं,

हस्ताम्भोज-गदादिशङ्खममलं पीताम्बरं कौस्तुभ-
ग्रैवेयाऽङ्गद-हार-नूपुरयुतं नाभौ मुदा चिन्तयेत् ॥ ३ ॥

इति नाभौ विष्णुं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'डं नमः हंसः सोऽहं, ढं नमः हंसः सोऽहम्'-इत्यादि 'फं नमः हंसः सोऽहम्' इत्यन्तं पूर्वदिनकृत-षट्सहस्रमजपाजपं मणिपूरस्थ-विष्णवेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य ।

काद्यैष्ठान्तगतैः प्रकल्पितदले पद्मे निविष्टं शिवं
राकानायक-मण्डलप्ररुचिरं त्र्यक्षं कपर्दोज्ज्वलम् ।
शान्तं टङ्क-मृगा-ऽभयैर्वरयुतैर्युक्तं करैः कङ्कण-
ग्रैवेया-ऽङ्गद-हार-नूपुरयुतं चर्माम्बरं चिन्तयेत् ॥ ४ ॥

जो लक्ष्मी से युक्त हैं तथा जिनके हाथ में शंख, चक्र, गदा तथा पद्म विराज रहे हैं, जो शुद्ध पीताम्बर, कौस्तुभ, ग्रैवेय, बिजायठ, हार तथा नूपुर को धारण किये हुए हैं, इस प्रकार के स्वरूप वाले भगवान् विष्णु का नाभिस्थान में ध्यान करना चाहिए ॥३॥

इस प्रकार नाभिस्थान में विष्णु का ध्यान कर, मानसोपचार से उनकी पूजा करे, फिर 'डं नमः हंसः सोहं', 'ढं नमः हंसः सोऽहं' इत्यादि क्रम से 'फं नमः हंसः सोऽहं' पर्यन्त दिन के पूर्वभाग में किये गये छह हजार (६०००) अजपा जप को 'मणिपूरस्थ-विष्णवेऽह निवेदयामि' कहकर विष्णु को निवेदन करे । पुनः,

'क' से लेकर 'ठ' तक के अक्षर रूप दलों से बने हुए, कमल पर बैठे हुए शिव का ध्यान करे । जो शरत् पूर्ण चन्द्रमा की कान्ति के समान देदीप्यमान हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो जटा-जूट से सुशोभित हैं, जिनका स्वरूप अतिशय शान्त है, जो हाथों में टंक, मृगचर्म तथा अभय मुद्रा

इति हृदि शिवं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'कं नमः हंसः सोऽहं, खं नमः हंसः सोऽहम्'–इत्यादि 'ठं नमः हंसः सोऽहम्' इत्यन्तमुच्चार्य, पूर्वदिनकृत-षट्सहस्रमजपाजपमनाहत-स्थितशम्भवेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य ।

प्रत्यङ्गेषु निविष्टमङ्गरहितं व्याप्तं जगत्कारणं
सूक्ष्मात् सूक्ष्मतर गुणाऽगुणमयं वैराग्यसम्मिश्रितम् ।
मूर्ताऽमूर्त-ममोय-मूर्तिममल-ज्योतिःप्रदीप्तोज्ज्वलं
साक्षात् षोडशवर्णपत्रकमले जीवं परं चिन्तयेत् ॥ ५ ॥

इति कण्ठे जीवं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'अं नमः हंसः सोऽहम्' इत्यादि 'अः नमः हंसः सोऽहं' इत्यन्तमुक्त्वा

को धारण किये हुए हैं तथा जो कंकड़, ग्रैवेय, बिजायठ, हार, नूपुर तथा व्याघ्र चर्म धारण किये हुए हैं, इस प्रकार शिवस्वरूप का हृदय-स्थान में ध्यान करे ॥४।

पश्चात् मानसोपचार से उनका पूजन करे, फिर 'कं नमः हंसः सोऽहं' से प्रारम्भ कर 'ठं नमः हंसः सोऽहं' पर्यन्त अक्षरों के द्वारा पूर्व दिन में किये गये ६००० संख्याक अजपा जप को 'अनाहतस्थितशम्भवेऽहं निवेदयामि' कहकर समर्पित करे। तदनन्तर,

'अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, ऌ, ॡ' से 'ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः' इन षोडश वर्णरूप दलों से बने हुए कमल पर निराकार रूप से विराजमान, जगत् में व्याप्त होकर भी जगत् के कारणस्वरूप, सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर, वैराग्य मिश्रित सगुण तथा निर्गुण स्वरूप, मूर्त एवं अमूर्तस्वरूप, स्वच्छ ज्योति से जगमगाते हुए जीव का ध्यान करना चाहिए ॥५॥

इस प्रकार कण्ठस्थान पर जीव का ध्यान करता हुआ 'अं नमः हंसः

पूर्वदिनकृत-सहस्रमजपाजपं विशुद्धिस्थित-जीवायाऽहं निवेदयामि' इति पठित्वा, समर्पयेत् ।

ह-क्षाभ्यां परिक्लृप्त-पत्ररचिते पद्मे जगत्कारणं
विश्वोत्तीर्णमनेक-देहनिलय विद्युद्विलासं परम् ।
तत्तद्योग्यतया स्वदेशिकतनुं सम्प्राप्तरूपं परं
प्रत्यक्षाक्षरविग्रहं गुरुपदं ध्यायेत् परं दैवतम् ॥ ६ ॥

इति भ्रूमध्ये श्रीगुरुपदं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'हं नमः हंसः सोऽहं, क्षं नमः हंसः सोऽहम्' 'पूर्वदिन-सहस्रमजपाजपमाज्ञाचक्रस्थगुरवेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य ।

सोऽहं' से प्रारम्भ कर 'अः नमः हंसः सोऽहं' पर्यन्त अक्षरों से किये गये एवं पूर्वदिन कृत १००० संख्याक अजपा जप को 'विशुद्धिस्थित-जीवायाऽहं निवेदयामि' कहकर जीवस्वरूप परमात्मा को निवेदित करे। तदनन्तर,

'ह' से लेकर 'क्ष' पर्यन्त अक्षररूप दलों से बने हुए कमल पर विराजमान, परब्रह्मस्वरूप गुरु का ध्यान करे। जिनका विग्रह प्रत्यक्ष अक्षरस्वरूप है, तथा जो अनेक शरीर से जगत् में व्याप्त हैं, जिनके शरीर की कान्ति विद्युत् के समान जगमगा रही है, मन्त्र की तद्-तद् योग्यता से जो साक्षात् परमेश्वर-स्वरूप हैं ॥६॥

इस प्रकार भ्रू के मध्य में गुरु का ध्यान करे, और मानसोपचार से पूजन कर, 'हं नमः हंसः सोऽहं' से 'क्षं नमः हंसः सोऽहं' पर्यन्त अक्षरों से किये गये १००० अजपा जप को 'आज्ञाचक्रस्थगुरवेऽहं निवेदयामि' कहकर निवेदित करे। तदनन्तर,

विश्वस्यादिमनादिमेकममलं नित्यं परं निष्कलं
नित्योद्बुद्ध-सहस्रपत्र-कमले आद्यक्षरैर्मण्डिते ।
नित्यानन्दमयं समस्तमुनिभिः संवित्स्फुरच्चान्तरं
स्मृत्वाऽऽत्मानमनेक-विश्वनिलयं स्वच्छं जगत्सर्वतः ॥७॥

इति ब्रह्मरन्ध्रे परमात्मानं ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, 'अं नमः हंसः सोऽहम्' इत्यादि 'क्षं नमः हंसः सोऽहम्' इत्यन्तं प्रादक्षिण्येन, विन्यस्य, पूर्वदिनकृत-सहस्र-मजपाजपं ब्रह्मरन्ध्रस्थित-परमात्मनेऽहं निवेदयामि' इति समर्प्य, ध्यायेत्–

हंसो गणेशो विधिरेव हंसो हंसो हरिर्हंसमयश्च शम्भुः ।
हंसो हि जीवो गुरुरेव हंसो, हंसो ममाऽऽत्मा परमात्महंसः ॥८॥

पुनः सहस्रदल के कमल पर प्रणव से युक्त आत्मा का ध्यान करे। जो विश्व का आदि किन्तु स्वयं अनादि है, जो एक, स्वच्छ, नित्य, मायारहित है, जो जाग्रत्, स्वप्न तथा सुषुप्ति से परे है एवं तुरीयावस्था में विद्यमान है, जो नित्यानन्द स्वरूप, मुनियों के जानने योग्य तथा अन्तःकरण में स्फुरित हो रहा है, जो जगत् के बाहर और भीतर विराजमान है ॥७॥

इस प्रकार ब्रह्मरन्ध्र में परमात्मा का ध्यान कर, मानसोपचार से उनका पूजन करे, 'अं नमःहंसः सोऽहं' से आरम्भ कर 'क्षं नमः हंसः सोऽहं' पर्यन्त किये गये अजपा जप को दाहिने से न्यास कर दिन के पूर्व भाग-'ब्रह्मरन्ध्रस्थित-परमात्मनेऽहं निवेदयामि' कह कर समर्पित करे। फिर निम्न प्रकार से ध्यान करे—

गणेश हंस हैं, ब्रह्मा हंस हैं, श्री हरि हंस हैं, शम्भु हंस हैं, जीव हंस हैं, गुरु भी हंस हैं, यह हमारी आत्मा हंस है तथा परमात्मा भी

देहो देवालयः प्रोक्तो जीवो नाम सदाशिवः ।
त्यजेदज्ञान-निर्माल्यं सोऽहं भावेन पूजयेत् ॥ ९ ॥

इति ध्यात्वा, जीवात्म-परमात्मनोरैक्यं विभाव्य, सङ्कल्पं कुर्यात् । 'ॐ अद्य सूर्योदयादारभ्य श्वःसूर्योदयपर्यन्तं जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिषु नासापुटित-श्वासोच्छ्वासाभ्यां सोऽहं रूपाभ्यां षट्शतोत्तरमेकविंशत्सहस्रसंख्या - ऽजपागायत्रीमन्त्रजपमहं करिष्ये'—इति सङ्कल्प्य, देवं प्रार्थयेत् ।

त्रैलोक्यचैतन्यमयादिदेव ! कपीश ! शम्भो ! भवदाज्ञयैव ।
प्रातः समुत्थाय तव प्रियार्थं संसारयात्रामनुवर्त्तयिष्ये ॥१०॥

हंसस्वरूप ही हैं ॥८॥

यह शरीर मन्दिर है तथा इसमें निवास करने वाला जीव सदाशिव स्वरूप है, इसलिए इनकी पूजा में अज्ञान-स्वरूप निर्माल्य का मैं परित्याग करता हूँ । केवल 'सोऽह' भावना से पूजा करनी चाहिए ॥ ९ ॥

इस प्रकार ध्यान कर, जीवात्मा तथा परमतामा की एकता का ध्यान कर नीचे लिखा हुआ संकल्प करे । देश-काल का संकीर्तन कर, 'आज के सूर्योदय से आरम्भ कर कल सूर्योदय पर्यन्त जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्था में नासापुट के श्वास तथा उच्छ्वास निकले हुए सोऽहंरूप मन्त्र का २१६०० संख्या में अजपा-जपरूप गायत्री का जप करूँगा ।' इस प्रकार संकल्प कर निर्विघ्नता के लिए देवता की प्रार्थना करे ।

हे त्रैलोक्य चैतन्यमय, हे आदिदेव, हे कपीश, हे शम्भो ! आप की आज्ञा से प्रातःकाल उठकर संसार-यात्रा के लिए कार्य कर रहा हूँ ॥ १० ॥

अहं देव न चाऽन्योऽस्मि ब्रह्मैवाऽहं न शोकभाक् ।
सच्चिदानन्दरूपोऽहमात्मानमिति भावयेत् ॥११॥
संसारयात्रामनुवर्तमानं त्वदाज्ञया श्रीहनुमन्महेश ! ।
स्पर्द्धा-तिरस्कार-कलिप्रमाद-भयानिमांमाऽभिभवन्तु तात ! ॥१२॥
जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्तिः । ॥
त्वया जगत्प्राण-हृदिस्थितेन यथा नयुक्तोऽस्मि तथा करोमि॥१३॥

इति देवं प्राथ्र्य, बहिर्गमनार्थं महीं प्रार्थयेत् -
समुद्र-मेखले देवि ! पर्वत-स्तन-मण्डले ।
विष्णुपत्नि ! नमस्तुभ्यं पादस्पर्शं क्षमस्व मे ॥१४॥

मैं ही देव हूँ और कुछ दूसरा नहीं हूँ, मैं ही परब्रह्म हूँ, मुझे किसी प्रकार का शोक नहीं है। मैं ही सच्चिदानन्द-स्वरूप हूँ, ऐसा ध्यान करे ॥११॥

हे हनुमान् ! हे महेश ! संसार में अपने निर्वाह के लिए कार्य करने वाले मुझको आपकी आज्ञा से स्पर्धा, तिरस्कार, कलह, प्रमाद तथा भय के द्वारा कोई अनादर न प्राप्त हो ॥१२॥

मैं धर्म को जानता हूँ, पर मेरी उसमें प्रवृत्ति नहीं है, मैं पाप को जानता हूँ, पर उससे मेरा छुटकारा भी नहीं हो पाता। अतः हे जगत्प्राण, मेरे हृदय में बैठकर आप जैसी आज्ञा देते हैं, मैं वैसा ही कर रहा हूँ ॥१३॥

इस प्रकार देवता की प्रार्थना कर, बाहर जाने के लिए पृथ्वी की प्रार्थना करे–समुद्ररूप मेखला तथा पर्वतरूप स्तनमण्डल से विराजमान, हे विष्णुपत्नि ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ, तुम मेरे पैर के स्पर्श को क्षमा करो ॥ १४ ॥

इति प्रार्थ्य, 'ऐं' इत्युत्थाय, 'क्लीं' इति जलपात्रमादाय, नगराद् बहिः शौचादिकं कर्तुं त्रिवारं देवं च स्मरन् गच्छेत् ।

इति प्रातःकृत्यं समाप्तम् ।

—०—

तत्र गत्वा, जलपात्रं स्व-नैर्ऋत्यां संस्थाप्य, भूत-सङ्घान् प्रार्थयेत्—

गच्छन्तु पितरो देवा ऋषयो यक्ष-राक्षसाः ।
भूत-प्रेत-पिशाचाद्याः करिष्ये मलमोचनम् ॥ १ ॥

इति प्रार्थ्य, 'लं' इति प्रादेशमात्रं भूतलं सम्मृज्य, दक्षकर्णोपवीती वसनवेष्टितमस्तको दिवा प्राङ्मुखो वोदङ्मुखो रात्रौ च दक्षिणदिङ्मुखो मौनी तत्रोपविश्य, 'क्रों' इति मध्यमा-

---

ऐसी प्रार्थना कर, 'ऐं' इस मन्त्र का उच्चारण कर शयन से उठे तथा 'क्लीं' मन्त्र का उच्चारण कर, जलपात्र लेकर, गाँव के बाहर शौच करने के लिए तीन बार अपने इष्ट देवता का स्मरण करते हुए जाये ।

इस प्रकार प्रातःकाल का कृत्य समाप्त ।

—०—

शौच के लिए नगर के बाहर अकृष्टभूमि में जाकर, अपने नैर्ऋत्य दिशा में जल को रख कर, भूत संघों की प्रार्थना करे ।

पितर, देवता, ऋषि, यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत तथा पिशाचादि इस स्थान से दूर चले जायें, क्योंकि मैं यहाँ मलमोचन करूँगा ॥१॥

इस प्रकार प्रार्थना कर, 'लं' इस मन्त्र को पढ़कर प्रादेश मात्र भूमि को स्वच्छ करे, दाहिने कान पर जनेऊ को चढ़ावे, वस्त्र से अपने सिर को ढँक कर, दिन में पूर्वाभिमुख अथवा उत्तराभिमुख, रात्रि में दक्षिणाभिमुख मौन हो शौच के लिए बैठे । 'क्रों' इस मन्त्र से मध्यमा तथा

तर्जनीभ्यां लिङ्गं धृत्वा, 'ॐ ह्रीं कपालिन्यै नमः' इति मूत्रं विसृज्य, 'ॐ ह्रीं रक्तचामुण्डायै नमः' इति मलं विसृजेत्। ततो 'वं' इति जलेन बहुमृदा च लिङ्गगुदो गन्धक्षयावधि प्रक्षाल्य, 'ऐं क्लीं श्रीं' इति करौ पादौ च प्रक्षाल्य, 'ह्रीं क्लीं ह्रीं' इति पुनः करौ प्रक्षाल्य, दन्तधावनं कुर्यात्।

दन्तधावनविधिः

चम्पाऽऽम्र-जम्बू-अपामार्गादिष्वेकतमं वृक्षं प्रार्थयेत्—

आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजाः पशु वसूनि च।

श्रियं प्रज्ञां च मेधां च त्वन्नो देहि वनस्पते ! ॥ १ ॥

इति प्रार्थ्य, अष्टौ, दश, द्वादशाङ्गुलं वा विहित-वृक्षशाखोद्भवं दन्तकाष्ठं गृहीत्वा, 'क्लीं कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः' इति

तर्जनी अंगुलियों के द्वारा लिंग को पकड़ कर, 'ॐ कपालिन्यै नमः' इस मन्त्र से मूत्र का तथा 'ॐ ह्रीं रक्तचामुण्डायै नमः' इस मन्त्र से मल का त्याग करे। फिर 'वं' इस मन्त्र से जल तथा मिट्टी के द्वारा गन्धक्षय पर्यन्त लिंग और गुदा का प्रक्षालन करे। फिर 'ऐं क्लीं ह्रीं' इस मन्त्र से दोनों हाथों और पैरों का तथा 'ह्री क्ली ह्रीं' इस मन्त्र से पुनः हाथ का प्रक्षालन करे और दातौन के लिए चम्पा, आम, जामुन तथा अपामार्ग (चिचड़ा) में किसी एक वृक्ष की प्रार्थना करे।

हे वनस्पते ! आप मुझे आयु, बल, यश, तेज, सन्तति, पशु, धन, धान्य, श्री, मेधा तथा प्रज्ञा प्रदान करें ॥१॥ इस प्रकार प्रार्थना कर, आठ, दस या बारह अंगुल की दतुअन के लिए शास्त्र में विहित वृक्ष की शाखा से दतुअन तोड़े। फिर 'क्लीं कामदेवाय सर्वजनप्रियाय नमः' इस

दन्तान् संशोध्य 'क्लीं' इति जिह्वामुल्लिख्य, दन्तकाष्ठं प्रक्षाल्य शुद्धदेशे क्षिपेत् । ततः करौ प्रक्षाल्य, देवं स्मरन् मुखं प्रक्षालयेत् ।

इति दन्तधावनविधिः ।

स्नानविधिः

ततो हनुमन्तं स्मरन् यागमन्दिरे सम्मार्जनादिकं कृत्वा, मङ्गलारातिकं विधाय, निर्माल्यमपसार्य, देवगुणकर्मादिकं स्मरन् स्नातुं नदीं गच्छेत् । तत्र गत्वा, 'फट्' इति तीरं प्रोक्ष्य, स्नानोपस्कारं संस्थाप्य, तर्जन्यां स्वर्ण-रजतनिर्मितां मुद्रिकां कुशमयीं वा धृत्वा, गणेशं च नत्वा, अन्तःस्नानं कुर्यात् । शिरसि सहस्रदल-कमल-कर्णिकायां विराजमानं कोटिसूर्यप्रतीकाशं निज-विविधभूषण-विभूषितविग्रहं वरा-ऽभय-कराम्बुजं श्रीगुरुं

मन्त्र से दाँतों को शुद्ध करे। पश्चात् 'क्लीं' इस मन्त्र से जिह्वा को साफ कर, दतुअन के छिलकों को धोकर शुद्ध स्थान में फेंक देवे। तदनन्तर हाथ धोकर इष्ट देवता का स्मरण करता हुआ मुख का प्रक्षालन करे।

इस प्रकार दन्तधावनविधि समाप्त।

स्नानविधि—तत्पश्चात् हनुमान् जी का स्मरण करता हुआ यज्ञ-मन्दिर को लीपे और मंगला आरती करे। निर्माल्य को दूर कर हनुमान्-जी के ज्ञान आदि गुण तथा अतुलित बलधाम आदि पराक्रम का स्मरण करता हुआ स्नान के लिए नदी में जाये। वहाँ जाकर 'फट्' इस मन्त्र से तीर को शुद्ध करे, और वहाँ पर स्नान के समस्त सामग्री—धोती, कमण्डलु आदि को रखे और तर्जनी अँगुली में सोने, चाँदी अथवा कुश की अँगूठी धारण कर एव गणेशजी का स्मरणकर, सर्वप्रथम मानसिक स्नान करे। सिर पर सहस्रदल कमल कर्णिका में करोड़ों सूर्य के समान देदीप्यमान निज विविध आभूषणों से युक्त वर तथा अभय मुद्रा को

ध्यात्वा, तच्चरण-विगलिता-ऽमृतधारया-ऽन्तर्गत-सकलकलुषं प्रक्षाल्य, विशुद्धान्तःकरणो बहिःस्नानं कुर्यात्। नाभिमात्रोदके गत्वा, पुरतो हस्तमात्रं तीर्थं कल्प्य, आचम्य, प्राणानायम्य, 'क्रों' इत्यङ्कुशमुद्रया[१] तीर्थान्यावाहयेत्–

ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवे!।
तेन सत्येन सकलं तीर्थं देहि दिवाकर!॥१॥
गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि! सरस्वति!।
नर्मदे सिन्धु कावेरि! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥२॥

हाथों में धारण किये हुए श्री गुरु को स्मरण करे। उनके चरण से निकले हुए अमृत की धारा से, अपने समस्त पापों को दूर करने की भावना से अन्तःकरण के पापों को दूर कर पश्चात् बाहरी स्नान करे। नाभिमात्र जल में जाकर अपने चारों ओर एक हाथ तीर्थ की कल्पना करता हुआ आचमन करे। फिर प्राणायाम कर 'क्रों' इस मन्त्र से अंकुश मुद्रा को बनाकर तीर्थों का आवाहन करे।

हे रवे! इस ब्रह्माण्ड के भीतर रहनेवाले समस्त तीर्थ तुम्हारे किरणों से स्पृष्ट हैं, अतः हे दिवाकर! इस सत्य से इस जल में समस्त तीर्थ मुझे प्रदान करो॥१॥ हे गंगे, हे यमुने, हे गोदावरि, हे सरस्वति, हे नर्मदे, हे सिन्धो, तथा हे कावेरि! इस जल में आप लोगों का सन्नि-

---

१. ऋज्वीं च मध्यमां कृत्वा तर्जनीं मध्यपर्वणि।
सयोज्याऽऽकुञ्चयेत् किञ्चिन्मुद्रैषा'ऽङ्कुश'संज्ञिका॥

तथा च—

अङ्कुशाख्या भवेन्मुद्रा पृष्ठेनाऽनामा कनिष्ठया।
अङ्गुष्ठे तर्जनी वक्रा सरला चाऽपि मध्यमा॥

—मेरु०, अष्टम प्र०, श्लो० १९

आवाहयामि त्वां देवि ! स्नानार्थमिह सुन्दरि ! ।
एहि गङ्गे ! नमस्तुभ्यं सर्वतीर्थसमन्विते ॥३॥

इत्यावाह्य, 'वं' इति तीर्थानि तज्जले संयोज्य, अग्न्यर्केन्दुमण्डलानि तत्र सञ्चिन्त्य, 'वं' इति द्वादशधाऽभिमन्त्र्य, [1]धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य, [2]मत्स्येनाऽऽच्छाद्य, 'हुँ' इत्यवगुण्ठ्य, चक्रेण संरक्ष्य, 'फट्' इति छोटिकया दशदिग्बन्धनं कृत्वा, मूलेनैकादशधाऽभिमन्त्र्य, जलं नमेत् ।

धान हो ॥२॥ हे समस्त तीर्थों से संयुक्त सुन्दरि गंगे देवि, तुम्हें नमस्कार है । इस जल में हम तुम्हारा आवाहन करते हैं ॥३॥

इस प्रकार जल में तीर्थों का आवाहन कर, 'वं' इस मन्त्र से उन तीर्थों को जल में मिलावे, सूर्य, अग्नि तथा चन्द्रमण्डल के तेज का ध्यान करता हुआ 'वं' इस मन्त्र से बारह बार जल को अभिमन्त्रित करे । धेनुमुद्रा से अमृततुल्य बना कर, तथा मत्स्य मुद्रा से जल को आच्छादित कर 'हुँ' इस मन्त्र से उसे अवगुण्ठित कर, चक्रमुद्रा से उस जल को रक्षा करता हुआ, 'फट्' इस मन्त्र से छींटे द्वारा दसों दिशाओं की रक्षा करे, फिर मूल मुद्रा से ग्यारह अथवा बारह बार जल को अभिमन्त्रित कर उसे प्रणाम करे ।

---

१. अन्योन्याऽभिमुखौ श्लिष्टौ कनिष्ठाऽनामिका पुनः ।
तथा तु तर्जनी मध्या 'धेनुमुद्रा' प्रकीर्तिता ॥
—मेरुतं०, अष्टम प्र०, श्लो. ३५

२. दक्षपाणि-पृष्ठदेशे वामपाणितलं न्यसेत् ।
अङ्गुष्ठौ चालयेत् सम्यङ् मुद्रेयं मत्स्यरूपिणी ॥
—मेरुतं०, पू० ख०, द्वि० त०

ततो जले पूर्वविभावित-चतुष्कोणे वक्ष्यमाण-हनुमद्यन्त्रं विचिन्त्य, बिन्दौ हनुमन्तं ध्यात्वा, षडङ्गमन्त्रैः पञ्चोपचारैश्च सम्पूज्य, मूलेन [1]कुम्भमुद्रया शिरसि तोयं त्रिः प्रक्षिप्य, 'ॐ ह्रीं स्वाहा' इत्याचामेत्। ततः सप्तरन्ध्राणि संरोधयन् त्रिर्निमज्ज्योन्मज्ज्य, देवं मनसि स्मरन् 'हिरण्यशृङ्गम्[2]—' इत्यादि-वैदिक-मन्त्रैस्तान्त्रिकमन्त्रैश्च स्वदेहमभिषिञ्चेत्। यथा—

हिरण्यशृङ्गं वरुणं प्रपद्य तीर्थं मे देहि याचितः।

तदनन्तर जल में पूर्वोक्त क्रम से उनके चारों ओर हनुमद्यन्त्र का ध्यान करता हुआ, बिन्दु में हनुमान् का ध्यान करता हुआ षडंगमन्त्रों से पञ्चोपचार द्वारा उस जल का पूजन करे। मूल मन्त्र से कुम्भमुद्रा के द्वारा सिर पर तीन बार जल छिड़क कर, 'ॐ ह्रीं स्वाहा' इस मन्त्र से उस जल द्वारा आचमन करे। पश्चात् शरीर के सात छिद्र, दो कान, दो नेत्र, दो नासिका पुट तथा मुख को बन्द करके तीन बार जल में डुबकी लगाये, फिर इष्ट देवता श्री हनुमान् जी का स्मरण करता हुआ 'हिरण्यशृंगम्' इत्यादि वैदिक तथा तान्त्रिक मन्त्रों से अपने शरीर पर जल छोड़े। वह इस प्रकार है—

मैं हिरण्यशृंग वरुण की शरण में हूँ, हे वरुण, मैं आप से समस्त तीर्थों की याचना कर रहा हूँ। आप मुझे समस्त तीर्थ प्रदान करें। मैंने दुष्टों

---

१. मुष्ट्योरूर्ध्वौ कृताङ्गुष्ठे तर्जन्यग्रेषु विन्यसेत्।
सर्वरक्षाकरी ह्येषा कुम्भमुद्रा प्रकीर्तिता॥
अथवा
हस्तद्वयेन सावकाशिक-मुष्टिकरणे 'कुम्भमुद्रा' भवतीति बोद्ध्या।

२. हिरण्यशृङ्गोऽयो अस्य पादा मनोजवा अवर इन्द्र आसीत्॥
देवा इदस्य हविरद्यमायन्यो अर्वन्तं प्रथमो अध्यतिष्ठत्॥
—शु० य० सं० अ० २९, मन्त्र २०

यन्मया भुक्तमसाधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रहः ॥ ४ ॥
यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम् ।
तन्म इन्द्रो वरुणो बृहस्पतिः सविता च पुनन्तु पुनः पुनः ॥५॥
इमं मे गङ्ग यमुने सरस्वति शुतुद्रिस्तोमं स च तापरुष्णया ।
असिक्न्यामरुद्वृधे वितस्तयार्जीः कीये शृणुह्यासुषोमया ॥६॥
आधारः सर्वभूतानां विष्णोरतुलतेजसः ।
तद्रूपाश्च ततो जाता आपस्ताः प्रणमाम्यहम् ॥७॥
सिसृक्षोर्निखिलं विश्वं मुहुः शुक्रं प्रजापतेः ।
मातरः सर्वभूतानामापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥ ८ ॥
अलक्ष्मीर्मलरूपा या सर्वभूतेषु संस्थिता ।
क्षालयन्ति निजस्पर्शादापो देव्यः पुनन्तु माम् ॥ ९ ॥

का जो अन्न भोजन किया है, अथवा पापियों से प्रतिग्रह लिया है, अथवा मन, वचन और कर्म से जो भी पाप किया है, मेरे उन पापों को इन्द्र, वरुण, बृहस्पति तथा सविता नष्ट कर पवित्र करें ॥४-५॥

जो समस्त प्राणियों का आधार है, तथा जिसकी उत्पत्ति अत्यन्त तेजस्वी श्री विष्णु से हुई है, उस जल को मैं प्रणाम करता हूँ ॥६-७॥ विश्व की सृष्टि की इच्छा करने वाले भगवान् प्रजापति का शुक्र जिसमें पड़ा है तथा जो समस्त प्राणियों का पालन करने के कारण मातृस्वरूप हैं; उस जल के अधिष्ठात्री देवी को मैं प्रणाम करता हूँ ॥८॥ जो समस्त प्राणियों के भीतर रहनेवाले मलरूप अलक्ष्मी का स्पर्श मात्र से ही विनाश कर उन्हें पवित्र करते हैं, उस जल के अधिष्ठात्री देवी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥९॥ मेरे केश, केशों के विन्यास स्थान, सिर, ललाट, कान

यन्मे केशेषु दौर्भाग्यं सीमन्ते यच्च मूर्द्धनि ।
ललाटे कर्णयोरक्ष्णोरापस्तद् घ्नन्तु वो नमः ॥१०॥
आयुरारोग्यमैश्वर्यमरीपक्षक्षयं सुखम् ।
सन्तोषः शान्तिरास्तिक्यं विद्या भवतु वो नमः ॥११॥

एभिर्मन्त्रैर्मूलेन चाऽभिषिच्य, 'देवांस्तर्पयामि । ऋषींस्तर्पयामि । पितॄंस्तर्पयामि ।' इति सन्तर्प्य, वस्त्रं सम्पीड्य, क्षालयित्वा, तीरमागत्य भूतादिभ्योऽञ्जलित्रयं दद्यात् ।

असुरा भूत-वेताला कूष्माण्डा ब्रह्मराक्षसाः ।
ते सर्वे तृप्तिमायान्तु मया दत्तेन वारिणा ॥१२॥

इति दत्त्वा, मूलेन प्रोक्षिते धौते वाससी परिधायाऽऽचामेत् ।

इति स्नानविधिः ।

तथा नेत्रों में जो पाप स्थित हैं, उसे हे जल के अधिष्ठातृ देवता, नष्ट करो ॥१०॥ हे जल ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ, आप मुझे आयु, आरोग्य, ऐश्वर्य, शत्रुपक्ष का नाश, सुख, सन्तोष, शान्ति, आस्तिक्य तथा विद्या प्रदान करें ॥११॥

इन मन्त्रों से तथा मूल मन्त्र से 'देवांस्तर्पयामि, ऋषींस्तर्पयामि, पितॄंस्तर्पयामि' इन मन्त्रों से देवता, ऋषि तथा पितरों का तर्पण करें, वस्त्र को निचोड़ कर, उसे धोकर, तट प्रदेश में आकर, भूतादिकों के लिए तीन अंजलि जल प्रदान करे । असुर, भूत, वेताल, कूष्माण्ड तथा ब्रह्मराक्षस मुझसे दिये गये जल के द्वारा तृप्त हों ॥१२॥ इस प्रकार मन्त्र को पढ़कर, तीन अंजलि जल देकर, मूल मन्त्र से धोती का प्रोक्षण कर, धोती तथा अंगोछा धारण करे । फिरआच मन करे ।

इस प्रकार स्नान-विधि समाप्त ।

भस्मधारणम्

ततो गृहमागत्यासनस्थः स्मार्तोत्थमग्निहोत्रोत्थं वा भस्म हस्ते गृहीत्वा, अग्निरिति भस्म। वायुरिति भस्म। जलमिति भस्म। स्थलमिति भस्म। व्योमेति भस्म। सर्वँ ह वा इदं भस्म मन एतच्चक्षूंषि भस्मानि भवन्ति।

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात् ॥ १ ॥

मानस्तोके तनये मा नऽआयुषि मानो गोषुमानो अश्वेषु रीरिषः।
मानो वीरान् रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्वा हवामहे ॥२॥

इत्यभिमन्त्र्य, जलेनाऽऽलोड्य,

ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्यो जाताय वै नमः।
भवेभवेनातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः ॥३॥

वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः ॥ ४ ॥

भस्मधारण—फिर घर आकर, आसन पर बैठकर, स्मार्त्त अथवा वैदिक अग्निहोत्र की विभूति लेकर, 'अग्निरि'ति भस्म, 'वायुरि'ति भस्म, 'जलमि'ति भस्म, 'स्थलमि'ति भस्म, 'व्योमे'ति भस्म, 'सर्वँ ह वा इदं भस्म,' 'मन एतच्चक्षूंषि भस्मानि भवन्ति,' 'त्र्यम्बकं यजामहे' 'मानस्तोके तनये' ॥ १—२ ॥ इन मन्त्रों से भस्म को आमन्त्रित करे, फिर जल मिला कर, 'ॐ सद्यो जातं०' से लेकर 'त्र्यायुषं जमदग्नेः०' पर्यन्त मन्त्रों से पुनः जल मिश्रित भस्म को अभिमन्त्रित करे। पश्चात्

अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः ।
सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्तेऽस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ ५ ॥
तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि ।
तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ६ ॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माऽधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मेऽस्तु सदा शिवोम् ॥ ७ ॥

त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।
यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥ ८॥

इति मन्त्रैरभिमन्त्र्य, 'त्र्यायुषमि'ति मन्त्रेण भाले वक्षसि भुजयोर्नाभौ मूर्ध्नि च पञ्चत्रिपुण्ड्रान् धारयेत् ।

इति भस्म-धारणम् ।

प्रातःसन्ध्याविधिः

अथ स्व-शाखोक्तविधिना वैदिकसन्ध्यां कृत्वा, मन्त्रसन्ध्यां कुर्यात् । 'ॐ तत्सदद्येत्यादिकमुच्चार्य मम सकलदुरितक्षयार्थं

त्र्यायुषं जमदग्नेः' इस मन्त्र से ललाट में, 'कश्यपस्य त्र्यायुषं' इस मन्त्र से वक्षःस्थल में, 'यद्देवेषु त्र्यायुषं' इस मन्त्र से दोनों भुजा में, तथा 'तन्नो ऽअस्तु त्र्यायुषं' इस मन्त्र से मस्तक में पाँच त्रिपुण्ड लगावे ॥ ३–८ ॥

इस तरह भस्मधारणविधि समाप्त ।

प्रातःसन्ध्या - इसके बाद अपने शाखा के अनुसार वैदिक सन्ध्या कर, फिर 'तत्सदद्ये'त्यादि से 'करिष्ये' तक संकल्पवाक्य पढ़कर, मन्त्रसन्ध्या का संकल्प करे। उसका अर्थ इस प्रकार है—'देशकाल का संकीर्तन

श्रीमद्धनुमत्प्रीत्यर्थं प्रातःसन्ध्योपासनहं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य । (१) 'ह्रां आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा । (२) ह्रीं विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा ।' (३) 'ह्रूँ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा'-इत्याचम्य, करौ प्रक्षाल्य, ओष्ठा-ऽऽस्य-करचरण-शिरांसि जलबिन्दुभिः प्रोक्ष्य, अङ्गानि स्पृशेत् । मुख-नासिके तर्जन्यङ्गुष्ठेन नाभिं कनिष्ठिका-ऽङ्गुष्ठाभ्यां, हृदयं करतलेन, मस्तकांसौ सर्वाङ्गुलीभिश्च संस्पृश्य, मूलेन शिखां बद्ध्वा, प्राणायामं कुर्यात् । मूलमन्त्रेणैकेन पूरकं (१), द्वाभ्यां कुम्भकं (२), त्रिभिः रेचकम् (३) । पुनर्दक्षनासातः पुनर्वामनासातः पूरक-कुम्भक-रेचकमेवं प्राणायामत्रयं कृत्वा, वक्ष्याण-मूलर्ष्यादिन्यासं विधाय, स्वाग्रे

करता हुआ समस्त पापराशि का क्षय तथा हनुमान् जी की प्रीति के लिए मैं सन्ध्योपासन करता हूँ ।' फिर 'ॐ ह्रां आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' से आरम्भ कर 'ह्रूँ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा' तक वाक्य पढ़कर तीन बार आचमन करे । हाथ धोकर ओठ, मुख, हाथ, पैर तथा शिर पर जल को छिड़के और पुनः अंगों का स्पर्श करे । मुख और नाक का स्पर्श दोनों हाथ के तर्जनी तथा अँगूठे से, नाभि का स्पर्श दोनों हाथ की कानी अँगुली तथा अँगूठे से, हृदय को हाथ के तलवे से, मस्तक तथा दोनों कन्धों को दोनों हाथों की समस्त अँगुलियों से स्पर्श करे । फिर मूल मन्त्र से शिखा बाँधकर प्राणायाम करे । मूल मन्त्र को एक बार पढ़कर पूरक, दो बार पढ़कर कुम्भक तथा तीन बार पढ़कर रेचक प्राणायाम करे । पहले दाहिनी नासिका से पूरक, कुम्भक, रेचक करे, फिर बायीं नासिका से पूरक, कुम्भक तथा रेचक करे । पश्चात् दाहिनी नासिका से पूरक, कुम्भक तथा रेचक इस प्रकार तीन बार प्राणायाम करे । फिर आगे कहे जानेवाले मन्त्रों से ऋष्यादि न्यास कर अपनी बायीं

वामतः पात्रं संस्थाप्य, 'नमः' इति जलमापूर्य, पूर्ववत्तीर्थान्यावाह्य 'वं' इति धेन्वाऽमृतीकृत्य, मूलेनाऽष्टधाऽभिमन्त्र्य, तज्जलं वामहस्ते गृहीत्वा, दक्षाऽङ्गुष्ठ-तर्जनीभ्यां नमोऽन्तैरकारादि-क्षकारान्त-मातृकाक्षरैः प्रत्यक्षरं शिरः प्रोक्ष्य, सशेषं तज्जलं दक्ष-हस्ते विधाय, वामकरेण तद्गलित-बिन्दुभिर्मूलेन सप्तधा तनुं सम्मार्ज्य, पुनर्दक्षकरस्थं तज्जलं वामनासाग्रमुपनीयेडयाऽऽकृष्य, देहान्तस्थं सकल-कलुषं प्रक्षाल्य, तज्जलं कृष्णवर्णं पिंगलया बहिर्निर्गतं मत्वा, स्ववामे ज्वलद्वज्रशिलां ध्यात्वा। 'ॐ श्लीं पशुं हुँ फट्' इति पाशुपतास्त्रेण तस्यां निःक्षिपेत्।

ओर आगे पात्र रखकर, 'नमः' पढ़कर जल छोड़े और उसमें पूर्वोक्त 'ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि' से प्रारम्भ कर, 'सर्वतीर्थे समन्विते' तक श्लोक पढ़कर 'धेनुमुद्रा' से उसे अमृत के तुल्य बनावे, फिर मूलमन्त्र पढ़कर उसे आठ बार अभिमन्त्रित कर, उस जल को बायें हाथ पर ले, दाहिने हाथ के अँगूठे तथा तर्जनी अंगुलि के द्वारा 'अकाराय नमः' से लेकर 'क्षकाराय नमः' तक पढ़कर शिर का सम्मार्जन करे, फिर शेष जल दाहिने हाथ पर रख कर, फिर बायें हाथ से उस जल को गिराकर, उसके बिन्दुओं से मूल मन्त्र को पढ़कर सात बार अपने शरीर का सम्मार्जन करे। फिर दाहिने हाथ पर रखे हुए उस जल को बायीं नासिका के आगे ले जाकर, उस नासिका से ऊपर की ओर खींचे। और शरीर के भीतरी भाग में रहने वाले समस्त पापों को नष्ट कर उस जल को काला समझकर, और पाप को पिंगला से बाहर निकला हुआ समझकर, बायीं ओर वज्रशिला का ध्यान करे। 'ॐ श्लीं पशुं हुं फट्' इस मन्त्र को पढ़कर पाशुपतास्त्र से उस वज्रशिला पर फेंके।

ततः करौ प्रक्षाल्य, आचम्य, अञ्जलिना जलमादाय, 'ॐ वायुपुत्राय विद्महे वज्राङ्गाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।'

'रविमण्डलसंस्थाय हनुमते अर्घ्यं कल्पयामि' इति त्रिरर्घ्यं दत्वा, मूलमुच्चार्य, 'श्रीहनुमन्तं तर्पयामि नमः' इति त्रिः सन्तर्पयेत्।

ततः प्रकोष्ठयोर्मणिबन्धयोः पार्श्वयोः करतलयोस्तत्पृष्ठयोस्तदग्रयोश्च मूलं विन्यसेत्। एवं करशुद्धिं कृत्वा, ऋष्यादिन्यासपूर्वकं गायत्रीं मूलमन्त्रं च यथाशक्ति जपित्वा, समर्प्य प्रणम्य[1], संहारमुद्रया तीर्थानि देवं च विसृजेत्।

इति प्रातःसन्ध्याविधिः।

तत्पश्चात् हाथ धोकर, आचमन कर अंजलि से जल को लेकर, 'ॐ वायुपुत्राय विद्महे' से 'हनुमते अर्घ्यं कल्पयामि' तक तीन बार मन्त्र पढ़कर हनुमान् जी को तीन बार अर्घ्य देवे। फिर मूल मन्त्र का उच्चारण कर, 'श्री हनुमन्तं तर्पयामि नमः' इस मन्त्र को तीन बार पढ़कर तीन बार हनुमान् जी का तर्पण करे।

इसके बाद प्रकोष्ठ, मणिबन्ध, पार्श्व, करतल तथा उसके पृष्ठ भाग तथा उसके आगे मूल मन्त्र से न्यास करे। इस प्रकार कर-शुद्धि कर ऋष्यादिन्यास पूर्वक गायत्री ('ॐ वायुपुत्राय विद्महे॰' इत्यादि) तथा मूल मन्त्र का यथाशक्ति जप कर, उसे हनुमान् जी को समर्पित करे। तथा संहार मुद्रा से समस्त तीर्थ तथा देवताओं का विसर्जन करे।

इस तरह प्रातःकाल की सन्ध्याविधि समाप्त।

---

१. अधोमुखे वामहस्ती ऊर्द्ध्वं स्याद् दक्षहस्तकम्।
क्षिप्त्वाऽङ्गुलीरङ्गुलीभिः संग्रथ्य परिवर्तयेत्॥
एषा संहारमुद्रा स्याद् विसर्जनविधौ स्मृता।
— मन्त्र महा॰, पू॰ ख॰, द्वि॰ त॰

अथ देवं स्तुवन् यागमण्डलपमागत्य, हस्तौ पादौ च प्रक्षाल्या-ऽऽचम्य, प्राणानायम्य, स्वशाखोक्तविधिना-ऽग्निहोत्रं विधाय, अग्नीमुपस्थाय, द्वारपूजां कुर्यात् ।

द्वाराग्रे बिन्दुत्रिकोणं कृत्वा, 'व्यापकमण्डलाय नमः' इति सम्पूज्य, 'ॐ' हः द्वारार्घ्यं साधयामि हुँ फट्' इति पात्रं संस्थाप्य, 'नमः' इति जलमापूर्य, 'गङ्गे च–' इति तीर्थान्या-वाह्य, 'ॐ' इति सम्पूज्य, धेन्वाऽमृतीकृत्य, मूलेनाऽष्टधाभिमन्त्र्य, तज्जलेन 'फट्' इति द्वारं प्रोक्ष्य, द्वारदेवताः पूजयेत् ।

ऊर्ध्वे–१ गं गणेशाय नमः । दक्षे–२ मं महालक्ष्म्यै नमः । वामे–३. सं सरस्वत्यै नमः । दक्षे–४. विं विघ्नाय नमः ।

पश्चात् इष्ट देवता श्री हनुमान्‌जी का स्मरण करता हुआ यज्ञ-मण्डप में आकर, हाथ तथा दोनों पैरों का प्रक्षालन करे। आचमन तथा प्राणायाम कर अपनी शाखा के अनुसार अग्नि में होम कर, अग्नि की स्तुति कर यज्ञमण्डप के द्वार की पूजा करे ।

द्वार के अग्रभाग पर बिन्दु से त्रिकोण बनाकर 'व्यापकमण्डलाय नमः' इस मन्त्र से त्रिकोण की पूजा करे। पश्चात् । 'ॐ ह्लः द्वारार्घ्यं साधयामि हुँ फट्' इस मन्त्र से पात्र स्थापित करे । 'नमः' मन्त्र पढ़कर उसमें जल भरे, 'गङ्गे च०' इत्यादि मन्त्र को पढ़कर उस जल में तीर्थों का आवाहन करे। 'ॐ' इस मन्त्र से अर्घ्यपात्र की पूजा करे । धेनुमुद्रा से उसे अमृत तुल्य बनावे फिर मूल मन्त्र से आठ बार अर्घ्य को अभि-मन्त्रित करे, पश्चात् उस अर्घ्य के जल से 'फट्' यह मन्त्र पढ़कर द्वार पर गिरा दे और द्वार-देवता की पूजा करे ।

ऊपर १. 'गं गणेशाय नमः,' दाहिने २. 'मं महालक्ष्म्यै नमः' बायें

.५ गं गङ्गायै नमः। ६. यं यमुनायै नमः। वामे–७. क्षं क्षेत्रपालाय नमः। ८. यं यमुनायै नमः। दक्षे–९. धां धात्रे नमः। वामे–१०. विं विधात्रे नमः। दक्षे–११. शं शङ्खनिधये नमः। वामे–१२. पं पद्मनिधये नमः। इति सम्पूज्य, चतुर्द्वारेषु दक्षवामपार्श्वक्रमेण यजेत्।

१. नन्दिने नमः। २. महाकालाय नमः। ३. गणेशाय नमः। ४. वृषभाय नमः। ५. भृङ्गिरिट्यादिभ्यो नमः। ६. स्कन्दाय नमः। ७. पार्वतीशाय नमः। ८. चण्डीश्वराय नमः। इति द्वारदेवताः सम्पूज्य, आत्मानं शङ्करं ध्यायन् पठेत्–

अपक्रामन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥१॥

'सं सरस्वत्यै नमः' फिर दाहिने ४. विं विघ्नाय नमः' ५. 'गं गङ्गायै नमः' ६. 'यं यमुनायै नमः' फिर बायें ७. 'क्षं क्षेत्रपालाय नमः' ८. 'यं यमुनायै नमः' फिर दाहिने ९. 'धां धात्रे नमः' फिर बायें १०. 'विं विधात्रे नमः' फिर दाहिने ११. 'शं शंखनिधये नमः' बायें १२. 'पं पद्मनिधये नमः' इन मन्त्रों से पूजा करे।

तदनन्तर यज्ञमण्डप के चारों द्वार पर प्रथम प्रवेश से दाहिने और फिर बाँये इस क्रम से देवताओं का अक्षत से 'नन्दिने नमः' से लेकर 'चण्डीश्वराय नमः' पर्यन्त आठ मन्त्रों से आवाहन कर पूजन करे, फिर इन आठ द्वार-देवताओं का पूजन कर, अपने को शंकर के रूप में ध्यान करता हुआ 'अपक्रामन्तु' से प्रारम्भ कर, 'ब्रह्मकर्म समारभे' तक मन्त्र का पाठ करे। जिसका अर्थ इस प्रकार है–

पृथ्वी पर रहने वाले जितने भूत हैं वे यहाँ से हट जायें, तथा जो

अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतो दिशम् ।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ॥२॥

इति पठन् तिग्मदृष्ट्या दिव्यानर्घ्योदकैरन्तरिक्षगान् वामपार्ष्णिघातत्रयेण भौमान् विघ्नानुत्सार्य, तस्मान्निर्गच्छतां विघ्नानामवकाशप्रदानाय वामाङ्गं सङ्कोचयन् दक्षिणपादपुरःसरं मण्डपं प्रविश्य, तस्य नैर्ऋत्यकोणे–(१) 'क्षं क्षेत्रपालाय नमः, (२) विं विधात्रे नमः ।' इति सम्पूज्य, भैरवाज्ञां प्रार्थयेत्–

तीक्ष्णदंष्ट्र ! महाकाय ! कल्पान्तदहनोपम ! ।
भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥३॥

विघ्नकर्त्ता भूत हैं वे भी शिव की आज्ञा से हट जायें ॥ १ ॥

समस्त भूत तथा पिशाच सभी दिशाओं से दूर हटें । मैं किसी का भी विरोध न कर, इस ब्रह्मयज्ञ का आरम्भ कर रहा हूँ ॥ २ ॥

इस मन्त्र को पढ़ता हुआ तिग्मदृष्टि से देवलोक के तथा अर्घ्योदक से अन्तरिक्षलोकके बायें तरफ तीन बार करतलको बजाकर, भूमिलोक से समस्त विघ्नों को दूर करे। और वहाँ से निकलते हुए विघ्नों को मार्ग देने के लिए बायें भाग से कुछ सिकुड़ता हुआ दाहिने पैर को आगे बढ़ाकर मण्डप में प्रवेशकरे, फिर मण्डपके नैर्ऋत्य कोण में—१. 'क्षं क्षेत्रपालाय नमः' २. 'विं विधात्रे नमः' इस प्रकार नैर्ऋत्य कोण में इन दो देवताओं की पूजा करे। पश्चात् निम्नलिखित भैरव की आज्ञा के लिए श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे—

हे तीक्ष्ण दाँत वाले, कल्पान्त अग्नि के समान, महाकाय भैरव ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ। मुझे आप आज्ञा प्रदान करें ॥ ३ ॥

इति प्रार्थ्य, [1]कूर्मचक्रं विचिन्त्य, 'ॐ भूर्भुवः' इति जलेन भूमिं प्रोक्ष्य, गन्धेन स्वाग्रे त्रिकोणं विलिख्य, कोणेषु 'रं', दण्डेषु, 'आं ह्रीं क्रों', मध्ये 'ह्रीं' च विलिख्य, तत्र कुश-चर्माऽम्बरमुत्तरोत्तरं दोषवर्जितमासनमास्तीर्य, १. 'अनन्तासनाय नमः, २. विमलासनाय नमः, ३. पद्मासनाय नमः, इति मन्त्रैस्त्रीन् दर्भानासने निदध्यात् ।

इस प्रकार प्रार्थना कर, कूर्मचक्र का ध्यान कर, 'ॐ भूर्भुवः स्वः' इस मन्त्र को पढ़कर जल से पृथ्वी को सिंचन करे। तथा गन्ध से अपने आगे त्रिकोण बनाकर, प्रत्येक कोण पर 'रं' तथा त्रिकोण की भुजाओं पर 'आं ह्रीं क्रों' तथा त्रिकोण के मध्य में 'ह्रीं' लिखकर, कुशा, तदनन्तर मृगचर्म पश्चात् कम्बलादि से बने हुए आसन को, जो दग्ध, भग्न आदि दोषों से विवर्जित हो, बिछावे, १. 'अनन्तासनाय नमः' २. 'विमलासनाय नमः' ३. 'पद्मासनाय नमः' इन तीन मन्त्रों से तीन कुशा आसन पर रखे।

---

१. क्षेत्रमध्यं समाश्रित्य कूर्मचक्रं विचिन्तयेत् ।
कूर्मचक्रमविज्ञाय यः कुर्याज्जप-यज्ञकम् ॥
तज्जपस्य फलं नास्ति सर्वानर्थाय कल्पते । (यामले)
देशं ग्रामं गृहं वाऽपि नवधा विभजेन्नरः ॥
प्रागादि-पश्चिमान्तं तु कादि-मान्तानि विन्यसेत् ।
अक्षराण्यथ यादीनि तथाऽष्टौ कोष्ठयोर्न्यसेत् ॥
ईशद्वयमधो मध्ये स्वरान् प्रागादि विन्यसेत् ।
श-सान्तान्तु दिशः पश्चान्नामाक्षरतो भवेत् ॥
तन्मुखं पार्श्वयोः पाणी कुक्षी पादौ ततस्ततः ।
पुच्छमेकमथो मध्यं पृष्ठमेवं षडङ्गवान् ॥ (गौतमीये)

पुरश्च०, षष्ठत०, पृ० ४७७

ततः 'ॐ ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः' इत्यासनं सम्पूज्य, १. 'दीं दीपनाथाय नमः, २. दुं दुर्गायै नमः, ३. गं गणपतये नमः, ४. बं बटुकाय नमः, ५. क्षं क्षेत्रपालाय नमः, ६. लं पृथिव्यै नमः' इति सम्पूज्य, पृथिवीं प्रार्थयेत्—

पृथ्वि ! त्वया धृता लोका देवि ! त्वं विष्णुना धृता ।

तदनन्तर 'ॐ ह्रीं आधारशक्तिकमलासनाय नमः' इस मन्त्र से आसन की पूजा करे, १. 'दीं दीपनाथाय नमः', २. 'दुं दुर्गायै नमः' ३. 'गं गणपतये नमः' ४. 'बं बटुकाय नमः', ५. 'क्षं क्षेत्रपालाय नमः' ६. 'लं पृथिव्यै नमः' इस मन्त्र से पृथ्वी की पूजा कर 'पृथ्वि त्वया०' से 'सुरेश्वरि' तक श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे ।

हे पृथ्वी, तुम समस्त लोकों को धारण करने वाली हो, हे देवि !

---

१. दुर्गा दैत्ये महाविघ्ने भवबन्धे कुकर्मणि ।
शोके दुःखे च नरके यमदण्डे च जन्मनि ॥ १ ॥
महाभये च रोगे चाऽप्याशब्दो हन्तृ-वाचकः ।
एतान् हन्त्येव या देवि सा दुर्गा प्रकीर्तितः ॥ २ ॥

अपि च –
दैत्यनाशार्थवचनो दकारः परिकीर्तितः ।
उकारो विघ्ननाशस्य वाचको वेदसम्मतः ॥ १ ॥
रफो रोगघ्न-वचनो गश्च पापघ्न-वाचकः ।
भय-शत्रुघ्न-वचनश्चाकारः परिकीर्तितः ॥ २ ॥
स्मृत्युक्तिश्च श्रवणाद्यस्याऽन्ते नश्यन्ति निश्चितम् ।
ततो दुर्गा हरेः शक्तिर्हरिणा परिकीर्तिता ॥ ३ ॥
दुर्गेति दैत्यशमनोऽप्याकारो नाशवाचकः ।
दुर्गं नाशयते या नित्यं सा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ ४ ॥
विपत्तिवाचको दुर्गश्चाकारो नाशवाचकः ।
तं ननाश पुरा तेन बुधैर्दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ ५ ॥

त्वं च धारय मां नित्य पवित्रं कुरु चासनम् ॥४॥
नित्यं पूताऽसि देवि ! त्वं वराहेण समुद्धृता ।
मां च पूतं कुरु धरे ! नतोऽस्मि त्वां सुरेश्वरि ! ॥५॥

इति प्रार्थ्य, स्वस्तिकाद्यासनेन प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा निश्चलं समुपविश्याऽऽचम्य, प्रणवेन (१६।६४।३२) पूरक-कुम्भक-रेचकैः प्राणायामत्रयं कृत्वा, संघट्टनीं मुद्रां बध्वा, ब्रह्मरन्ध्रे श्रीगुरुं नमेत् ।

ततः 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रक्तद्वादशशक्तियुक्ताय दीपनाथाय नमः' इति दीपं भुवि संस्थाप्य, 'ॐ रां रीं रूं रैं रौं रः' इति स्वपरितोऽग्निप्राकारत्रयं विचिन्त्य, 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः फट्'

तुम्हें भगवान् विष्णु ने धारण किया है। अतः हे देवि ! तुम मुझे धारण करो और मेरे आसन को पवित्र करो ॥४॥ हे भगवति, भगवान् वराह ने तुम्हें पाताल से लाकर तुम्हारा उद्धार किया है। हे देवि ! तुम नित्य पवित्र हो, हे सुरेश्वरि, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम मुझे पवित्र करो ॥ ५ ॥

इस प्रकार पृथ्वी की प्रार्थना कर 'स्वस्तिकाधार'—आसन से स्थिर होकर, पूर्व मुख या उत्तर मुख आसन पर बैठे, तदनन्तर आचमन कर सोलह प्रणव पढ़ता हुआ पूरक, चौंसठ प्रणव से कुम्भक तथा बत्तीस प्रणव पढ़ता हुआ रेचक के क्रम से तीन बार प्राणायाम करे। फिर संघट्टनी मुद्रा बनाकर ब्रह्मरन्ध्र में श्रीगुरु को नमस्कार करे।

तदनन्तर 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं रक्तद्वादशशक्तियुक्ताय दीपनाथाय नमः' इस मन्त्र को पढ़कर, पृथ्वी पर दीप रखे, 'ॐ रां रीं रूं रैं रौं रः' इस मन्त्र से अपने चारों ओर तीन अग्नि के प्राकार (चहार-दीवारी) का

इति दशदिग्बन्धनं कृत्वा, 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्रैलोक्यं रक्ष हुँ फट् स्वाहा' इति पुनश्छोटिकया दिग्बन्धनं कुर्यात् । इति ।

भूतशुद्धि.

अथ स्वदक्षिणे पञ्चपात्रं गन्धा-ऽक्षत-पुष्पादीन् । वामभागे जलपूर्णपात्रं व्यजन-छत्र-दर्पण-चामरादीनि च संस्थाप्य, भूतशुद्धिं कुर्यात् ।

'ॐ शरीरस्य आत्मा ऋषिः प्रकृति-पुरुषौ छन्दसी, सत्यं देवता, कर्मानुष्ठानसिद्धये विनियोगः' इति पठित्वा, कुण्डलीं ध्यायेत् ।

मूलाधारस्थितां देवीं कुण्डलीं परदेवताम् ।
विसतन्तुनिभां विद्युत्प्रभां ध्यायेत् समाहितः ॥१॥

ध्यान करे। फिर 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रः फट्' इस मन्त्रसे दसों दिशाओं में अपनी रक्षा करता हुआ 'ॐ ऐं ह्रीं श्रीं त्रैलोक्य रक्ष हुँ फट् स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर जल के छींटे से दसों दिशाओं में अपनी रक्षा करे।

भूतशुद्धि—तदनन्तर अपने दाहिने पंचपात्र, गन्ध, अक्षत तथा पुष्प, बायीं ओर जल से भरा हुआ पूर्णपात्र, व्यजन, छाता, दर्पण तथा चँवर आदि को स्थापित कर, नीचे लिखे, मन्त्र से भूतशुद्धि करे।

विनियोग—शरीर के आत्मा ऋषि हैं, प्रकृति पुरुष छन्द हैं, सत्य देवता हैं, कर्मानुष्ठान से सिद्धि की प्राप्ति के लिए विनियोग है।

ध्यान—मूलाधार में रहने वाली विसतन्तु के समान स्वच्छ वर्ण वाली, बिजली के समान प्रभावाली, परदेवता स्वरूप कुण्डलिनी देवी का मैं ध्यान करता हूँ ॥ १ ॥

'यं' इति तां मूलाधारादुत्थाय, सुषुम्णामार्गेण हृदयाम्बुजं गच्छन्तीं प्रदीपकलिकाकारां जीवसंयुक्तां कुण्डलीं ब्रह्मरन्ध्रगतां हंसमन्त्रेण ब्रह्मणि संयोज्य, पादादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तस्थित-भूतानि स्मरेत्, १. पादादि-जानुपर्यन्तं चतुष्कोणं वज्रलाञ्छितं 'लं' बीजाढ्यं स्वर्णवर्णं पद्म-मन-घ्राण-गन्ध-ब्रह्म-निर्वृति-समान-संयुतमवनिमण्डलं ध्यात्वा, जान्वादि-नाभिपर्यन्तम्, २. चन्द्रार्द्धनिभमम्बुजद्वयाङ्कितं 'वं' बीजयुतं श्वेताभं पाणिग्रहण-रसनारस-विष्णुप्रतिष्ठोदान संयुतमुदकमण्डलं ध्यात्वा, ३. नाभ्यादि-हृदयान्तं त्रिकोणं स्वस्तिकाङ्कितं 'र' बीजाढ्यं रक्तं पायु-विसर्ग-चक्षु-रूप-शिव-विद्या-व्यानसंयुतमनलमण्डलं ध्यात्वा, ४. हृदयादि-भ्रूमध्यपर्यन्तं षड्बिन्दुलाञ्छितं 'यं' बीजयुतं

'यं' इस मन्त्र के द्वारा कुण्डलिनी को मूलाधार से उठावे, फिर सुषुम्ना मार्ग से हृत्कमल तक, दीपकलिका के समान जाती हुई, तदनन्तर जीव के साथ ब्रह्मरन्ध्र तक, ब्रह्म से 'हंसः सोऽहं' इस मन्त्र से एकाकार संयुक्त होने की भावना रखे। और पैर से लेकर ब्रह्मरन्ध्र तक स्थित समस्त कुण्डलिनी के आकार को तत्तद्भूत पृथिव्यादि के रूप में स्मरण करे। पैर से लेकर जानुपर्यन्त चारों कोने पर वज्र के समान दृढ़, 'लं' बीज से युक्त स्वर्ण वर्ण, पद्म मन, घ्राण, गन्ध, ब्रह्मनिवृति तथा समान से युक्त पृथ्वीमण्डल स्वरूप का ध्यान करे। तदनन्तर जानु से लेकर नाभिपर्यन्त अर्द्धचन्द्राकार दो कमल से युक्त 'वं' बीज युक्त, श्वेत प्रकाश वाली हाथ रसना रस विष्णु प्रतिष्ठा तथा उदान से संयुक्त उदक मण्डलाकार ध्यान करे। नाभि से लेकर हृदय तक त्रिकोण स्वस्तिक युक्त, 'रं' बीज युक्त रक्त पायुविसर्ग नेत्र रूप शिव विद्या व्यान संयुक्त अनलमण्डलाकार ध्यान करे। हृदय से लेकर भ्रूमध्य तक

धूम्राभमुपस्थानं सत्वक्स्पर्शेशान-शान्त्यपान-संयुतमनिलमण्डलं ध्यात्वा, ५. भ्रूमध्यादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तं वृत्तं स्वच्छं मनोहरं वाग्-वचन-श्रोत्र-शब्द-सदाशिव - शान्त्यतीत–प्राणसयुतमाकाश-मण्डलं ध्यात्वा-इति सञ्चिन्त्य, [1]योनिं बध्वा, हंसमन्त्रं जपन्, केवलकुम्भकयोगेन भूतानि प्रविलापयेत् । यथा-भुवं जले, जल-मग्नौ, वह्निं वायौ, वायुमाकाशे, खमहङ्कारे, अहङ्कारं मह-त्तत्त्वे, महत्तत्त्वं प्रकृतौ, मायामात्मनि प्रविलापयेत् । ततः शुद्धसंविन्मयः पापपुरुष ध्यायेत् ।

छह बिन्दु से युक्त, 'यं' बीज युक्त, धूम्र वर्ण के समान उठते हुए त्वक्, स्पर्श, ईशान, शान्ति, अपान से संयुक्त अनिल मण्डलाकार ध्यान करे। भ्रूमध्य से लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त गोल स्वच्छ मनोहर, वाग्, वचन, श्रोत्र, शब्द, सदाशिव, शान्ति से परे प्राण संयुक्त आकाश मण्डलाकार ध्यान करे। इस प्रकार तत्तत् स्थानों में कुण्डलिनी का ध्यान करता हुआ योनिमुद्रा बनाकर हंस मन्त्र का जाप करता हुआ केवल कुम्भक प्राणायाम से समस्त भूतों (पृथिव्यादि पंचतत्त्वों को आत्मतत्त्व) में लीन करे। उसका क्रम इस प्रकार है पृथ्वी को जल में, जल को अग्नि में, अग्नि को वायु में, वायु को आकाश में, आकाश को अहंकार में, अहंकार को महत्तत्त्व में, महत्तत्त्व को प्रकृति में, प्रकृति को माया में तथा माया को आत्मतत्त्व में विलीन करे। पश्चात् शुद्ध संविन्मय पाप पुरुष का ध्यान करे, जिसका स्वरूप इस प्रकार है।

---

१. मिश्रः कनिष्ठिके बध्वा तर्जनीभ्यामनामिके ।
अनामिकोर्द्ध्वं-संश्लिष्टे दीर्घमध्यमयोरथ ॥
अङ्गुष्ठाग्रद्वयं न्यसेद् योनिमुद्रेयमीरिता ॥
——मन्त्र० महा० पू० खं०, द्वि० त०

वामकुक्षिस्थितं कृष्णमङ्गुष्ठपरिमाणकम् ।
ब्रह्महत्याशिरोयुक्तं स्वर्णस्तेयभुजद्वयम् ॥१॥
मदिरापानहृदयं गुरुतल्पकटिद्वयम् ।
पापिसंयोगपद्-द्वन्द्वमुपपातक रोमकम् ।
खडगचर्मधरं दुष्टमधोवक्त्रं च दुःसहम् ॥२॥

इति ध्यात्वा, 'यं' इति वायुबीजं षोडशधा जपन्, वायु-मापूर्य, पापपुरुषेण सह देहं संशोध्य, 'रं' इति वह्निबीजं चतुः-षष्टिवारं जपन्, कुम्भकेन, पापपुरुषेण सह देहं दग्ध्वा, 'यं' इति बीज द्वात्रिंशद्-वारं जपन्, रेचकं कुर्वन् वामनासापुटेन भस्म उत्सार्य, पुनर्वामनासापुटेन 'वं' इति सुधाबीजं द्वात्रिंशत् वारं जपन् वायुमापूय, तद्भस्म संप्लाव्य,

---

जो कुक्षि के वामभाग में निवास करता है, शरीर से जो कृष्णवर्ण अंगुष्ठमात्र परिमाण वाला है। ब्रह्महत्या जिसके सिर पर है, सुवर्ण, स्तेय, दोनों भुजाओं में रहते हैं ॥१॥ जिसका हृदय मदिरापान से पूर्ण है, जिसकी दोनों कटि गुरुतल्प से युक्त है । जिसके दोनों पैर पापियों से संयुक्त हैं, जिसके रोम में उपपातक का निवास है, जिसने खड्ग तथा ढाल धारण किया है, जिसका मुख नीचे की ओर है तथा जो अत्यन्त दुःसह है ॥ २ ॥

इस प्रकार जप करता हुआ 'यं' इस वायु बीज का सोलह बार जप करे । पुनः शरीर में वायु भरकर पापपुरुष के साथ शरीर को सुखाकर, 'रं' इस अग्नि बीज का चौंसठ बार जप करता हुआ कुम्भक प्राणायाम से पापपुरुष के साथ शरीर को जला हुआ समझ कर, 'यं' इस बीज मन्त्र का बत्तीस बार जप करते हुए रेचक करे। तदनन्तर बाँयीं नासिका से शरीर के भस्म को निकाल कर फिर बाँयीं नासिका से 'वं' सुधा बीज

'लं' इति भूबीजं चतुः-षष्टिवारं जपन् कुम्भकेनाऽऽप्लावितं भस्म घनीकृत्य 'हं' इति विशुद्ध-मुकुराकारमाकाशबीजं षोडशधा जपन्, रेचकेन मूर्द्धादि-पादपर्यन्तान्यङ्गानि रचयेत्।

इति प्राणायामः।

भूतशुद्धिः

अथ भूतान्युत्पादयेत्। परमात्मनः प्रकृतिं तस्माद् महत्तत्त्वं तस्मादहङ्कार तस्मादाकाशमाकाशाद् वायुं वायोरग्निमग्नेराप अद्भ्यः पृथिवीमुत्पाद्य, स्व-स्वस्थाने स्थापयित्वा, 'सोऽहं' इति परमेणात्मनाविरजं परसङ्गसुधामयं जीवं हृदयाम्बुज-

---

को बत्तीन बार जप कर शरीर में वायु भरे। और भस्म को सुधा से संयुक्त कर 'लं' इस पृथ्वी बीज का चौंसठ बार जप कर, कुम्भक के द्वारा आप्लावित भस्म को घना कर, 'हं' इस विशुद्ध दर्पण के समान आकाश बीज को सोलह बार जप करता हुआ, रेचक प्राणायाम से शुद्ध सिर से लेकर पैर तक सभी अंगों का निर्माण करे। यह प्राणायाम की विधि है।

तदनन्तर अंग निर्माण के लिए पृथिव्यादि पंचतत्त्वों को उत्पन्न करने की भावना इस प्रकार करे। परमात्मा से प्रकृति, प्रकृति से महत्तत्त्व, महत्तत्त्व से अहंकार, अहंकार से आकाश, आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथिवी को उत्पन्न कर तत्तद् स्थानों में स्थापित कर, 'सोऽहं' इस मन्त्र से रजोगुण रहित परसंग सुधामय जीव को हृदयाकाश में ले आकर स्थापित करे। फिर हृदय-

---

१. सर्वासु बाह्यपूजासु अन्तःपूजा विधीयते।
अन्तःपूजा महेशानि! बाह्यकोटिफलं लभेत् ॥१॥
भूतशुद्धि-लिपिन्यासौ विना यस्तु प्रपूजयेत।
विपरीतफलं दद्यादभक्त्या पूजनं यथा ॥२॥ इति।

मानीय, संस्थाप्य, हृदम्भोजात् कुण्डलिनीं मूलाधारे संस्थाप्य, स्वशरीरं निरस्तसकलकलुषं पुण्यात्मकं देवाराधनयोग्यं च भावयेत् । इति भूतशुद्धिः ।

प्राणप्रतिष्ठा

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णु-रुद्रा ऋषयः, ऋग्-यजुः-सामानि छन्दांसि, प्राणशक्तिर्देवता, आं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्रों कीलकम्, प्राणस्थापने विनियोगः ।

करन्यासः—ऋष्यादिकं विन्यस्य, १. अं कं खं गं घं ङं आं आकाश-वाय्वग्नि-सलिल-भूम्यात्मने अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, २. इं चं छं जं झं ञं ईं शब्द-स्पर्श-रूप-रस-गन्धात्मने तर्जनीभ्यां स्वाहा, ३. उं टं ठं डं ढं णं ऊं श्रोत्र-त्वक्-चक्षु-जिह्वा-घ्राणात्मने मध्यमाभ्यां वषट्, ४. एं तं थं दं धं नं ऐं वाक्-पाणि-पाद-पायूपस्थात्मने अनामिकाभ्यां हुम्, ५. ओं पं फं बं भं मं

कमल पर निवास करने वाली कुण्डलिनी को मूलाधार में स्थापित कर, अपने शरीर को समस्त पापरहित पुण्य से युक्त तथा देवताराधन के योग्य हो गया है, ऐसी भावना करे ।

प्राणप्रतिष्ठा— दाहिने हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठापनमन्त्रस्य–' से लेकर, 'प्राणस्थापने विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर भूमिपर जल छोड़ दे ।

तत्पश्चात् क्रमशः ऋष्यादिन्यास कर, 'अं कं खं गं घं–' से दोनों अँगूठे 'इं चं छं जं झं ञ–'से दोनों तर्जजी, 'उं टं ठं डं ढं णं–'से दोनों मध्यमा अंगुली, 'एं तं थं दं धं–' से दोनों अनामिका, 'ओ पं फं बं भं

औं वचनादागमन-विसर्गानन्दात्मने कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ६. अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अः मनो-बुद्धि-चित्ता-ऽहङ्कारात्मने करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्।

एवं हृदयादिषु विन्यस्य, नाभ्यादि-पादान्तं आं नमः, नाभ्यादि-हृदयान्तं ह्रीं नमः। हृदयादि-शिरोऽन्तं क्रौं नमः, इति विन्यस्य। ह्रीं नमः, हृदये पूर्वादितः। १. यं त्वगात्मने नमः, २. रं असृगात्मने नमः, ३. लं मांसात्मने नमः, ४. वं मेदात्मने नमः, ५. शं अस्थ्यात्मने नमः, ६. षं मज्जात्मने नमः, ७. सं शुक्रात्मने नमः, ८. हं प्राणात्मने नमः, ९. लं जीवात्मने नमः, १०. क्षं सर्वात्मने नमः, इति विन्यस्य, मूलेन, मूर्द्धादिपादान्तं व्यापकं कृत्वा ध्यायेत्।

रक्ताम्भोधिस्थ-पोतोल्लसदरुण-सरोजाधिरूढा कराब्जैः
पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमणिगुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्।

मं-' से दोनों कनिष्ठिका, 'अं यं रं लं वं शं' से दोनों हाथ की हथेलियों का स्पर्श करे।

इसी प्रकार हृदयादि न्यास कर 'ओं नमः' पढ़कर नाभि से पैर तक, 'ह्रीं नमः' पढ़कर नाभि से हृदय तक, 'क्रों नमः' से हृदय से सिर पर्यन्त स्पर्श करना चाहिए। इसी प्रकार 'ह्रीं नमः' से, हृदय से फिर 'यं त्वगात्मने नमः' से 'क्षं सर्वात्मने नमः' पर्यन्त दस मन्त्र पढ़कर, त्वक्, असृक, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा, शुक्र, प्राण, जीवात्मा तथा सर्वात्मा को स्पर्श की भावना कर मूल मन्त्र से सिर से पैर तक व्यापक मुद्रा बनाकर प्राण शक्ति का ध्यान करे।

समुद्र में रहने वाली, रक्त वर्ण के पीत के समान खिली हुई, अरुण

बिभ्राणाऽसृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या
देवी बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परा नः ॥१॥

इति ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, हृदये हस्तं निधाय, मन्त्रं जपेत् । ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों हंसः (१४) मम प्राणा इह प्राणाः । ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हों हंसः (१४) मम जीव इह स्थितः । ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं स हों हंसः (१४) मम सर्वेन्द्रियाणि वाङ्-मनश्चक्षुः-श्रोत्र-जिह्वा-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा (६३) इति त्रिः प्रजपेत् । इति प्राणप्रतिष्ठा ।

अन्तर्मातृकान्यासः

ॐ अस्य श्रीअन्तर्मातृकान्यासस्य प्रजापतिर्ऋषिः, गायत्री-च्छन्दः, अन्तर्मातृकासरस्वती देवता हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, बिन्दवः कीलकानि, अखिलाप्तये विनियोगः ।

वर्ण के कमल पर बैठी हुई, अपने हस्त-कमल में पाश, इक्षु, कोदण्ड, अणिमादि गुणों से युक्त, अकुश, पंचबाण, असृक् पूर्ण कपाल को धारण करने वाली, तीन नेत्रों से युक्त, पीनस्तन वाली, बाल रवि के समान रक्त वर्ण वाली, परा नाम की प्राणशक्ति देवी हम लोगों का कल्याण करने वाली हों ॥१॥

इस प्रकार ध्यान कर, मानसोपचार से हृदय में पूजा कर, 'ह्सां' मन्त्र का जप करे। तदनन्तर 'ॐ आं ह्रीं क्रों–' से आरम्भ कर 'तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त मन्त्र को तीन बार पढ़कर शरीर में प्राण-प्रतिष्ठा करे।

अन्तर्मातृकान्यास—हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य–' से अखिलाप्तये विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर, भूमि पर जल छोड़ दे ।

ऋष्यादिकं विन्यस्य, 'अं कं खं० ५, आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। इं चं छं० ५, ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। उं टं ठं० ५, ऊं मध्यमाभ्यां वषट्। एं तं थं दं धं० ५, ऐं अनामिकाभ्यां हुम्। ओं पं० फं० ५, औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्। अं यं रं १० अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्। एव हृदयादिषु विन्यस्य, शिरसि वर्णाब्जं चिन्तयेत्।

व्योमेन्द्वो-रसनार्ण-कर्णिकमचां द्वन्द्वैः स्फुरत्केसरं
पत्रान्तर्गत-पञ्चवर्ग-य-श-लार्णादि-त्रिवर्गक्रमात्।
आशास्वस्त्रिषु लान्त-लाङ्गलियुजा क्षोणीपुरेणावृतं
वर्णाब्जं शिरसि स्थितं विषगदप्रध्वंसि मृत्युञ्जयम् ॥१॥

इति विचिन्त्य, तन्मध्ये सरस्वतीं ध्यायेत्—

बन्धूकाभां त्रिनेत्रां पृथुतरविलसच्छक्तिमद्रक्तवस्त्रां
पीनोत्तुङ्ग-प्रवृद्ध-स्तनजघनभरां यौवनारम्भरूढाम्।

पश्चात् ऋष्यादि न्यास कर, 'अ कं खं ५–' मन्त्र पढ़कर अँगूठे का, 'इं चं छं ५ ईं–' से दोनों तर्जनी, 'उ टं ठं ५ ऊं'–पढ़कर दोनों मध्यमा अंगुलि, 'एं तं थं दं धं० ५ ऐं–' से दोनों अनामिका, 'ओं पं फं० ५ औं–' से कनिष्ठिका अंगुलि का स्पर्श करे तथा 'अं यं रं० १० अः'—मन्त्र पढ़कर करतलकरपृष्ठ का स्पर्श करे। इसी प्रकार हृदयादि का भी न्यास करे। पश्चात् 'व्योमेन्द्वोरसनार्ण-' श्लोक पढ़कर शिर स्थान में वर्णरूप कमल का ध्यान करे, जो इस प्रकार है —

तदनन्तर उस वर्ण कमल में सरस्वती का ध्यान करे, जिनके शरीर का वर्ण बन्धूक पुष्प के समान है, जिनके तीन नेत्र हैं, जिन्होंने रक्त-वर्ण का वस्त्र धारण किया है, जिनके स्तन पीन, उत्तुंग तथा प्रवृद्ध हैं, जो जघन के भार से विनम्र हैं, जिनकी युवावस्था प्रारम्भ होने वाली है, जो

सर्वालङ्कारयुक्तां सरसिजनिलयामिन्दुवक्त्रान्तमूर्तिं
हस्तैः पाशा[1]-ऽङ्कुशा[2]ऽद्यमभय[3]-वरकरामम्बिकां तां नमामि ॥२॥

इति ध्यात्वा, पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, न्यसेत्। तथा–कण्ठस्थ-षोडशदलेषु षोडशस्वरान् 'ऐं ह्रीं श्रीं अं नमः' इत्यादि ३, 'अः नमः' इत्यन्तं विन्यस्य १, एवमनाहत-पद्मस्थ-द्वादश-दलेषु कादि-ठान्तान् २, मणिपूरस्थ दशदलेषु डादि-फान्तान् ३,

---

सभी अलंकारों से परिपूर्ण हैं, कमल में निवास करने वाली हैं, जिनका मुख चन्द्र के समान सुशोभित है, जिनके हाथों में पाश, अंकुश, अभय तथा वर मुद्रा सुशोभित हो रहे हैं, ऐसी अम्बिका को मैं नमस्कार करता हूँ ॥ १–२ ॥

साधक इस प्रकार से ध्यान कर, पंचोपचार से पूजन कर, न्यास करे। कण्ठस्थ–षोडश दल पद्म पर षोडश स्वरों'–ऐं ह्रीं श्रीं अं नमः' से आरम्भ कर 'अः नमः' इत्यन्त न्यास करे। इसी प्रकार अनाहत पद्म के बारह दलों पर 'ॐ कं नमः' से आरम्भ कर 'ॐ ठं नमः' तक, पुनः मणिपूरस्थ दस दलों के पद्म पर 'ॐ डं नमः' से आरम्भ कर,

---

१. वाममुष्टिस्थ - तर्जन्यादक्षमुष्टिस्थ - तर्जनीम् ।
संयोज्याऽङ्गुष्ठकाग्राभ्यां तर्जन्यग्रे स्वके क्षिपेद् ॥
एषा वा पाशमुद्रेति विद्वद्भिः परिकीर्तिता ।
तथा च—
अङ्गुष्ठे तर्जनी सयोज्य शेषाङ्गुलिप्रस्तरणेन पाशमुद्रा ।

२. ऋजुमध्या मध्यपर्वाक्रान्तं तर्जन्यधोमुखी ।
विज्ञेयाऽङ्कुशमुद्रेयं कुञ्चितामध्यपर्वतः ॥
अपि च —
दक्षमुष्टिगृहीतस्य वाममुष्टेस्तु मध्यमाम् ।
प्रसार्य तर्जन्याकुञ्चेत् सेयमङ्कुशमुद्रिका ॥

३. दक्षिणहस्तेन ऊर्ध्वाङ्गुलिना पताकाकरणादभयमुद्रा ।

स्वाधिष्ठानस्थ-षड्दलेषु वादि-लान्तान् ४, मूलाधारस्थ-चतुर्दलेषु वादि-सान्तान् ५, आज्ञाचक्र-द्विदले ह-क्षौ ६, न्यसेत् ।

इत्यन्तर्मातृकान्यासः ।

बहिर्मातृकान्यासः

तत्र ऋष्यादिषडङ्गान्तं पूर्ववत् कृत्वा (अत्र बहिर्मातृकासरस्वतीदेवतेति विशेषः) ध्यायेत् ।

पञ्चाशद्वर्णभेदैर्विहितवदनदोः-पादयुक्कुक्षिवक्षो-
देहां भास्वत्कपर्दाकलित-शशिकलामिन्दुकुन्दावदाताम् ।
अक्ष-स्रक्-कुम्भचिन्ता-लिखितवरकरां त्रीक्षणां पद्मसंस्था-
मच्छाकल्पामतुच्छ-स्तन-जघनभरां भारतीं तां नमामि ॥१॥

'ॐ फं नमः' तक, फिर स्वाधिष्ठानस्थ षड्दल के पद्म पर 'ॐ वं नमः' से आरम्भ कर 'ॐ लं नमः' तक तथा मूलाधारस्थ चार दल के पद्म पर 'ॐ वं नमः' से आरम्भ कर 'ॐ सं नमः' तक तथा आज्ञाचक्रस्थ द्विदल के पद्म पर, 'ॐ हं नमः' से आरम्भ कर 'ॐ क्षं नमः' तक न्यास करे। यहाँ तक अन्तर्मातृकान्यास है।

बहिर्मातृकान्यास—इसमें ऋष्यादिन्यास तथा षडंगन्यास पूर्ववत् कर, बहिर्मातृकान्यास में सरस्वती का ध्यान करे।

ध्यान—पचास वर्णों के भेद से जिसके शरीर का मुख, हाथ, पैर, कुक्षि तथा वक्षःस्थल बना हुआ है, तथा शशिकला से जिनके देदीप्यमान कपर्द का निर्माण हुआ है, तथा जो चन्द्रमा के समान स्वच्छ वर्ण वाली हैं तथा जिनके हाथों में अक्ष, स्रक्, कुम्भ तथा चिन्ता (पुस्तक) सुशोभित हो रहे हैं, जिनके तीन नेत्र हैं, जो स्वच्छ कमलासन पर विराजमान हैं, तथा जिनके स्तन एवं जघन विशाल हैं, ऐसी भारती (सरस्वती) को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥

इति ध्यात्वा न्यसेत्। मध्यमाऽनामिकाभ्यां भाले अं नमः १। तर्जनी-मध्यमाभिः मुखवृत्ते आं नमः २। मध्यमा-ऽनामिकाभ्यां दक्षवामनेत्रयोः इं नमः ३, ईं नमः ४। अङ्गुष्ठेन दक्षवामकर्णयोः उं नमः ५। ऊं नमः ६। कनिष्ठाऽङ्गुष्ठाभ्यां दक्षवामनासापुटयोः ऋं नमः, ७ ॠं नमः ८। तर्जनी-मध्यमाऽनामिकाभिः दक्षवामगण्डयोः ऌं नमः ९, ॡं नमः १०। मध्यमा-ऽनामिकाभ्यां ऊर्ध्वाधरोष्ठयोः एं नमः ११, ऐं नमः १२। अनामिकया ऊर्ध्वाधरदन्तपंक्त्योः ओं नमः १३, औं नमः १४। मध्यमया शिरसि अं नमः १५। मध्यमया मुखे अः नमः १६। सर्वाङ्गलीभिः दक्ष-भुजमूल-कूर्पर-मणिबन्ध-करतलाङ्गुल्यग्रेषु कं नमः १, खं नमः २, गं नम ३, घं नमः ४, ङं नमः ५। एवं सर्वाङ्गुलीभिः वामहस्ते चं नमः ६, छं

इस प्रकार सरस्वती का ध्यान कर न्यास करे। दोनों हाथ की मध्यमा तथा अनामिका अंगुलि से 'अं नमः' कहकर मस्तक को, तर्जनी मध्यमा तथा अनामिका अंगुलि से 'आं नमः' कहकर मुख को, मध्यमा तथा अनामिका अंगुलि से 'इं नमः' तथा 'ईं नमः' कह कर दाहिने तथा बायें नेत्र का स्पर्श करे। अँगूठे से दोनों कान का, 'उं नमः' एवं 'ऊं नमः' पढ़कर कनिष्ठा तथा अँगूठे से दोनों नासापुट का, 'ऋं नमः' एवं 'ॠं नमः' पढ़कर तर्जनी, मध्यमा तथा अनामिका से दोनों गण्डस्थलका, 'ऌं नमः' तथा 'ॡं नमः' पढ़कर मध्यमा तथा अनामिका से दोनों ओष्ठ एवं अधर पुट का, 'एं नमः' और 'ऐं नमः' पढ़कर अनामिका से ऊपर की दन्तपंक्ति का, 'ओं नमः' तथा औं नमः' पढ़कर मध्यमा से सिर का, 'अ नमः' पढ़कर, मध्यमा से मुख का, 'अः नमः' पढ़कर, सभी अँगुलियों से दाहिने भुजा का मूल, कूर्पर, मणिबन्ध, करतल अँगुलियों

नमः७, जं नमः ८, झं नमः ९, ञं नमः १०। सर्वाङ्गुलीभिः दक्षोरुमूल-जानु जङ्घा-पादतलाङ्गुल्यग्रेषु टं नमः ११, ठं नमः १२, डं नमः १३, ढं नमः १४, णं नमः १५। एवं सर्वाङ्गुलीभिः वामपादे तं नमः १६, थं नमः १७, दं नमः १८, धं नमः १९, नं नमः २०। सर्वाङ्गुलीभिः दक्षवामपार्श्वयोः पं नमः २ , फं नमः २२। अनामिका-कनिष्ठिकाभ्यां पृष्ठे बं नमः २३। सर्वाङ्गुलीभिः नाभौ भं नमः २४। जठरे मं नमः २५। हृदि यं त्वगात्मने नमः २६। दक्षांसे रं असृगात्मने नमः २७। ककुदि लं मांसात्मने नमः २८। वामांसे वं मेदात्मने नमः २९। हृदादि-दक्षवामकरान्तयोः शं अस्थ्यात्मने नमः ३०। षं मज्जात्मने नमः ३१। हृदादि-दक्षवामपादयोः सं शुक्रात्मने नमः ३२। हं प्राणात्मने नमः ३३। हृदादि-नाभ्यन्तं लं जीवात्मने नमः ३४। हृदादिमुखान्तं क्षं परमात्मने नमः ३५। समस्तमातृकामुच्चार्य व्यापकं कुर्यात्। इति।

एवमन्तर्बहिश्चैव नित्यं यो मातृकां न्यसेत्।
तस्य सिद्धिर्भवेद् देवि! नाऽत्र कार्या विचारणा ॥

इति बहिर्मातृकान्यासः।

के अग्रभाग का स्पर्श, 'कं नमः' से लेकर 'क्षं परमात्मने नमः' तक मन्त्र पढ़कर करे। इसी प्रकार समस्त (अक्षर) मातृका का उच्चारण कर व्यापक मुद्रा प्रदर्शित करे।

इस प्रकार हे देवि! जो लोग मातृका से अन्तर्न्यास तथा बहिर्न्यास करते हैं उनको अवश्य ही सिद्धि होती है, इसमें विचार की कोई बात नहीं है। इस प्रकार बहिर्मातृका न्यास समाप्त।

श्रीकण्ठमातृकान्यास।

विनियोगः—**अस्य श्रीकण्ठमातृकान्यासस्य दक्षिणामूर्तिर्ऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, अर्धनारीश्वरः शिवो देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयः, बिन्दवः कीलकानि, अभीष्टसिद्धये विनियोगः।**

ऋष्यादिन्यासः—**दक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि, गायत्रीच्छन्दसे नमो मुखे, अर्धनारीश्वरीशिवदेवतायै नमो हृदये, हल्बीजेभ्यो नमो गुह्ये, स्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः, बिन्दुकीलकेभ्यो नमो नाभौ, अभीष्टसिद्धये विनियोगः, अञ्जलौ। इति ऋष्यादिकं विन्यस्य।**

करन्यासः—**ह्सां अं कं खं गं घं ङं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्सीं इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा। ह्सूं उं टं ठं डं ढं णं**

अब श्रीकण्ठमातृकान्यास लिखते हैं, जो इस प्रकार है—दाहिने हाथ में जल लेकर, 'अस्य श्रीकण्ठमातृकान्यासस्य' से आरम्भ कर 'अभीष्टसिद्धये विनियोगः' तक विनियोग मन्त्र पढ़कर भूमि पर जल छोड़े।

इसके पश्चात् ऋष्यादिन्यास करे। 'दक्षिणामूर्तिऋषये नमः शिरसि' से सिरस्पर्श करे। 'गायत्रीच्छन्दसे नमो मुखे' से मुख छुए। 'अर्धनारीश्वरीशिवदेवतायै नमो हृदये' पढ़कर हृदय का स्पर्श करे। 'हल्बीजेभ्यो नमो गुह्ये' से गुप्तांग का स्पर्श करे। 'स्वरशक्तिभ्यो नमः पादयोः' से दोनों पैरों का स्पर्श करे। 'बिन्दुकीलकेभ्यो नमो नाभौ' पढ़कर नाभि (ढोंढ़ी) का स्पर्श करे। 'अभीष्टसिद्धये विनियोगः' से अंजलि-स्पर्श करे। इस प्रकार ऋष्यादिन्यास करना चाहिए।

तदनन्तर करन्यास करना चाहिए। 'ह्सां अं कं खं गं घं ङं आं

ऊं मध्यमाभ्यां वषट् । ह्सैं एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुम् । ह्सौं ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ह्सः अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । एवं हृदयादिषु विन्यस्य ध्यायेत् ।

सिन्दूर-काञ्चनसमोभय- भागमर्ध-
नारीश्वरं गिरिसुता-सरभूष-चिह्नम् ।
पाशा-ऽभया-ऽक्ष-वलयेष्टद-हस्तमीशं
स्मृत्वा न्यसेत् सकल-वाञ्छितवस्तु-सिद्ध्यै ॥१॥

इति ध्यात्वा, पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, बहिर्मातृकास्थानेषु न्यसेत् ।

अंगुष्ठाभ्यां नमः' से अँगूठे का स्पर्श करे । 'ह्सीं इं चं छ जं झं ञं इं तर्जनीभ्यां स्वाहा' से दोनों तर्जनी अँगुलियों को छुए। 'ह्सूं उ टं ठं डं ढं णं ऊँ मध्यमाभ्यां वषट्' से मध्यमा अँगुलियों का स्पर्श करे। 'ह्सैं एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुम्' से दोनों हाथ की अनामिका अँगुलियों का स्पर्श करे । ह्सौं ओं प फं बं भं म औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्' से कानी अँगुलियों का स्पर्श करे। 'ह्सः अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः करतलकरपृष्ठाभ्यां फट्' मन्त्र पढ़कर दोनों हाथ के तलवे का स्पर्श करे। इसी प्रकार हृदयादिन्यास भी करके 'सिन्दूर-काञ्चन-'से लेकर 'सकलवाञ्छितवस्तुसिद्ध्यै' तक ध्यान-श्लोक पढ़कर भगवान् अर्धनारीश्वर का ध्यान करे।

ध्यान— सिन्दूर, सुवर्णमिश्रितवर्णवाले, पार्वती तथा शंकर, इन दोनों के चिह्नवाले, पाश, अभयमुद्रा, अक्षमाला तथा वरद हस्त धारण किये हुए, समस्त मनोवांछित वस्तु की सिद्धि के लिए, समस्त चराचर मात्र के ईशभूत एवं भगवान् अर्धनारीश्वर का स्मरण कर, बहिर्मातृका का न्यास करे ॥ १ ॥

१. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं अं पूर्णोदरीयुक्ताय श्रीकण्ठाय नमः ।
२. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं आं विरजायुक्तायाऽनन्तेशाय नमः ।
३. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं इं शाल्मलीयुक्ताय त्रिमूर्तीशाय नमः ।
४. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ईं दीर्घभ्रुकुटीयुक्तायाऽमर्षेशाय नमः ।
५. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं उं वर्तुलाक्षीयुक्तायाऽमरेशाय नमः ।
६. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ऊं दीर्घघोणायुक्तायार्घीशाय नम ।
७. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ऋं दीर्घमुखीयुक्ताय भारभूतीशाय नमः ।
८. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ॠं गोमुखीयुक्तायाऽतिथीशाय नमः ।
९. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ऌं दीर्घजिह्वायुक्ताय स्थाण्वीशाय नमः ।
१०. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ॡं कुण्डोदरीयुक्ताय धरेशाय नमः ।
११. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं एं दीर्घकेशीयुक्ताय झिण्टीशाय नमः ।
१२. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ऐं विकृतमुखीयुक्ताय भौतिकेशाय नमः ।
१३. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ओं ज्वालामुखीयुक्ताय सद्येशाय नमः ।
१४. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं औं उल्कामुखीयुक्तायाऽनुग्रहेशाय नमः ।
१५. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं अं श्रीमुखीयुक्ताय अक्रूरेशाय नमः ।
१६. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं अः विद्यामुखीयुक्ताय महासेनेशाय नमः ।
१७. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं कं महाकालीयुक्ताय क्रोधीशाय नमः ।
१८. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं खं सरस्वतीयुक्ताय चण्डीशाय नमः ।
१९. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं गं सर्वसिद्धिगौरीयुक्ताय पञ्चान्तकेशाय नमः ।
२०. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं घं त्रैलोक्यविद्यायुक्ताय शिवोत्तमेशाय नमः ।

इस प्रकार ध्यान करके पञ्चोपचार से पूजन कर, बहिर्मातृकान्यास –'ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं अं पूर्णोदरीयुक्ताय' से लेकर 'संवर्तकेशाय नमः'

२१. ऐं ह्रां श्रीं ह्सौं ङं मन्त्रशक्तियुक्तायैकरुद्रेशाय नमः ।
२२. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं चं आत्मशक्तियुक्ताय कूर्मेशाय नमः ।
२३. ऐं ह्रीं श्र ह्सौं छं भूतमातृयुक्तायैकनेत्राय नमः ।
२४. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ज लम्बोदरीयुक्ताय चतुराननाय नमः ।
२५. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं झं द्राविणीयुक्तायाऽजेशाय नमः ।
२६. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ञं नागरीयुक्ताय सर्वेशाय नमः ।
२७. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ट खेचरीयुक्ताय सोमेशाय नमः ।
२८. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ठं मञ्जरीयुक्ताय लाङ्गलीशाय नमः ।
२९. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं डं रूपिणीयुक्ताय दारुकेशाय नमः ।
३०. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ढं शर्वाणीयुक्तायाऽर्धनारीशाय नमः ।
३१. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं णं कोटरीयुक्तायोमान्तकेशाय नमः ।
३२. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं तं पूतनायुक्तायाषाढीशाय नमः ।
३३. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं थं भद्रकालीयुक्ताय दण्डीशाय नमः ।
३४. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं दं योगिनीयुक्तायात्रीशाय नमः ।
३५. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं धं शङ्खिनीयुक्ताय मीनेशाय नमः ।
३६. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं न तर्जनीयुक्ताय मेषेशाय नमः ।
३७. ऐं ह्रा श्रीं ह्सौं पं कालरात्रियुक्ताय लोहितेशाय नमः ।
३८. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं फं कुब्जिकायुक्ताय शिखीशाय नमः ।
३९. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं ब कपर्दीयुक्ताय छगलण्डेशाय नमः ।
४०. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं भं वज्रिणीयुक्ताय द्विरण्डेशाय नमः ।
४१. ऐं ह्रीं श्रीं ह्सौं मं जयायुक्ताय महाकालेशाय नमः ।

तत्र तत्तत्स्थानों में मन्त्र पढ़कर, न्यास कर प्रणाम करे ।

४२. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं यं सुमुखीयुक्ताय बालीशाय नमः ।
४३. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं रं रेवतीयुक्ताय भुजङ्गेशाय नमः ।
४४. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं लं माधवीयुक्ताय पिनाकीशाय नमः ।
४५. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं वं वारुणीयुक्ताय खड्गीशाय नमः ।
४६. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं शं वायवीयुक्ताय बकेशाय नमः ।
४७. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं षं रक्षोवधीयुक्ताय श्वेतेशाय नमः ।
४८. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं सं सहजायुक्ताय भृग्वीशाय नमः ।
४९. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं हं लक्ष्मीयुक्ताय लकुलीशाय नमः ।
५०. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं लं व्यापिनीयुक्ताय शिवेशाय नमः ।
५१. ऐं ह्रीं श्रीं ह्स्रौं क्षं महामायायुक्ताय संवर्तकेशाय नमः ।

इति विन्यस्य प्रणमेत् । इति श्रीकण्ठादिमातृकान्यासः ।

हनुमन्मन्त्रन्यासाः

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीहनुमन्मन्त्रस्य श्रीरामचन्द्रऋषिः, जगतीच्छन्दः, हनुमान् देवता, ह्रौं बीजम्, ह्स्फ्रें शक्तिः, हनुमते कीलकम्, इष्टसिद्ध्यर्थं जपे विनियोगः ।

ऋष्यादिन्यासः—श्रीरामचन्द्रऋषये नमः शिरसि ।

इस प्रकार श्रीकण्ठादिमातृकान्यास समाप्त ।

अब हनुमान् जी के मन्त्रन्यास लिखते हैं ।

विनियोग—हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीनुमन्मन्त्रस्य' से प्रारम्भ कर 'इष्टसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' तक पढ़कर भूमि पर जल गिरा दे ।

ऋष्यादिन्यास—'श्रीरामचन्द्रऋषये नमः शिरसि' पढ़कर मस्तक का

जगतीच्छन्दसे नमो मुखे । हौं बीजाय नमो गुह्ये । हनुमते कीलकाय नमो नाभौ । इष्टार्थे विनियोगाय नमः अञ्जलौ।

इति ऋष्यादिन्यासः।

करषडङ्गन्यासः—ॐ हौं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ह्स्फ्रें तर्जनीभ्यां नमः । ओं ख्फ्रें मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ह्स्त्रौं अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ह्स्ख्फ्रें कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ह्सौं करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ हौं हृदयाय नमः । ॐ ह्स्फ्रें शिरसे स्वाहा । ॐ ख्फ्रें शिखायै वषट् । ॐ ह्सौं कवचाय हुम् । ॐ ह्स्ख्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ह्सौं अस्त्राय फट् । इति करषडङ्गन्यासौ कृत्वा ।

स्पर्श करे। 'जगतीच्छन्दसे नमो मुखे' पढ़कर मुख का स्पर्श करे। 'हौं बीजाय नमो गुह्ये' से गुह्य (गुप्त) अंग का स्पर्श करे। 'हनुमते कीलकाय नमो नाभौ' से नाभि का स्पर्श करे। 'इष्टार्थे विनियोगाय नमः अञ्जलौ' पढ़कर अंजलि का स्पर्श करे।

करषडंगन्यास—'ॐ हौं अंगुष्ठाभ्यां नमः' से अँगूठे का स्पर्श करना चाहिए। ॐ ह्स्फ्रें तर्जनीभ्यां नमः' पढ़कर तर्जनी अँगुलियों को छुए। 'ॐ ख्फ्रें मध्यमाभ्यां नमः' से मध्यमा अँगुली का स्पर्श करे। 'ॐ ह्स्त्रौं अनामिकाभ्यां नमः' से अनामिका अँगुली का स्पर्श करे। 'ह्स्ख्फ्रें कनिष्ठिकाभ्यां नमः' से कानी अँगुली का स्पर्श करे। 'ॐ ह्सौं करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः' से दोनों हाथों की हथेलियों और पीठों को छुए। 'ॐ हौं हृदयाय नमः' से हृदय, ॐ 'ह्स्फ्रें शिरसे स्वाहा' से सिर, 'ॐ ख्फ्रें शिखायै वषट्' पढ़कर शिखा, 'ॐ ह्सौं कवचाय हुम्' से दोनों हाथों की भुजाओं तथा 'ॐ ह्स्ख्फ्रें नेत्रत्रयायवौषट्' से दोनों नेत्रों को स्पर्श करे, और 'ॐ ह्सौं अस्त्राय फट्' मन्त्र पढ़कर दाहिने हाथकी तर्जनी

वर्णविन्यासः— मूर्ध्नि—ॐ ह्रौं नमः १ । ललाटे—ॐ ह्स्फ्रें नमः २ । दृशोः—ॐ ख्फ्रें नमः ३ । मुखे— ॐ ह्स्रौं नमः ४ । कण्ठे—ॐ हस्ख्फ्रें नमः ५ । बाह्वोः--ॐ ह्सौं नमः ६ । हृदि-ॐ हं नमः ७ । कुक्ष्योः--ॐ नुं नमः ८ । नाभौ--ॐ मं नमः ९ । लिङ्गे--ॐ तें नमः १० । जान्वोः--ॐ नं नमः ११ । पादयोः--ॐ मं नमः १२ । इति वर्णविन्यासः ।

पदन्यासः--मूर्ध्नि--ॐ ह्रौं नमः १ । ललाटे--ॐ ह्स्फ्रें नमः २ । मुखे-- ॐ ख्फ्रें नमः ३ । हृदि--ॐ ह्स्रौं नमः ४ । नाभौ--ॐ ह्स्ख्फ्रें नमः ५ । ऊर्वोः--ॐ ह्सौं नमः ६ । जङ्घयोः--ॐ हनुमते नमः ७ । पादयोः--ॐ नमः ८ । इति पदन्यासः ।

मूलेन व्यापकं कुर्यात् । इति मूलन्यासः ।

पीठन्यासः--अथ पीठन्यास कुर्यात् । यथा--स्वदेहं पीठमय

तथा मध्यमा से बायें हाथ से ताली बजा दे । इस प्रकार करषडंगन्यास करे ।

वर्णविन्यास—'ॐ ह्रों नमः' पढ़कर सिर, 'ॐ हस्फ्रें नमः' से ललाट, 'ॐ ख्फ्रें नमः' से आँख, 'ॐ हस्त्रौं नमः' से मुख, 'ॐ हस्ख्फ्रें नमः' मन्त्र से कण्ठ, 'ॐ ह्सौं नमः' से दोनों बाहु, 'ॐ हं नमः' से हृदय, 'ॐ नुं नमः से दोनों कुक्षि, 'ॐ मं नमः' से नाभि, 'ॐ तें नमः' से लिंग, 'ॐ नं नमः' से दोनों जानु (घुटना) तथा 'ॐ मं नमः' से दोनों पैर का स्पर्श करे ।

पदन्यास—इसी प्रकार १. 'ॐ ह्रौं नमः' से लेकर '८ ॐ नमः' तक मन्त्र पढ़कर सिर से पैर तक के प्रत्येक अंगों का स्पर्श करे । इस प्रकार मूल मन्त्र पढ़कर सर्वांग न्यास करे ।

पश्चात् पीठन्यास करे, जो इस प्रकार है—अपने सम्पूर्ण शरीर में

विचिन्त्य न्यसेत् । आधारे--मं मण्डूकाय नमः १ । लिङ्गे--कां कालाग्निरुद्राय नमः २ । नाभौ--कूं कूर्माय नमः ३ । हृदये--आं आधारशक्तये नमः ४ । तत्र चोपर्युपरि--मूं मूलप्रकृत्यै नमः ५ । वं वराहाय नमः ६ । अं अनन्ताय नमः ७ । पृं पृथिव्यै नमः ८ । अं अमृतसागराय नमः ९ । तन्मध्ये--रं रत्नद्वीपाय नमः १० । हें हेमगिरये नमः ११ । नं नन्दनोद्यानाय नमः १२ । तत्र--कं कल्पवृक्षेभ्यो नमः १३ । तन्मध्ये-मं मणिभूषित-भूतलाय नमः १४ । तत्र-रं रत्नमण्डपाय नमः १५ । रं रत्नसिंहासनाय नमः १६ । दक्षांसे-ध धर्माय नमः १७ । वामांसे-ज्ञां ज्ञानाय नमः १८ । वामोरौ-वैं वैराग्याय नमः १९ । दक्षोरौ-ऐं ऐश्वर्याय नमः २० । मुखे-अ अधर्माय नमः २१ । वामपार्श्वे--अं अज्ञानाय नमः २२ । नाभौ--अं अवैराग्याय नमः २३ । दक्षपार्श्वे--अं अनैश्वर्याय नमः २४ । पुनर्हृदये--आं आनन्दमयकन्दाय नमः २५ । सं संविन्नालाय नमः २६ । विं विश्वमयपद्माय नमः २७ । प्रं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः २८ । विं विकारमय-केसरेभ्यो नमः २९ । पं पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकायै नमः ३० । कर्णिकायाम्--अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः ३१ । उं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः ३२ । मं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः ३३ । सं सत्त्वाय नमः ३४ । रं रजसे नमः ३५ । तं तमसे नमः ३६ । आं आत्मने नमः ३७ । अं अन्तरात्मने नमः ३८ । प परमात्मने नमः ३९ ।

पीठमय की भावना से 'मं मण्डूकाय नमः (१)' से आरम्भ कर

ह्रीं ज्ञानात्मने नमः ४० । मां मायातत्त्वाय नमः ४१ । कं कलातत्त्वाय नमः ४२ । विं विद्यातत्त्वाय नमः ४३ । पं परतत्त्वाय नमः ४४ । इति स्वहृदये विन्यस्य, हृत्कमलपत्रेषु मध्ये च पीठशक्तीर्न्यसेत् । विमलायै नमः ४५ । उत्कर्षिण्यै नमः ४६ । ज्ञानायै नमः ४७ । क्रियायै नमः ४८ । योगायै नमः ४९ । प्रह्वायै नमः ५० । सत्यायै नमः ५१ । ईशानायै नमः ५२ । अनुग्रहायै नमः ५३ । ॐ ह्रीं नमो भगवते सकलगुणात्मशक्तियुक्तायाऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः ५४ । अनेन व्यापकं कृत्वा, स्वहृदये श्रीहनुमन्तं ध्यायेत् ।

बालार्कायुत-तेजसं त्रिभुवन-प्रक्षोभकं सुन्दरं
सुग्रीवादि-समस्त-वानरगणैराराधितं साञ्जलिम् ।
नादेनैव समस्त-राक्षस-गणान् संत्रासयन्तं प्रभुं
श्रीमद्रामपदाम्बुज-स्मृतिरतं ध्यायामि वातात्मजम् ॥१॥

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः १ । हं आकाशा-

'योगपीठात्मने नमः ५४' तक पढ़कर उल्लिखित मन्त्रों से अंगस्पर्श तथा पीठस्थान पर पुष्प छोड़कर व्यापक मुद्रा प्रदर्शित करे। और अपने हृदय में श्रीहनुमान् जी का 'बालार्कायुततेजसं' से 'ध्यायामि वातात्मजम्' तक ध्यान-श्लोक पढ़कर ध्यान करे ।

श्लोकार्थ — बालसूर्य के समान तेजवाले, त्रिलोक को क्षुब्ध करनेवाले, सुन्दर एवं हाथ जोड़े हुए, सुग्रीवादि समस्त वानरगणों से सुपूजित और अपने भयंकर हुंकार से ही समस्त राक्षसगणों को भयभीत करनेवाले तथा मर्यादा पुरुषोत्तम, इष्टदेव भगवान् राम की चरण-सेवा में निरन्तर रत रहनेवाले, वायुपुत्र श्रीहनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥ १ ॥

तदनन्तर 'लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि नमः' से गन्ध, 'हं

त्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः २ । यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि नमः ३ । रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः ४ । वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः ५ । शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः ६ । इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, यथाशक्ति मूलमन्त्रं जपित्वा, पुनर्ऋष्यादिकं विधाय, कृत जपं देवस्य दक्षकरे समर्पयेत् । यथा--

गुह्यातिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव ! त्वत्प्रसादान्महेश्वर ! ॥१॥

इति जपं समर्प्य, श्रीगुरूपदिष्टमार्गेण मनसाऽर्चनं कृत्वा, समर्पयेत् ।

स्वागतं देवदेवेश ! सन्निधो भव रुद्रज ! ।
गृहाण मानसीं पूजां यथार्थपरिभाविताम् ॥ १ ॥

आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि नमः' पढ़कर पुष्प, 'यं वाय्वात्मकं धूप समर्पयामि नमः' से धूप, 'रं वह्न्यात्मकं दीपं समर्पयामि नमः' से दीप, 'वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि नमः' से भोग तथा 'शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि नमः' से ताम्बूल (पान) अर्पण करे। इस प्रकार पञ्चोपचार से श्रीहनुमान् जी की पूजा कर, अपनी शक्ति के अनुसार मूलमन्त्र का जप कर, पुनः ऋष्यादिन्यास कर, अपने किये हुए जप को देवता के दाहिने हाथ में 'गुह्याति-गुह्यगोप्ता—'इस श्लोक को पढ़कर समर्पण करे।

श्लोकार्थ--हे देव ! गुप्त से गुप्त मेरे द्वारा किये हुए जप को आप स्वीकार करें। हे महेश्वर ! आपके प्रसाद से ही मुझे सिद्धि प्राप्त हो ॥१।

इस प्रकार जप को निवेदन कर, गुरु के बताये हुए मार्ग से मानसिक पूजा कर, 'स्वागतं देवदेवेश—' इस श्लोक से मानसिक पूजा को समर्पित करे।

श्लोकार्थ—हे देवदेवेश, रुद्रज ! आपका स्वागत है। आप मेरे

इति समर्प्य, क्षणं तद्गतमानसः कुण्डलीमुत्थाप्य, ब्रह्मरन्ध्रे संयोज्य, तदुत्पन्नामृत-धाराभिर्हृदय-कमलमध्यगतं श्रीहनुमन्तं सन्तर्प्य, कुण्डलीं मूलाधारे संस्थाप्य, मूलं-यथा शक्ति जपित्वा प्रणमेत् । इत्यन्तर्यजनविधिः ।

बहिर्यागविधिः

तत्राऽऽदौ सङ्कल्पं कुर्यात् । 'ॐ तत्सदद्येत्यादि अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोऽमुकशर्माऽहं श्रीहनुमत्प्रीत्यर्थं यथासम्भवैर्द्रव्यैर्यथाशक्त्या तन्त्रोक्तविधानेनाऽऽवरणपूजन करिष्ये ।' इति सङ्कल्प्य, पात्रस्थापनं कुर्यात् । स्ववामाग्रे ऊर्ध्वाग्र-त्रिकोण-षट्कोण-वृत्त-चतुरस्रमण्डलं गन्धोदकेन मत्स्यमुद्रया विधाय, शङ्खमुद्रयाऽवष्टभ्य श्रीहनुमत्सामान्या-

---

सान्निध्य में आयें, तथा मेरे द्वारा वास्तविक रूपसे की हुई इस मानसी पूजा को आप स्वीकार करें ॥१॥

इस प्रकार समर्पण कर, क्षणभर देवता में दत्तचित्त होकर, कुण्डलिनी को जगाकर ब्रह्मरन्ध्र में संयुक्त कर, उससे उत्पन्न अमृतधारा से हृदयरूपी कमलमध्य में श्री हनुमान् जी को सम्यक् प्रकार से तृप्त कर, मूलाधार में स्थापित कर, यथाशक्ति मूलमन्त्र का जप कर प्रणाम करे।

इस प्रकार अन्तर्यजनविधि समाप्त ।

बहिर्यागविधि—सर्वप्रथम जल, अक्षत, पुष्प लेकर 'ॐ तत्सदद्येत्यादि–' से आरम्भ कर, 'तन्त्रोक्तविधानेनाऽऽवरणपूजनं करिष्ये' तक संकल्प वाक्य पढ़कर, संकल्प कर पात्रस्थापन करे।

अपने वामभाग में ऊपर अग्रभागवाले, त्रिकोण, षट्कोण, वृत्त, चतुरस्र (चौकोर) मण्डल को मत्स्यमुद्रा दिखाकर गन्ध, जल से पूजन

र्घ्यमण्डलाय नमः, इति सम्पूज्य, अग्न्यादिषट्कोणेषु षडङ्गानि सम्पूज्य, तत्र 'फट्' इति प्रक्षालितमाधारं संस्थाप्य, 'मं वह्नि-मण्डलाय दशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्रासनाय नमः २४ ।' इति सम्पूज्य, आधारे पूर्वादिषु दशाग्निकलाः पूजयेत् । य धूम्रार्चि-कलायै नमः १ । रं ऊष्माकलायै नमः २ । लं ज्वलिनीकलायै नमः ३ । वं ज्वालिनीकलायै नमः ४ । शं विस्फुलिङ्गिनीकलायै नमः ५ । षं सुश्रीकलायै नमः ६ । सं सुरूपाकलायै नमः ७ । हं कपिलाकलायै नमः ८ । लं हव्यवहाकलायै नमः ९ । क्षं कव्यवहाकलायै नमः १० । इति सम्पूज्य,

'ॐ क्लीं महाजलचराय हुँ फट् स्वाहा । पाञ्चजन्याय नमः २० ।' इति मन्त्रेण क्षालितं शङ्खं तत्र संस्थाप्य, 'अं सूर्य-मण्डलाय द्वादशकलात्मने सामान्यार्घ्यपात्राय नमः २३' इति सम्पूज्य, पात्रे स्वाग्रादि-प्रादक्षिण्येन द्वादशसूर्यकलाः पूजयेत् ।

कर, शङ्खमुद्रा से स्थापित कर, 'सामान्यार्घ्यमण्डलाय नमः' से श्री-हनुमान् जी की पूजा कर, अग्न्यादि षट्कोणों में षडंग का पूजन कर, और 'फट्' इस प्रकार कहते हुए शुद्ध आधार को स्थापित कर. 'मं वह्निमण्डलाय-' मन्त्र से पूजन कर, आधार में पूर्व आदि दशाग्निकला का 'यं धूमार्चिकलायै नमः (१)' से आरम्भ कर 'क्षं कव्यवहाकलायै नमः (१०)' तक मन्त्र पढ़कर पूजन करे।

पश्चात् 'ॐ क्लीं महाजलचराय हुँ फट् स्वाहा-' इस मन्त्र से धोये हुए शंख को वहाँ रख कर 'अं सूर्यमण्डलाय-' मन्त्र पढ़कर उसकी पूजा कर, पात्र पर अपने से आगे प्रदक्षिणा क्रम से द्वादश सूर्य कलाओं की

कं-भं तापिनीकलायै नमः १ । खं-बं तापिनीकलायै नमः २ । गं-फं धूम्राकलायै नमः ३ । घं-पं मरीचिकलायै नमः ४ । ङं-नं ज्वालिनीकलायै नमः ५ । चं-धं रुचिकलायै नमः ६ । छं-दं सुषुम्णाकलायै नमः ७ । जं-थं भोगदाकलायै नमः ८ । झं-तं विश्वाकलायै नमः ९ । ञं-णं बोधिनीकलायै नमः १० । टं-ढं धारिणीकलायै नमः ११ । ठं-डं क्षमाकलायै नमः १२ ।' इति सूर्यकलाः सम्पूज्य, 'क्षं लं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं ॡं ऌं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं ५१' इति विलोममातृकां मूलमन्त्रं विलोमं च पठन् जलमापूर्य, 'ॐ सोममण्डलाय षोडशकलात्मने सामान्यार्घ्यामृताय नमः' इति सम्पूज्य, जले षोडशचन्द्रकलाः पूजयेत् । अं अमृतकलायै नमः १ । आं मानदाकलायै नमः २ । इं पूषाकलायै नमः ३ । ईं तुष्टिकलायै नमः ४ । उं पुष्टिकलायै नमः ५ । ऊं रतिकलायै नमः ६ । ऋं धृतिकलायै नमः ७ । ॠं शशिनीकलायै नमः ८ । ऌं चन्द्रिकाकलायै नमः ९ । ॡं कान्तिकलायै नमः १० । एं ज्योत्स्नाकलायै नमः ११ । ऐं श्रीकलायै नमः १२ । ओं प्रीतिकलायै नमः १३ । औं अङ्गदाकलायै नमः १४ । अं पूर्णा-

---

पूजा करे। फिर 'कं-भं तापिनीकलायै नमः १-' से लेकर ठं-डं क्षमाकलायै नमः १२' तक मन्त्र पढ़कर सूर्यकला की पूजा कर, 'क्षं-लं हं-सं-' से विलोम मातृका तथा मूल मन्त्र का भी विलोम पाठ करते हुए पात्र में जल भर कर, 'ॐ सोममण्डलाय०' इससे पूजन कर, पुनः

कलायै नमः १५। अः पूर्णामृताकलायै नमः १६। इति सम्पूज्य,

गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति !।
नर्मदे सिन्धु कावेरि ! जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥१॥

इत्यङ्कुशमुद्रया सूर्यमण्डलात्तीर्थान्यावाह्य, 'हुँ' इत्यवगुण्ठ्य[1], मूलेनाऽष्टधाऽभिमन्त्र्य, 'फट्' इति छोटिकया संरक्ष्य, पूर्वोक्त-षडङ्गुलं सम्पूज्य, 'नमः' इति सम्पूज्य, मूलमष्टधा जपन्, मत्स्यमुद्रयाऽऽच्छादयेत्। पुनः 'वं' इति धेनुमुद्रयाऽमृतीकृत्य,[2] संरोधिन्या

जल में 'अं अमृताकलायै नमः १' से लेकर, 'अः पूर्णामृताकलायै नमः १६' तक मन्त्र पढ़कर पूजन करे।

तदनन्तर 'गंगे च यमुने चैव' से आरम्भ कर 'सन्निधिं कुरु ॥१॥' तक श्लोक पढ़कर तीर्थों का आवाहन करे।

श्लोकार्थ--हे गंगे, हे यमुने, हे गोदावरि, हे सरस्वति, हे नर्मदे, हे सिन्धु, कावेरि, आप इस जल में निवास करो ॥१॥

अंकुश मुद्रा प्रदर्शित कर, सूर्यमण्डल से तीर्थों को आवाहन कर, 'हुँ' इससे अवगुण्ठन कर, आठ बार मूलमन्त्र को पढ़ता हुआ, उस जल को अभिमन्त्रित करके, 'फट्' इसको पढ़कर छोटिका मुद्रा से संरक्षित करे और पूर्वोक्त षडंग को 'नमः' इससे पूजा कर, मूलमन्त्र का आठ बार जप करता हुआ, मत्स्यमुद्रा से उस पात्र को आच्छादित करे। पुनः 'वं' इसको पढ़कर, धेनुमुद्रा से उस जल को अमृत बनाकर

---

१. अवगुण्ठनमुद्रा—अवगुण्ठनमुद्रा तु दीर्घाधोमुखतर्जनी।
मुष्टिबद्धस्य हस्तस्य सव्यस्य भ्रामयेच्च ताम् ॥
—मेरु०, अ० प्र०, श्लो० ३५

२. संरोधिनीमुद्रा— अङ्गुष्ठगर्भिणी सैव सन्निरोधे समीरिता।

निरुध्य, [1]शङ्ख-[2]मुसल-[3]चक्र-मुद्राः प्रदर्श्य, [4]महामुद्रया परमीकृत्य, लिङ्गमुद्रया प्रदर्श्य नमेत् । इति सामान्यार्घ्यशङ्खस्थापनम् ।

प्रोक्षणीपात्रस्थापनम्—ततः शङ्खदक्षभागे अनेनैव विधिना प्रोक्षणीपात्रं संस्थाप्य, तज्जलेनाऽऽत्मानं[5] पूजासामग्रीं च मूलगायत्रीं जपन् प्रोक्षयेत् । इति प्रोक्षणीपात्रस्थापनम् ।

संरोधिनीमुद्रा द्वारा उसे आच्छादित कर शख, मुसल, चक्र मुद्राओं को दिखावे, पश्चात् महामुद्रा तथा लिंगमुद्रा दिखाकर प्रणाम करे ।

इस प्रकार सामान्यार्घ्य शंखस्थापन समाप्त ।

प्रोक्षणीपात्रस्थापन—तत्पश्चात् शंख की दाहिनी ओर इसी विधि से प्रोक्षणीपात्र को स्थापित कर उसके जल से अपने ऊपर तथा पूजा-सामग्री पर मूलगायत्री मन्त्र को पढ़ता हुआ छिड़के ।

इस प्रकार प्रोक्षणीपात्र का स्थापन समाप्त ।

---

१. शङ्खमुद्रा—वामाङ्गुष्ठं तु संगृह्य दक्षिणेन तु मुष्टिना ।
कृत्वोत्तानं तथा मुष्टिमङ्गुष्ठं तु प्रसारयेत् ॥
वामाङ्गुल्यस्तथा श्लिष्टाः संयुक्ताः सुप्रसारिताः ।
दक्षिणाङ्गुष्ठके लग्ना मुद्रा शङ्खस्य भूतिदा ॥

२. मुसलमुद्रा—मुष्टिं कृत्वा तु हस्ताभ्यां वामस्योपरि दक्षिणम् ।
कुर्यात् मुसलमुद्रेयं सर्वविघ्न-विनाशिनी ॥

३. चक्रमुद्रा—हस्तौ तु सम्मुखौ कृत्वा संलग्नौ सुप्रसारितौ ।
कनिष्ठाङ्गुष्ठकौ लग्नौ मुद्रैषा चक्रसंज्ञिता ॥

४. महामुद्रा—अन्योन्यग्रथिताङ्गुष्ठौ प्रसारित-कराङ्गुलिः ।
महामुद्रेयमुदिता परमीकरणं बुधैः ॥

५. कलशं शङ्ख-घण्टे च पाद्यार्घ्या-ऽऽचमनीयकम् ।
सम्पूज्य प्रोक्ष्य चाऽऽत्मानं पूजासम्भारमेव च ॥—धर्मसारे

पात्रस्थापनम्

तद्दक्षिणतः पाद्या-ऽर्घ्या-ऽऽचमनीय-मधुपर्क-पात्राणि शङ्खवत् स्थापयेत्। तत्र तत्तत्पात्राणामूहः कार्यः। तेषु च वस्तूनि निक्षिपेत्। यथा--श्यामाक-विष्णुक्रान्ता-ऽब्ज-दूर्वा पाद्यपात्रे, दूर्वा-तिल-दर्भाग्र-सर्षप-यव-पुष्पा-ऽक्षतादीनि अर्घ्यपात्रे, लवङ्ग-जाति-कङ्कोलान्नाचमनपात्रे, दध्याज्य-मधूनि मधुपर्कपात्रे च निक्षिपेत्। इति पात्रस्थापनम्।

पीठपूजा

अथ भूर्जपत्रे फलके स्वर्णादिपत्रे स्थण्डिले वा शिवाष्ट-गन्धेन लिखिते स्वर्ण-स्फटिकादि-निर्मिते यन्त्रे बाणलिङ्गे शालिग्रामे ध्यानोक्त-निर्मित-हनुमन्मूर्तौ वा पीठपूजां कुर्यात्। पीठं शङ्खोदकेन त्रिः प्रोक्ष्य, यजेत्।

पात्रस्थापन— प्रोक्षणीपात्र के दक्षिण तरफ पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, मधुपर्कपात्रों को शंख की तरह स्थापित करे। वहाँ उन-उन पात्रों में तत्तद् वस्तुएँ छोड़े, जैसे—तिन्नी का चावल, विष्णुक्रान्त, कमल पुष्प और दूर्वा, पाद्यपात्र में दूर्वा, तिल, कुशाग्र, सरसों, यव, पुष्प तथा अक्षत, अर्घ्यपात्र में लवंग, जाती और कंकोल, आचमनपात्र में दही, घी और मधु, मधुपर्कपात्र में स्थापित करे।

इस प्रकार पात्रस्थापन समाप्त।

पीठपूजा— इसके बाद भोजपत्र, पीढ़ा, स्वर्णपत्र या वेदी पर ही शिवाष्टगन्धसे लिखे गये स्वर्ण या स्फटिक निर्मित यन्त्र बाणलिंग, शालिग्राम या ध्यानोक्त निर्मित हनुमन्मूर्ति में पीठपूजा करे। शंख के जल से पीठ को तीन बार प्रोक्षण कर पूजन करे।

'मं मण्डूकाय नमः १। कां कालाग्निरुद्राय नमः २। कूं कूर्माय नमः ३। आं आधारशक्तये नमः ४।' उपर्युपरि-'मूं मूलप्रकृत्यै नमः ५। वं वाराहाय नमः ६। अं अनन्ताय नमः ७। पृं पृथिव्यै नमः ८। अं अमृतसागराय नमः ९।' तन्मध्ये-'रं रत्नदीपाय नमः १०। हें हेमगिरये नमः ११। नं नन्दनोद्यानाय नमः १२। कं कल्पवृक्षेभ्यो नमः १३। मं मणिभूषितभूतलाय नमः १४। तत्र-रं रत्नमण्डपाय नमः १५। रं रत्नसिंहासनाय नमः १६। अग्निकोणे-धं धर्माय नमः १७। नैर्ऋत्यकोणे-ज्ञां ज्ञानाय नमः १८। वायुकोणे-वैं वैराग्याय नमः १९। ईशानकोणे-ऐं ऐश्वर्याय नमः २०। पूर्वे-अं अधर्माय नमः २१। दक्षिणे-अं अज्ञानाय नमः २२। पश्चिमे-अं अवैराग्याय नमः २३। उत्तरे-अं अनैश्वर्याय नमः २४। पीठमध्ये-आं आनन्दमयकन्दाय नमः २५। सं संविन्नालाय नमः २६। विं विश्वमयपद्माय नमः २७। प्रं प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः २८। विं विकारमयकेसरेभ्यो नमः २९। पं पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकायै नमः ३०। कर्णिकायाम्-अं द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः ३१। उं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः ३२। मं दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः ३३। सं सत्त्वाय नमः ३४। रं रजसे नमः ३५। तं तमसे नमः ३६। आं आत्मने नमः ३७। अं अन्तरात्मने नमः ३८। पं परमात्मने नमः ३९। ज्ञां ज्ञानात्मने नमः ४०। मां मायातत्त्वाय

'मं मण्डूकाय नमः १.' से आरम्भ कर, 'प परतत्त्वाय नमः ४४.'

नमः ४१। कं कलातत्त्वाय नमः ४२। विं विद्यातत्त्वाय नमः ४३। पं परतत्त्वाय नमः ४४। पत्रेषु मध्ये च पीठशक्तीर्ध्यायेत्।

श्वेता कृष्णाऽरुणा पीता श्यामा रक्ता सिताऽसिताः।
रक्ताम्बराभयधरा ध्येयाः स्युः पीठशक्तयः ॥१॥

इति ध्यात्वा पूजयेत्। विमलायै नमः ४५। उत्कर्षिण्यै नमः ४६। ज्ञानायै नमः ४७। क्रियायै नमः ४८। योगायै नमः ४९। प्रह्वायै नमः ५०। सत्यायै नमः ५१। ईशानायै नमः ५२। अनुग्रहायै नमः ५३। ॐ ह्रीं नमो भगवते सकल-गुणात्म-शक्तियुक्ताया-ऽनन्ताय योगपीठात्मने नमः ५४। इति गन्धा-ऽक्षत-पुष्पैः सम्पूज्य, श्रीहनुमन्तं पञ्चामृतैः संस्नाप्य, वैदिक-तान्त्रिक मन्त्रपठनपूर्वकं शुद्धोदकैरभिषिञ्च्य, गन्धा-ऽक्षतपुष्पैरलङ्कृत्य, पीठे संस्थापयेत्। इति पीठपूजा।

पर्यन्त मन्त्र पढ़ता हुआ पुष्प लेकर ऊपर, मध्य, आग्नेयादि कोण से तत्तन्मन्त्रों तथा 'श्वेता कृष्णा-ऽरुणा–' श्लोक पढ़कर समस्त पीठशक्तियों का ध्यान करे।

श्लोकार्थ—श्वेता, कृष्णा, अरुणा, पीता, श्यामा, रक्ता, सिता, असिता, रक्ताम्बरा तथा अभयधरा—इन पीठ शक्तियों का ध्यान कर पूजन करे ॥१॥

इस प्रकार ध्यान कर 'विमलायै नमः ४५' से 'योगपीठात्मने नमः ५४' पर्यन्त मन्त्र पढ़कर गन्ध, अक्षत और पुष्प से पूजा करे तथा श्रीहनुमान् जी को पंचामृत से स्नान कराकर, वैदिक या तान्त्रिक मन्त्रों को पढ़ता हुआ शुद्ध जल से अभिषिक्त कर, गन्ध, अक्षत तथा पुष्पादि से पूजित कर हनुमन्मूर्ति को पीठ पर स्थापित करे।

इस प्रकार पीठपूजा समाप्त।

अथाऽञ्जलौ पुष्पाण्यादाय, देवं ध्यात्वा, 'ॐ ह्रीं' मूलं समुच्चरन् मूलाधारब्रह्मरन्ध्रे सदाशिवाख्य-चन्द्रमण्डले षट्चक्र-भेदक्रमेणाऽनुप्रविष्टां कुण्डलिनीं तदेकीभूतां चिरं विभाव्य, तत्रस्थाऽमृतेनाऽऽप्लुतं तदुभयं परप्रकाशैकरूपं ध्यायन्, नासिका-रन्ध्रद्वारा शिवशक्त्यात्मकं तत्तेजः पुष्पाञ्जलावानीय, तत्पुष्पाणि यन्त्रमध्यस्थ-बिन्दौ कल्पितमूर्तिमूर्ध्नि संयोज्य, अन्तःपूजितं तेजोमयं देवं बहिःकल्पित-मूर्तिप्रविष्टं सावयवं ध्यायन् पठेत् ।

आत्मसंस्थमजं शुद्धं त्वामहं परमेश्वर ! ।
अरण्यामिव हव्यांशं मूर्तावावाहयाम्यहम् ॥१॥
देवेश ! भक्तिसुलभ ! सर्वाभरणसंयुत ! ।
यावत् त्वां पूजयिष्यामि तावत् त्वं सुस्थिरो भव ॥२॥

'श्रीहनुमन् इहावाहितो भव' इत्यावाहिनीमुद्रयाऽऽवाह्य[1] ।

तत्पश्चात् अंजलि में पुष्प लेकर, श्रीहनुमान् जी का ध्यान कर, 'ॐ ह्रीं' इस मूलमन्त्र को पढ़ता हुआ मूलाधार ब्रह्मरन्ध्र में सदाशिव नाम के चन्द्रमण्डल में षट्चक्रभेदक्रम से उसमें निरन्तर एकीभूत कुण्डलिनी को जगाकर, उसमें स्थित अमृत जल से सिक्त, उन दोनों परप्रकाशैक रूप को ध्यान करता हुआ, नासिका रन्ध्र-द्वारा, शिव-शक्त्यात्मक उस तेज को पुष्पांजलि में आकर्षित कर, उन पुष्पों को यन्त्रमध्यस्थित बिन्दु में कल्पित मूर्ति के मस्तक पर संयुक्त कर, अन्तःपूजित तेजोमय देव को बाहर कल्पित मूर्ति में प्रविष्ट सभी अंगों का

---

१. आवाहिनीमुद्रा--'सम्यक् सम्पूजितैः पुष्पैः कराभ्यां कल्पिताञ्जलिः ।
आवाहिनी समाख्याता मुद्रादेशिक-सत्तमैः ॥'

तवेयं महिमा मूर्तिस्तस्य त्वां सर्वगं प्रभो ! ।
भक्तिस्नेहं समाकृष्य दीपवत् स्थापयाम्यहम् ॥१॥
'श्रीहनुमन्निह तिष्ठ तिष्ठ' इति [1]स्थापनीमुद्रया संस्थाप्य ।
अनन्या तव देवेश ! मूर्तिशक्तिरियं प्रभो ! ।
सान्निध्यं कुरु तस्यां त्वं भक्तानुग्रहतत्पर ! ॥१॥
'श्रीहनुमन्निह सन्निधेहि' इति [2]सन्निधापनीमुद्रया सन्निधाप्य ।
आज्ञया तव देवेश ! कृपाम्भोधे गुणाकर ! ।
आत्मानन्दैकतृप्तस्त्वं निरुद्धो भव हे गुरो ? ॥१॥
'श्रीहनुमन्निह सन्निरुद्धो भव' इति सन्निरोधिन्या सन्निरुध्य,
न्यासोक्त-षडङ्गमन्त्रैस्तत्तन्मुद्राभिर्देवाङ्गे [3]सङ्कलीकृत्य ।

ध्यान करता हुआ, 'आत्मसंस्थमजं शुद्धं—' यहाँ से लेकर 'आवाहितो भव' तक पढ़कर आवाहिनी मुद्रा से आवाहित करे।

'तवेयं महिमा—'से आरम्भ कर 'तिष्ठ तिष्ठ' पर्यन्त पढ़कर, स्थापनी मुद्रा द्वारा श्रीहनुमान् जी की मूर्तिस्थापन करे।

पुनः 'अनन्या तव देवेश–' से 'सन्निधेहि' तक मन्त्र पढ़कर सन्निधापनी मुद्रा प्रदर्शित कर, श्रीहनुमान् जी को सन्निधि में करे।

'आज्ञया तव देवेश !' से लेकर 'निरुद्धो भव हे गुरो !' तक पढ़कर मूर्ति में सन्निरोधन कर, न्यास में कहे गये षडंग मन्त्रों से उन-उन मुद्राओं के द्वारा मूर्ति में प्रतिष्ठित करे।

---

१. स्थापनीमुद्रा —'अधोमुखी कृता सैव स्थापनीति निगद्यते ।

२. सन्निधापनी—'संलग्नमुष्टयङ्घ्रि (चिह्न) ताङ्गुष्ठौ करौ सन्निधापनी'ति ।

३. सकलीकरणमुद्रा–'देवाङ्गेषु षडङ्गानां न्यासः स्यात् सकलीकृतिः ॥'

अथवा—'हृदयादि-शरीरान्ते कनिष्ठाद्यङ्गुलीषु च ।
हृदादि-मन्त्रविन्यासः सकलीकरणं मतम् ॥'

ज्ञानकर्मेन्द्रियैः पञ्चतन्मात्रैर्भूतपञ्चकैः ।
स्वतेजःपुञ्जकेनाशु वेष्टितो भव सर्वशः ॥१॥
'श्रीहनुमन्निहाऽवगुण्ठितो भव' इत्यवगु[1]ण्ठिन्याऽवगुण्ठ्य ।
अज्ञानाद् दौर्मनस्याद्वा वैकल्यात् साधनस्य च ।
यदपूर्णं भवेत्कृत्यं तथाऽप्यभिमुखो भव ॥ १ ॥
'श्रीहनुमन्निहाऽभिमुखो भव' इत्यभिमुखीमुद्रयाऽभिमुखीकृत्य ।
दृशा पीयूषवर्षिण्या पूरयन् यज्ञविष्टरम् ।
मूर्तिमान् यज्ञसम्पूर्तेः स्थिरो भव महेश्वर ! ॥ १ ॥
'श्रीहनुमन्निह प्रार्थितो भव' इति[2] प्रार्थिन्या संप्रार्थ्य ।
सुधास्रवन्त्या वचसा ऋषिवृन्दाजसेवित ! ।
मां पुनीहि महादेव ! विष्णु-ब्रह्मेन्द्र-वन्दित ! ॥ १ ॥
'श्रीहनुमन्निहाऽमृतीकृतो भव' इति गोमुद्रयाऽमृतीकृत्य ।

पश्चात् 'ज्ञानकर्मेन्द्रियैः०' से शुरू कर 'श्रीहनुमन्निहावगुण्ठितो भव' तक मन्त्र पढ़कर अवगुण्ठिनी मुद्रा से मूर्ति को गोंठे ।

तदनन्तर 'अज्ञानाद् दौर्मनस्याद्वा-' से 'श्रीहनुमन्निहाभिमुखो भव' तक पढ़कर अभिमुखीमुद्रा द्वारा मूर्ति को अभिमुखी (सम्मुख) करे।

पुनः 'दृशा पीयूषवर्षिण्या-' से 'प्रार्थितो भव' तक पढ़कर प्रार्थिनी मुद्रा से प्रार्थना करे ।

पुनश्च 'सुधास्रवन्त्या वचसा' से आरम्भ कर 'हनुमन्निहामृती-

---

१. अवगुण्ठनीमुद्रा--'सव्य-हस्त-कृता मुष्टिः दीर्घाऽधोमुखतर्जनी ।
अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रमिता भवेत् ॥'
२. प्रार्थिनीमुद्रा--'हृदि अञ्जलिबन्धनं प्रार्थिनी मुद्रा भवतीति बोद्धव्यम् ।'

परमेश्वर ! सर्वेश ! सर्वज्ञ ! करुणानिधे ! ।
मां पाहि कृपया दीनं भक्तत्राणार्थविग्रह ! ॥ १ ॥

'श्रीहनुमन्निह परमीकृतो भव' इति महामुद्रया परमीकृत्य, लेलिहामुद्रया प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । यथा—मूलेन देवं शङ्खोदकैस्त्रिः प्रोक्ष्य, पुष्पेण देवहृदयं स्पृशन्, पूर्वोक्तप्राणप्रतिष्ठामन्त्रं त्रिर्जपेत् । तस्मिन् मन्त्रे 'मम' इत्यत्र 'आवृत्तिसहित-श्रीहनुमतः' इति योज्यम् । [1]कपिमुद्रां प्रदर्श्य ।

कृतो भव' तक मन्त्र पढ़कर गोमुद्रा से श्रीहनुमान् जी का अमृतीकरण करे।

'परमेश्वर ! सर्वेश' से 'परमीकृतो भव' तक पढ़कर महामुद्रा प्रदर्शित कर, परमीकरण करे और लेलिहानमुद्रा से प्राणप्रतिष्ठा करे। प्राणप्रतिष्ठा की विधि इस प्रकार है—मूल मन्त्र पढ़कर शंख के जल से तीन बार मूर्ति को प्रक्षालित करे और पुष्प से मूर्ति के हृदय को स्पर्श कर पूर्वोक्त प्राणप्रतिष्ठा मन्त्र का तीन बार जप करे। इस जप में 'मम' यहाँ पर 'आवृत्तिसहित-श्रीहनुमतः' इतना अधिक जोड़े। तथा कपिमुद्रा प्रदर्शित करे।

---

१. वानरी (कपि) मुद्रा—

'वानरी चाऽस्ति मुद्रेयं तां शृणुष्व वदाम्यहम् ।
करौ सम्पुटितौ कृत्वा समश्लिष्टाऽङ्गुली स्फुटा ॥
तर्जन्याश्चाङ्गुलीमूले कृत्वा द्व्यङ्गुष्ठयोरपि ।
अङ्गुल्यः पाणयोः सर्वा अन्तर्गर्भस्थिराः कुरु ॥
हृदयोपरिस्थितास्तास्तु मुकुलाकृतिसंयुताः ।
स्वामिपादे स्थिरा दृष्टिर्मुद्रा स्याच्च स्थिराऽपि तु ॥
(ज्ञेयेयं वानरी मुद्रा चैका मन्त्रपथे ध्रुवा) ।'

—हनु० पं०, श्लोक १४२-१४५, पृ० १४८

यस्य दर्शनमिच्छन्ति देवाः स्वाभीष्टसिद्धये ।
तस्मै ते परमेशाय स्वागतं स्वागतं च मे ॥ १ ॥
कृतार्थोऽनुगृहीतोऽस्मि सफलं जीवनं मम ।
आगतो देवदेवेश ! सुस्वागतमिदं पुनः ॥ २ ॥

इति स्वागत-सुस्वागतौ कृत्वा ।

यद्भक्तिलेश - सम्पर्कात् परमानन्दसम्भवः ।
तस्मै ते चरणाब्जाय पाद्यं शुद्धाय कल्पते ॥ १ ॥

इति पाद्यपात्रोदकेन पाद्यं पादयोः समर्प्य ।

वेदानामपि वेद्याय देवानां देवतात्मने ।
आचमं कल्पयामीश ! शुद्धानां शुद्धिहेतवे ॥ १ ॥

इत्याचमनपात्रोदकेनाऽऽचमनं मुखे समर्पयेत् ।

तापत्रयहरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम् ।
तापत्रयविनिर्मुक्तं तवाऽर्घ्यं कल्पयाम्यहम् ॥ १ ॥

इत्यर्घ्यपात्रोदकेनाऽर्घ्यं शिरसि समर्पयेत् ।

फिर 'यस्य दर्शनमिच्छन्ति' से आरम्भ कर 'सुस्वागतमिदं पुनः' तक पढ़कर हनुमान् जी का स्वागत करे ।

पुनः 'यद्भक्तिलेशसम्पर्कात्—' श्लोक पढ़कर श्रीहनुमान् जी के चरण-कमलों में पाद्य-जल समर्पित करे ।

पुनः 'वेदानामपि वे' 'शुद्धिहेतवे॰' तक पढ़कर मुख में आचमन-पात्र के जल से आचमन करावे ।

पश्चात् 'तापत्रयहरं दिव्यं' श्लोक पढ़कर शिर पर अर्घ्य दे ।

सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मने ।
मधुपर्कमिदं देव ! कल्पयामि प्रसीद मे ॥ १ ॥

इति मधुपर्कपात्रेण मधुपर्कं मुखे समर्पयेत् ।

उच्छिष्टोऽप्यशुचिर्वाऽपि यस्य स्मरणमात्रतः ।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ॥ १ ॥

इत्याचमनपात्रोदकेन पुनराचमनं समर्पयेत् ।

स्नेहं गृहाण स्नेहेन लोकनाथ ! कपीश्वर ! ।
सर्वलोकेषु शुद्धात्मन् ! ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥ १ ॥

इति सुगन्धतैलं समर्पयेत् । देवं हरिद्राद्यैरुद्वर्त्य ।

परमानन्द-बोधाब्धि-निमग्न-निजमूर्तये ।
साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीश ! ते ॥ १ ॥

इति स्नानं कारयेत् ।

ततः श्रीरुद्रसूक्तेन पुरुषसूक्तेन मूलेन च सहस्रशः शतशो वा यथाशक्ति देवमभिषिच्य, पूर्ववदाचमनं दद्यात् ।

पुनः 'सर्वकालुष्यहीनाय०' श्लोक पढ़कर मुख में सम्पुटित पात्र में मधुपर्क समर्पित करे ।

पुनः 'उच्छिष्टो०' से 'पुनराचमनीयकम्' तक श्लोक पढ़कर आचमन समर्पित करे ।

पुन; 'स्नेहं गृहाण०' श्लोक पढ़कर सुगन्ध तेल समर्पित करे तथा प्रतिष्ठित हनुमान् जी की मूर्ति को हरिद्रादि का लेपन करे ।

'परमानन्दबोधाब्धि०' श्लोक पढ़कर मूर्ति को स्नान करावे। पश्चात् रुद्रसूक्त ('नमस्ते रुद्र मन्यव' आदि ६६ मन्त्र) तथा पुरुषसूक्त ('सहस्रशीर्षा आदि २२ मन्त्र) से यथाशक्ति सौ बार अथवा हजार बार मूर्ति का अभिषेक कर, आचमन प्रदान करे ।

मायाचित्र-पटच्छन्न-निजगुह्योरुतेजसे ।
निर्वाण-परविज्ञान-वासस्ते कल्पयाम्यहम् ॥ १ ॥
यमाश्रित्य महामाया जगत्सम्मोहिनी स्थिता ।
तस्मै ते परमेशाय कल्पयाम्युत्तरीयकम् ॥ २ ॥

इति सकलदोषरहिते विशदे वाससी समर्प्य, पूर्ववदाचमनं दद्यात् ।

यस्य शक्तित्रयेणेदं सम्प्रोतमखिलं जगत् ।
यज्ञसूत्राय तस्मै ते यज्ञसूत्रं प्रकल्पये ॥ १ ॥

इति यज्ञोपवीतं समर्प्य, पूर्ववदाचमनं समर्प्य ।

स्वभावसुन्दराङ्गाय नानाशक्त्याश्रयाय ते ।
भूषणानि विचित्राणि कल्पयामि सुरार्चित ॥ १ ॥

इति विविध-रत्नजटित-हेमालङ्कारान् समर्प्य, मूलमन्त्र-सम्पुटित-मातृकावर्णानि देवताङ्गे मातृकास्थानेषु विन्यस्य, मूलेन सिन्दूरं समर्पयेत् ।

'मायाचित्रपटच्छन्न—' से 'उत्तरीयकम्' तक दो श्लोक पढ़कर निर्दोष दो वस्त्र (धोती, अँगौछा) समर्पित कर, पूर्ववत् आचमन करावे ।

फिर 'यस्य शक्तित्रयेणेदं०' श्लोक पढ़कर मूर्ति को यज्ञोपवीत पहनावे ।

पुनः 'स्वभावसुन्दराङ्गाय०' से 'सुरार्चित' तक पढ़कर मूर्ति को अनेक प्रकार के रत्न जड़े सोने के अलंकारों से अलंकृत करना चाहिए। तथा मूलमन्त्र से सम्पुटित मातृकावर्णों को ('ॐ अं' से 'हं' तक) देवतांग के प्रत्येक मातृका स्थान पर विन्यस्त कर, मूल मन्त्र से सिन्दूर चढ़ावे ।

परमानन्द-सौरभ्य-परिपूर्णदिगन्तरम् ।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर ! ॥ १ ॥

इति कनिष्ठा-ऽङ्गुष्ठाभ्यामष्टगन्ध-समन्वितं चन्दनं समर्प्य, कनिष्ठाङ्गुष्ठाभ्यां [1]गन्धमुद्रां प्रदर्श्य । श्रीहनुमते अक्षतान् समर्पयामि नमः ।

तुरीयवन-सम्भूतं नानागुणमनोहरम् ।
अमन्दसौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥ १ ॥

इति विहितपुष्पाणि पुष्पमालां च समर्प्य, तर्जन्यङ्गुष्ठ-योगेन [2]पुष्पमुद्रां प्रदर्शयेत् । एतेष्वासनाद्युपचारेषु प्रत्येकं सपुष्पोदकं समर्पयेत् ।

अत्राऽवसरे शिष्टा धूपदानादि-पुष्पाञ्जलि-समर्पणान्तं कर्म कृत्वैवाऽऽवरणार्चनं कुर्वन्ति । अन्ये च आवरण-पूजनान्ते

फिर 'परमानन्द-सौरभ्य'-श्लोक पढ़कर गन्धमुद्रा द्वारा कनिष्ठा तथा अँगूठे से अष्टगन्धयुक्त चन्दन समर्पित करे । पश्चात् 'श्रीहनुमते अक्षतान् समर्पयामि नमः' से अक्षत चढ़ावे ।

पुनः 'तुरीयवन-सम्भूतं' से 'उत्तमम्' तक श्लोक पढ़कर पुष्प एवं पुष्पमाला समर्पित करे । फिर तर्जनी एवं अँगूठे से पुष्पमुद्रा प्रदर्शित कर आसन आदि से लेकर पुष्प पर्यन्त प्रत्येक उपचार में पुष्पयुक्त जल समर्पित करे ।

शिष्टलोग यहाँ पर ही धूप, दीप, नैवेद्य, आचमन, ताम्बूल, पूगी-फल, दक्षिणा एवं पुष्पांजलि समर्पित कर, पश्चात् आवरणपूजा करते हैं,

---

१. गन्धमुद्रा— कनिष्ठा-ऽङ्गुष्ठयोगेन गन्धमुद्रां प्रदर्शयेत् ।'
२. पुष्पमुद्रा—'तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन पुष्पमुद्रां प्रदर्शयेत् ।'

धूपदानादिकं कुर्वन्ति । तत्तु-यथासम्प्रदायं विधेयमिति ।

आवरणपूजा

प्रथमावरणम्—संविन्मय कपीशान परामृतचरुप्रिय ! ।
अनुज्ञां देहि देवेश ! परिवारार्चनाय मे ॥१॥

इत्यनुज्ञां प्रार्थ्य, बिन्दौ—श्रीहनुमते नमः । केसरेषु-ह्रौं हृदयाय नमः । ह्स्फ्रें शिरसे स्वाहा । ख्फ्रें शिखायै वषट् । ह्स्रौं कवचाय हुम् । ह्स्ख्फ्रें नेत्रत्रयाय वौषट् । ह्सौं अस्त्राय फट्, इति सम्पूज्य ।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल ! ।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ॥१॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत् ।

द्वितीयावरणम्–पूर्वाद्यष्टदलेषु–रामभक्ताय नमः १ । महातेजसे नमः २ । कपिराजाय नमः ३ । महाबलाय नमः ४ ।

तथा अन्य लोग आवरणपूजा करने के उपरान्त धूपादि प्रदान करते हैं। इस विषय में सम्प्रदायानुसार करना चाहिए।

आवरणपूजा [प्रथमावरणपूजन] – आवरणपूजा में सर्वप्रथम 'संविन्मय कपीशान' से प्रारम्भ कर, 'परिवारार्चनाय मे' तक पढ़कर देवता की अनुज्ञा प्राप्त करे। फिर बिन्दु में 'श्रीहनुमते नमः' से लेकर 'अस्त्राय फट्' तकपढ़कर अक्षत द्वारा प्रथमावरण पूजन करे और 'अभीष्टसिद्धि मे देहि' से प्रारम्भ कर 'प्रथमावरणार्चनम्' तक श्लोक पढ़कर देवता को पुष्पांजलि समर्पित करे।

द्वितीयावरणम्—पूर्वादि अष्टदिग्युक्त कमल के अष्टदल में—'राम-

द्रोणाद्रिहारकाय नमः ५। मेरुपीठकार्चनकारकाय नमः ६। दक्षिणाशाभास्कराय नमः ७। सर्वविघ्ननिवारकाय नमः ८। इति सम्पूज्य।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल!।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम् ॥ १ ॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्पये।

तृतीयावरणम्–दलाग्रेषु–सुग्रीवाय नमः १। अङ्गदाय नमः २। नीलाय नमः ३। जाम्बवते नमः ४। नलाय नमः ५। सुषेणाय नमः ६। द्विविदाय नमः ७। मैन्दाय नमः ८। इति सम्पूज्य।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल!।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ॥१॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्।

चतुर्थावरणम्–दलसन्धिषु–रक्षोघ्नाय नमः १। विषघ्नाय

भक्ताय नमः' से प्रारम्भ कर, 'सर्वविघ्ननिवारकाय नमः' तक आठ मन्त्र पढ़कर 'अभीष्टसिद्धि' से आरम्भ कर 'द्वितीयावरणार्चनम्' तक पढ़ता हुआ पुष्पांजलि समर्पित करे।

तृतीयावरण—दल के अग्रभाग में 'सुग्रीवाय नमः' से प्रारम्भ कर 'मैन्दाय नमः' तक आठ मन्त्र पढ़कर, प्रत्येक का पूजन कर पूर्ववत् 'अभीष्टसिद्धि मे देहि' से प्रारम्भ कर 'तृतीयावरणार्चनम्' तक पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित करे।

चतुर्थावरण—प्रत्येक दल के जोड़ पर—'रक्षोघ्नाय नमः' से प्रारम्भ

नमः २। रिपुघ्नाय नमः ३। व्याधिघ्नाय नमः ४। चोरघ्नाय नमः ५। भूतघ्नाय नमः ६। परशस्त्रास्त्रमन्त्रघ्नाय नमः ७। भयघ्नाय नमः ८। इति सम्पूज्य।

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल !।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम् ॥ १ ॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्पयेत्।

पञ्चमावरणम्—भूपुरप्रथमरेखायाम्-ऐरावताय नमः १। पुण्डरीकाय नमः २। वामनाय नमः ३। कुमुदाय नमः ४। अञ्जनाय नमः ५। पुष्पदन्ताय नमः ६। सार्वभौमाय नमः ७। सुप्रतीकाय नमः ८। इति सम्पूज्य,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल !।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम् ॥१॥

इति पुष्पाञ्जलिं दत्वा, प्रणमेत्।

षष्ठावरणम्—भूपुरद्वितीयरेखायाम्-लं इन्द्राय नमः १। रं अग्नये नमः २। मं यमाय नमः ३। क्षं नैर्ऋतये नमः ४।

कर, 'भयघ्नाय नमः' तक आठ मन्त्र पढ़कर अक्षत-पुष्पादि से प्रत्येक का पूजन करे, फिर 'अभीष्टसिद्धि' से लेकर 'चतुर्थावरणार्चनम्' तक श्लोक पढ़कर, पुष्पांजलि समर्पित करे।

पञ्चमावरण—भूपुर की प्रथम रेखा पर 'ऐरावताय नमः' से शुरू कर 'सुप्रतीकाय नमः' तक आठ मन्त्र पढ़कर अक्षतादि से पूजन करे। तथा 'अभीष्टसिद्धि' से 'पञ्चमावरणार्चनम्' तक पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित कर प्रणाम करे।

षष्ठावरण—भूपुर की द्वितीय रेखा पर 'लं इन्द्राय नमः' से 'अं

वं वरुणाय नमः ५। यं वायवे नमः ६। सं कुबेराय नमः ७। हं ईशानाय नमः ८। ऊर्ध्वम्–ह्रीं ब्रह्मणे नमः ९। अधः–अं अनन्ताय नमः १०। इति सम्पूज्य,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल !।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं षष्ठावरणार्चनम् ॥१॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य, प्रणमेत्।

सप्तमावरणम्–तृतीयरेखायाम्–वज्राय नमः १। शक्तये नमः २। दण्डाय नमः ३। खड्गाय नमः ४। पाशाय नमः ५। अङ्कुशाय नमः ६। गदायै नमः ७। त्रिशूलाय नमः ८। पद्माय नमः ९। चक्राय नमः १०। इति सम्पूज्य,

अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सल !।
भक्त्या समर्पये तुभ्य सप्तमावरणार्चनम् ॥१॥

इति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य, प्रणमेत्।

इत्थमावरणार्चनं विधाय, आवरणं देवं ध्यात्वा, बिन्दौ प्रधानदेवं पूजयेत्।

अनन्ताय नमः' पर्यन्त दस मन्त्रों को पढ़कर पूजन करे तथा 'अभीष्ट-सिद्धि में देहि:' से 'षष्ठावरणार्चनम्' तक दस मन्त्रों को पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित कर प्रणाम करे।

सप्तमावरण—भूपुर की तृतीय रेखा पर, 'वज्राय नमः' से आरम्भ कर 'चक्राय नमः' तक दस मन्त्रों को पढ़कर पूजा करे, फिर 'अभीष्ट-सिद्धि मे देहि' से 'सप्तमावरणार्चनम्' तक श्लोक पढ़कर पुष्पांजलि समर्पित कर प्रणाम करे।

इस प्रकार पूर्वोक्त विधि से आवरण पूजा कर, आवरण स्थित

साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते गन्धं समर्पयामि नमः। साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते अक्षतान् समर्पयामि नमः। साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते पुष्पाणि समर्पयामि नम। धूपपात्रस्थिताङ्गारे दशाङ्गादि धूपं क्षिप्त्वा, पात्रं 'फट्' इति प्रोक्ष्य। 'नमः' इति सम्पूज्य, वामतर्जन्या संस्पृश्य।

वनस्पतिरसोपेतो गन्धाढ्यः सुमनोहरः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥१॥

इति वामहस्तेन घण्टां वादयन्, श्रीहनुमद्गुणगणान् सङ्कीर्तयन् देवनाभिदेशतो दक्षहस्तेन धूपं समर्प्य, 'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते धूपं समर्पयामि नमः।' इति मन्त्रमुच्चरन्, शङ्खोदकं दत्वा, तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन धूपमुद्रां प्रदर्श्य, 'जयध्वनिमन्त्रमातः

तत्तत् देवों का ध्यान कर, बिन्दु में प्रधान देवता का पूजन करे।

'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते गन्धं समर्पयामि नमः' मन्त्र पढ़कर गन्धसमर्पित करे, इसी प्रकार 'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते अक्षतान् समर्पयामि नमः' मन्त्र से अक्षत पर तथा 'साङ्गाय' से 'श्रीहनुमते पुष्पाणि समर्पयामि नमः' से पुष्प चढ़ावे। फिर धूप पात्र-स्थित अग्नि में दशांग धूप देकर, उस पात्र पर 'फट्' इस मन्त्र से जल छिड़के। 'नमः' इस मन्त्र से पात्र का पूजन करे, फिर बायें हाथ की तर्जनी अँगुली से पात्र का स्पर्श करे। पश्चात् 'वनस्पतिरसोपेतो' से 'प्रतिगृह्यताम्' तक पढ़कर बायें हाथ से घण्टे को बजाता हुआ, श्रीहनुमान् जी के अनन्त गुणगणों का स्मरण करता हुआ दाहिने हाथ से धूप समर्पित करे, धूप समर्पित करते हुए पुनः पुर्वोक्त रीति से 'सांगाय सपरिवाराय श्रीहनुमते धूपं समर्पयामि नमः' तक मन्त्र का

स्वाहा' इति मन्त्रेण घण्टां यजेत् ।

ततः 'फट्' इति दीपपात्रं प्रोक्ष्य, 'नमः' इत्यभ्यर्च्य, वाम-मध्यमया संस्पृश्य ।

सुप्रकाशो महादीपः सर्वतस्तिमिरापहः ।
स-बाह्याभ्यन्तरं ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ १ ॥
साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते दीपं समर्पयामि नमः ।

इति मन्त्रमुच्चरन् शङ्खोदकं दत्वा, देवतानाम-गुणान् गृणन् घण्टावादनपूर्वकं दक्षकरेण देवनेत्रदेशतो दीपं प्रदर्श्य, मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन दीपमुद्रां प्रदर्शयेत् ।

अथ नैवेद्यं निवेदयेत् । देवाग्रे चतुरस्रमण्डलं कृत्वा,

उच्चारण करे। और शंख के जल को गिराता हुआ, तर्जनी तथा अँगूठे को मिलाकर धूपमुद्रा प्रदर्शित करे। 'जयध्वनिमन्त्रमातः स्वाहा' इस मन्त्र को पढ़कर घण्टे का पूजन करे।

तदनन्तर 'फट्' इस मन्त्र से दीप पात्र को प्रोक्षित करे, 'नमः' इस मन्त्र से पूजन कर, बायें हाथ की मध्यमा अँगुली से दीप का स्पर्श करे, 'सुप्रकाशो महादीपः' से 'दीपं समर्पयामि नमः' तक मन्त्र पढ़कर, शंख का जल गिराकर श्री हनुमान् जी के गुणों का स्मरण करता हुआ, बायें हाथ से घण्टा बजाते हुए दाहिने हाथ से मूर्ति के नेत्र से दीपक दिखाता हुआ, मध्यमा तथा अँगूठे को मिलाकर दीप-मुद्रा प्रदर्शित करे।

तदनन्तर नैवेद्य रखे। देवता के सामने जल से चौकोर मण्डल

---

१. अत्र 'सितवर्तियुक्तघृतदीपो देवदक्षे, रक्तवर्तियुततैलदीपो देववामभागे' इति विशेषः ।

सम्पूज्य, तत्र साज्यान्न-विविधशाक-षड्रससंयुतं स्वर्णादिपात्रं संस्थाप्य, 'फट्' इति प्रोक्ष्य, चक्रमुद्रां प्रदर्श्य, गायत्र्या प्रोक्ष्य, 'यं' इति द्वादशधा जपन्, तज्जातमारुतैर्नैवेद्यदोषान् संशोष्य, दक्षकरे 'रं' इति बीजं विचिन्त्य, तत्पृष्ठे वामकरं दत्वा, नैवेद्यं दर्शयन्, वह्निबीजोत्थाऽग्निना तद्दोषान् दग्ध्वा, 'रं' इति बीजं वामकरे विचिन्त्य, तत्पृष्ठे दक्षकरं दत्वा, तत्र प्रदर्श्याऽमृतबीजोत्थाऽमृतधारया नैवेद्यमाप्लाव्य, धेनुमुद्रां प्रदर्श्य, मूलमष्टधा जप्त्वा, देवाय पुष्पाञ्जलिं दत्वा, देवमुखोत्थित तेजो विचिन्त्य, वामाङ्गुष्ठेन नैवेद्यपात्रं स्पृशन्, दक्षकरेण जलं समर्पयेत्।

बनाकर, अक्षतादि से पूजन कर, वहाँ अनेक प्रकार के शाक तथा षड्रसों से युक्त सघृत भोजन सोने की थाल में सजाकर, 'फट्' इस मन्त्र से प्रोक्षण कर, चक्रमुद्रा प्रदर्शित करे। फिर गायत्री मन्त्र से उसे प्रक्षालित करे। पुनः 'यं' इस मन्त्र को बारह बार जपकर मन्त्र के वायु से नैवेद्य (भोग) के समस्त दोषों को दूर करता हुआ, दाहिने हाथ में 'रं' इस बीज मन्त्र का विचार करता हुआ, दायें हाथ के नीचे बायाँ हाथ लगाता हुआ, नैवेद्य प्रदर्शित करे। 'रं' इस अग्नि बीज के मन्त्राग्नि से नैवेद्य के दोष को जलाता हुआ, बायें हाथ की हथेली पर दाहिने हाथ की हथेली लगाकर, नैवेद्य प्रदर्शित करे, अमृतबीज से उठी हुई अमृत की धारा से नैवेद्य को सिंचित कर धेनुमुद्रा प्रदर्शित करे। फिर मूल मन्त्र का आठ बार जप करता हुआ देवता को पुष्पांजलि समर्पित करे, और देवता के मुख से निकले हुए तेज का ध्यान करता हुआ, बायें हाथ के अँगूठे से नैवेद्य पात्र को स्पर्श कर, दाहिने हाथ से जल समर्पित करना चाहिए।

ॐ पाकेन सिद्धं सुहविर्विविधानेकभक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश ! सानुगाय जुषाण तत् ॥ १ ॥

'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते नैवेद्यं समर्पयामि नमः' इति जलं समर्प्य, अनामिकाङ्गुष्ठयोगेन नैवेद्यमुद्रां प्रदर्श्य, सपुष्पकराभ्यां नैवेद्यभाजनमुद्धृत्य पठेत् ।

'निवेदयामि भगवते जुषाणेदं हविर्हर !' इति त्रिधा भ्राम-, यित्वा पात्र यथास्थाने संस्थाप्य, प्राणादिपञ्चमन्त्रान् पठन् ग्रासमुद्रां प्रदर्शयेत् । कनिष्ठाऽनामिकाऽङ्गुष्ठैः-ॐ प्राणाय स्वाहा । तर्जनीमध्यमाङ्गुष्ठैः-ॐ अपानाय स्वाहा । मध्यमाऽनामिकाङ्गुष्ठैः-ॐ उदानाय स्वाहा । मध्यमा-तर्जन्यनामिकाङ्गुष्ठैः-ॐ व्यानाय

जल समर्पित करने की विधि इस प्रकार है - 'ॐ पाकेन सिद्धं-' से नैवेद्यं समर्पयामि नमः' इस मन्त्र से जल समर्पित करे । अनामिका तथा अंगुष्ठ को मिलाकर नैवेद्य मुद्रा प्रदर्शित करना चाहिए। तथा दोनों हाथ में फूल लेकर नैवेद्य पात्र को वहाँ से उठा लेना चाहिए और इस मन्त्र को पढ़ना चाहिए ।

'निवेदयामि भगवते०' वाक्य पढ़कर तीन बार नैवेद्य की थाल को देवता के सामने घुमावे, पुनः नैवेद्य के थाल को यथास्थान रख दे । 'ॐ प्राणाय स्वाहा' आदि पाँच मन्त्रों को पढ़कर देवता को ग्रासमुद्रा-- कनिष्ठिका, अनामिका तथा अँगूठे को मिलाकर दिखावे । कनिष्ठिका, अनामिका तथा अँगूठे को मिलाकर 'ॐ प्राणाय स्वाहा,' मन्त्र पढ़े, तर्जनी, मध्यमा तथा अँगूठे को मिलाकर 'ॐ अपानाय स्वाहा' मध्यमा, अनामिका तथा अँगूठे से 'ॐ उदानाय स्वाहा', मध्यमा, तर्जनी, अनामिका तथा अँगूठे से 'ॐ व्यानाय स्वाहा' मन्त्र पढ़ना चाहिए तथा

स्वाहा। सर्वाङ्गुलीभिः—ॐ समानाय स्वाहा। इति दक्षकरेण मुद्रापञ्चकं वामेन पद्मं प्रदर्श्य, ततो जवनिकां धृत्वा, पठेत्।

ब्रह्मेशाद्यैः सरसमभितः सूपविष्टैः समेतः
शिञ्जद्बाल-व्यजन-निकरैर्वीज्यमानो गणौघैः।
नर्मक्रीडा-प्रहसनपरो हासयन् पंक्तिभोक्तॄन्
भुङ्क्ते पात्रे कनकघटिते षड्रसान् वायुपुत्रः॥ १॥

इति पठित्वा, मूलं दशधा प्रजप्य।

समस्त-देवदेवेश ! सर्वतृप्तिकरं परम्।
अखण्डानन्द-सम्पूर्णं गृहाण जलमुत्तमम्॥ १॥

सभी अँगुलियों को मिलाकर 'ॐ समानाय स्वाहा' मन्त्र पढ़े। इस प्रकार दाहिने हाथ से पाँचों मुद्रा तथा बायें हाथ से पद्ममुद्रा प्रदर्शित करे, देवता को भोजन कराने के लिए परदा डाल दे। और 'ब्रह्मेशाद्यैः' से लेकर 'वायुपुत्रः' तक श्लोक पढ़े।

श्लोकार्थ—जिनके चारों ओर ब्रह्मादि देवता अच्छी तरह बैठे हुए हैं, तथा गण लोग मयूरपंख से बने हुए पंखे के द्वारा जिन्हें चारों ओर हवा कर रहे हैं। तथा भोजन करते समय जो चाटुकार वचनों से स्वयं हँसते हैं तथा पंखे में बैठे हुए समस्त भोजन करनेवालों को हँसा रहे हैं ऐसे श्रीहनुमान् जी सोने के थाल में षड्रस संयुक्त भोजन कर रहे हैं ऐसी भावना करे॥१॥

इस प्रकार श्लोक को पढ़ता हुआ मूल मन्त्र का दस बार जप करे।

पुनः 'समस्त-देवदेवेश' से 'जलमुत्तमम्' तक श्लोक पढ़कर मध्य में जल देकर हवन करना चाहिए। हवन का संकल्प है—'ॐ तत्सदद्य०' से

इति मध्ये पानीयं दत्वा, हवनं कुर्यात् । तत्राऽऽदौ सङ्कल्पः- 'ॐ तत्सदद्य०' इत्याद्युच्चाय 'श्रीहनुमत्पूजाङ्गनित्यहवन करिष्ये' इति सङ्कल्प्य, वैश्वदेवं यथाशाखं विधाय, स्थण्डिलेऽग्निं स्थापयेत् (अथवा) एशान्ये मण्डलं कृत्वा सम्पूज्य, तत्र लोह-वर्जितधातुमयीं मृन्निर्मितां वा हसन्तीं संस्थाप्य, तस्यां नव-कोष्ठानि विभाव्य, मध्येऽग्निं संस्थाप्य, ॐ क्रव्यादेभ्यो हुं फट् स्वाहा' इति क्रव्यादांशमङ्गारकं नैर्ऋत्यां परित्यज्याऽवशिष्टं मूलेन वीक्ष्य, 'फट्' इति प्रोक्ष्य, कुशैः सन्ताड्य, 'हुं' इति प्रोक्ष्य, 'ॐ' इत्यभिमन्त्र्य, 'वं' इति धेन्वाऽमृतीकृत्य, 'फट्' इति संरक्ष्य, 'हुँ' इत्यवगुण्ठ्य, फूत्कारेण प्रज्वाल्य, सप्तजिह्वा-मुद्रां प्रदर्श्य ध्यायेत् ।

लेकर 'हवन करिष्ये' पर्यन्त हवन-सकल्प करने के अनन्तर अपनी शाखा के अनुसार वैश्वदेव करे । तथा हवन के लिए वेदी पर अग्नि स्थापित करे अथवा ईशान कोण में मण्डल बनाकर पूजा करे, उस पर लोहे के अतिरिक्त किसी धातु की अथवा मिट्टी की बनी हुई हसन्ती (बोरसी) रखकर, उस पर नव कोष्ठक बनावे, मध्य के कोष्ठ पर अग्नि की स्थापना करे,उसमें 'ॐ क्रव्यादेभ्यो' हुँ फट् स्वाहा' मन्त्र पढ़कर क्रव्यादों के लिए थोड़ी अग्नि नैऋत्य कोण में रखकर, अवशिष्ट अग्नि को मूल मन्त्र से देखकर, 'फट्' इस मन्त्रसे पूजा करे और उसे कुशा से आहत करे, फिर 'हुं' इस मन्त्र से प्रोक्षित कर, 'ॐ' इससे अभिमन्त्रित करे, 'वं' इससे धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण कर 'फट्' इस मन्त्र से अग्नि का संरक्षण करे, 'हुँ' इस मन्त्र से घेरा देकर, फूत्कार से अग्नि को जलावे। फिर सप्तजिह्वा मुद्रा प्रदर्शित कर ध्यान करे ।

अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम्।
सुवर्णवर्णममलं समिद्धं विश्वतो मुखम् ॥ १ ॥

इति ध्यात्वा, 'ॐ चित्पिङ्गल हन-हन दह-दह पच-पच सर्वज्ञाऽऽज्ञापय स्वाहा'। 'रं अग्नये नमः' इति वह्निं सम्पूज्य, सप्तजिह्वाः पूजयेत्। 'ॐ हिरण्यायै नमः १। ॐ कनकायै नमः २। ॐ रक्तायै नमः ३। ॐ कृष्णायै नमः ४। ॐ सुप्रभायै नमः ५। ॐ बहुरूपायै नमः ६। ॐ अतिरक्तायै नमः ७।' इति सम्पूज्य, 'ॐ भूः स्वाहा १। ॐ भुवः स्वाहा २। ॐ स्वः स्वाहा ३। ॐ भूर्भुवः स्वाहा' इति व्याहृतिभिर्जुहुयात्।

ततो चक्रगतं देवमग्नावावाह्य, तं [1]पञ्चोपचारैः सम्पूज्य, वह्निदेवयोरैक्यं विभाव्य, पूर्वोक्त-षडङ्गमन्त्रैः स्वाहान्तैर्जुहुयात्।

पुनः 'अग्निं प्रज्वलितं०' श्लोक पढ़कर अग्नि का ध्यान करे। फिर 'ॐ चित्पिङ्गल हन-हन' से 'रं अग्नये नमः' तक पढ़कर अग्नि का पूजन कर सप्तजिह्वा का पूजन करे। पश्चात् 'ॐ हिरण्यायै नमः' से 'ॐ अतिरक्तायै नमः' तक ७ मन्त्रों को पढ़कर, अग्निजिह्वा का पूजन करे। फिर 'ॐ भूः स्वाहा' से लेकर 'ॐ स्वः स्वाहा' तक तीन महाव्याहृति के मन्त्रों को पढ़कर हवन करे।

तत्पश्चात् चक्र में रहनेवाले देवता का अग्नि में आवाहन कर, पंचोपचार से पूजन करे, तथा वह्नि और चक्र गत देवता के एकता का ध्यान करते हुए पूर्वोक्त षडंग मन्त्रों में स्वाहा लगा कर हवन

---

१. ध्यानमावाहनं चैव भक्त्या यच्च निवेदनम्।
नीराजनं प्रणामश्च पञ्च पूजोपचारकाः॥
—परशुरामकल्पसूत्रे।

'श्रीहनुमते स्वाहा' इति लवणरहितान्नेनाऽऽज्योक्तेन केवलाज्येन वा पञ्चविंशत्याहुतीर्हुत्वा, पुनर्व्याहृतिभिर्हुत्वा, देवं सम्पूज्य, चक्रे नियोज्याऽग्निं विसृजेत् । इति हवनविधिः ।

ततः पूर्ववदाचमनोदकं दत्वा, हस्तप्रक्षालनं कारयित्वा, देववदननिर्गतं तेजः श्रीहनुमद्वदने संहृत्य, फलानि निवेदयेत् । 'श्रीहनुमते फलं समर्पयामि नमः । श्रीहनुमते ताम्बूलं समर्पयामि नमः । श्रीहनुमते दक्षिणां समर्पयामि नमः ।' इति फल-ताम्बूल-दक्षिणाः समर्प्य, उच्छिष्टबलिमर्पयेत् । ऐशान्ये पूर्ववन्मण्डलं कृत्वा, तत्र निवेदिता-ऽन्नशतांश-संयुक्तं बलिपात्रं संस्थाप्य ध्यायेत् ।

करे फिर 'श्रीहनुमते स्वाहा' इस मन्त्र से नमक रहित शाकल अथवा घृत से मिले हुए हवि अथवा केवल घृत की पचीस आहुति देकर, तीन महाव्याहृतियों से हवन कर देवता की पूजा करे, चक्र में उस अग्नि को डालकर विसर्जन करना चाहिए।

इस प्रकार हवन-विधि समाप्त ।

इसके अनन्तर पूर्ववत् आचमन के लिए जल देकर, हाथ का प्रक्षालन करावे । देवता के मुख से निकले हुए तेज को श्रीहनुमान् जी के मुख में रखकर, हनुमान् जी को फल का भोग लगावे। 'श्रीहनुमते फलं समर्पयामि नमः' से लेकर 'दक्षिणां समर्पयामि नमः' तक पढ़कर, फल, ताम्बूल और दक्षिणा समर्पित करे । फिर उच्छिष्ट बलि देना चाहिए। ईशान कोण में चौकोर मण्डल बना कर, नैवेद्य के सौवें भाग के अन्न से युक्त बलिपात्र को रखकर, 'चण्डेश्वरं रक्ततनु' से 'बिभ्रतमिन्दुचूडम्' तक श्लोक पढ़कर बलि के देवता चण्डेश्वर का ध्यान करे ।

चण्डेश्वरं रक्ततनुं त्रिनेत्रं रक्तांशुकाढ्यं हृदि भावयामि ।
टङ्कं त्रिशूलं स्फटिकाक्षमालां कमण्डलुं बिभ्रतमिन्दुचूडम् ॥१॥

इति ध्यात्वा, 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इति निर्माल्येन सम्पूज्य, 'ध्व्रूं फट् चण्डेश्वर ! इमं बलिं गृह्ण गृह्ण स्वाहा' इति चरणोदकेन बलिं दत्वा प्रार्थयेत् ।

लेह्य-चोष्याऽन्नपानादि-ताम्बूलं स्रग्विलेपनम् ।
निर्माल्यभोजनं तुभ्यं ददामि श्रीशिवाज्ञया ॥ १ ॥

इति प्रार्थ्य, नत्वा विसृजेत् ।

ततो जवनिकामुत्तार्य, आरार्तिकं कुर्यात् । स्वाग्रे पूर्ववन्मण्डलं कृत्वा सम्पूज्य, तत्र कुङ्कुमलिखिता-ऽष्टदल-कमलं कर्षमात्र-घृतवर्तिभृतैर्डमर्वाकारैः स्वर्णादिधातुनिर्मितैः पिष्टमयैर्वा नवभिः पञ्चभिः सप्तभिर्वा दीपैः सयुतं स्वर्णादिपात्रं संस्थाप्य' 'ह्रीं इति प्रज्वाल्य, 'ह्रीं' इति सम्पूज्य, दीपमालां प्रार्थयेत् ।

फिर 'ॐ चण्डेश्वराय नमः' इस मन्त्र को पढ़कर निर्माल्य से पूजन करे, तथा 'ध्व्रूं फट् चण्डेश्वर' से 'स्वाहा' तक मन्त्र पढ़कर चण्डेश्वर के चरणोदक से बलि देकर 'लेह्य-चोष्यान्न' से आरम्भ कर 'श्रीशिवाज्ञया' तक श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे, पुनः नमस्कार कर उनका विसर्जन करे ।

तत्पश्चात् परदा हटाकर, आरती करना चाहिए । अपने आगे पूर्व रीति से चौकोर मण्डल बनाकर पूजन करे, उसपर स्वर्णपात्र में बने हुए अष्टदल-कमल पर कर्ष मात्र घृत में डुबोयी गयी डमरू के आकार की बत्तियों से युक्त सोने अथवा पिसान की बनी हुई नव पाँच अथवा सात दीपों से युक्त उस सुवर्ण पात्र को स्थापित करे। तत्पश्चात् 'ह्रीं' मन्त्र से दीपक को जलावे, फिर उसी मन्त्र से दीपक का पूजन करे, तथा

'ॐ ऐं ह्रीं ऐं महातेजोवति अमोघज्ञानप्रभामालिनि भगवति ऐं विच्चे क्लिन्ने नमः' इति प्रार्थ्य, चक्रमुद्रां प्रदर्श्य, भूगतजानुक उत्थाय तत्पात्रमामस्तकमुद्धृत्य, घण्टावादनपूर्वकं वैदिक-तान्त्रिक-मन्त्रान् पठन् देवोपरि भ्रामयेत्।

श्रिये जातः श्रिय आनिरियाय श्रियं वयोजरितृभ्यो दधाति।
श्रियं वसाना अमृतत्वमायन् भवन्ति सत्या समथामि तन्द्रौ ॥१॥

श्रीं ह्रीं ग्लूँ प्लूँ स्लूँ म्लूँ न्लूँ ह्रीं श्रीं।

अन्तस्तेजो बहिस्तेज एकीकृत्यामितप्रभम्।
त्रिधा दीपं परिभ्राम्य कुलदीपान्निवेदयेत् ॥ १ ॥

समस्तचक्रचक्रेशयुत देव नवात्मक!।
आरार्तिकं कपीश! त्वं गृहाण मम सिद्धये ॥ २ ॥

'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते आरार्तिकं समर्पयामि नमः' इत्यादिमन्त्रैः पादयोश्चतुर्नाभौ द्विर्मुखे सकृत् सर्वाङ्गे सप्तधा-

---

'ॐ ऐं ह्रीं' से लेकर 'क्लिन्ने नमः' तक मन्त्र पढ़कर दीपक की प्रार्थना करे। फिर चक्रमुद्रा प्रदर्शित कर, पृथ्वी पर अपने जानुओं को उठाता हुआ मस्तक पर्यन्त उठाकर घण्टा बजाते हुए तथा वैदिक तथा तान्त्रिक मन्त्रों को पढ़ते हुए देवता के ऊपर उसे घुमावे। वह वैदिक एवं तान्त्रिक मन्त्र इस प्रकार है - 'श्रिये जातः श्रिय' से आरम्भ कर 'ह्रीं श्रीं' तक पढ़े।

'अन्तस्तेजो बहिस्तेज' से आरम्भ कर 'श्रीहनुमते आरार्तिकं समर्पयामि नमः' तक पढ़कर पैर पर चार बार, नाभि पर दो बार, मुख पर एक बार तथा सर्वाङ्ग में सात बार आरती को घुमाकर, पुनः

ऽऽरार्तिकभाजनं परिभ्राम्य, तन्मण्डले स्थाप्य, तन्महः पश्यन्, बहिस्तेजः सविन्नेत्रद्वाराऽन्तःसंविद्रूपेण स्थितमिति ध्यायेत् ।

तत अञ्जलौ पुष्पाण्यादाय, 'साङ्गाय सपरिवाराय श्रीहनुमते मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्पयामि नमः ।' इति पुष्पाञ्जलिं दत्वा ।

छत्रं चामरयोर्युगं व्यजनकं चादर्शकं मर्दलं
भेरी-शङ्ख-मृदङ्ग-ताल-कहला गीतं च नृत्यं तथा ।
साष्टाङ्ग-प्रणतिं स्तुतिं बहुविधामेतत्समस्तं मया
सङ्कल्पेन समर्पितं तव विभो ! भोगाय ते नित्यशः ॥१॥

इति [1]राजोपचारान् समर्प्य, समाहितमनाः पठेत् ।

बुद्धिः सवासना क्लृप्ता दर्पणं मङ्गलानि च ।
मनोवृत्तिर्विचित्रा ते नृत्यरूपेण कल्पिता ॥१॥

आरती के उस पात्र को मण्डल पर रखे । पश्चात् उस ज्वाला की शोभा को देखता हुआ उस बाहरी तेज को अपने नेत्र के द्वारा भीतर स्थित कर ध्यान करे ।

तत्पश्चात् हाथ में पुष्पांजलि लेकर 'साङ्गाय सपरिवाराय—' पढ़कर मन्त्र-पुष्पांजलि समर्पित करे । तदनन्तर 'छत्र चामरयोर्युगं' से 'भोगाय ते नित्यशः' तक पढ़कर राजोचित समस्त उपचारों को समर्पित करते हुए 'बुद्धिः सवासना' से 'तवोपकरणात्मना' तक चार श्लोकों को

---

१. राजोपचाराः—

ततः पञ्चामृताभ्यङ्गमङ्गस्योद्वर्तनं तथा ।
मधुपर्कं परिमल-द्रव्याणि विविधानि च ॥
पादुकान्दोलनादर्शं व्यजनं छत्र-चामरे ।
वाद्यार्तिक्यं नृत्य-गीत-शय्या राजोपचारकाः ॥

—संस्कारभास्करे ।

ध्वनयो गीतरूपेण शब्दो वाद्यप्रभेदतः ।
मन एवातपत्रं च कल्पितं ते मया शिव ! ॥२॥
सुषुम्णा ध्वजरूपेण प्राणाद्याश्चामरात्मना ।
अहङ्कारो गजत्वेन वेगः क्लृप्तो रथात्मना ॥३॥
इन्द्रियाण्यश्वरूपाणि शब्दादिरथनेमिना ।
नमः प्रग्रहरूपेण बुद्धिः सारथिरूपतः ।
सर्वमन्यत्तथा क्लृप्तं तवोपकरणात्मना ॥४॥

इति पठित्वा, पूर्वोक्त-ऋष्यादिन्यास-पूर्वकं मूलमन्त्रं यथाशक्ति जप्त्वा, जपं समर्पयेत् ।

गुह्याऽतिगुह्यगोप्ता त्वं गृहाणाऽस्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देव ! त्वत्प्रसादान्महेश्वर ! ॥१॥

इति सामान्यार्घोदकेन देवदक्षिणकरे जपं समर्प्य, दण्डवत् प्रणम्य, अर्धप्रदक्षिणां कुर्यात् । ततः कवच-सहस्रनाम-स्तोत्रादिभिः स्तुत्वा प्रार्थयेत् ।

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं तु यद्भवेत् ।
तत्सर्वं कृपया देव ! क्षमस्व परमेश्वर ! ॥ १ ॥

पढ़कर पूर्वोक्त ऋष्यादि न्यास करे । यथाशक्ति मूल मन्त्र का जप कर, 'गुह्याऽतिगुह्य' श्लोक पढ़कर सामान्यरूप से अर्घ्य देते हुए देवता के दाहिने हाथ में जप समर्पित करे । और साष्टांग प्रणाम कर हाथ से आधी प्रदक्षिणा करे । पश्चात् हनुमत्कवच, सहस्रनाम तथा स्तोत्र आदि का पाठ कर 'मन्त्रहीनं' से लेकर 'क्षमस्व परमेश्वर' तक पाँच श्लोकों को पढ़ता हुआ प्रार्थना करे ।

यन्मया क्रियते कर्म जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्तिषु ।
तत्सर्वं तावकी पूजा भूयाद् भूत्यै नमः शिव ! ॥ २ ॥

भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवाऽवलम्बनम् ।
त्वयि जाताऽपराधानां त्वमेव शरणं प्रभो ! ॥ ३ ॥

अपराधो भवत्येव सेवकस्य पदे पदे ।
कोऽपरः सहते लोके केवलं स्वामिनं विना ॥ ४ ॥

अपराध - सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया ।
दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ! ॥ ५ ॥

इति प्रार्थ्य, चुलुके शङ्खोदकमादाय, 'ॐ इतः पूर्वं प्राण-बुद्धि--देह-धर्माधिकारतो जाग्रत्-स्वप्न-सुषुप्त्यवस्थासु मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना यत्स्मृतं यदुक्तं यत्कृतं तत्सर्वं ब्रह्मार्पणं भवतु स्वाहा, मां मदीयं सकलं हनुमते ते समर्पये ॐ तत्सत्' इति मन्त्रेणाऽऽत्मानं समर्प्य, शङ्खमुद्धृत्य ।

साधु वाऽसाधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया ।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव ! गृहाणाऽऽराधनं मम ॥१॥

इति मन्त्रेण देवोपरि तं त्रिः परिभ्राम्य, किञ्चिज्जलं देव-दक्षिणकरे समर्प्य, अवशिष्टजलेनाऽऽत्मानं प्रोक्ष्य, शङ्खं यथा-

---

तदनन्तर अंजलि में शंख के जल को लेकर 'ॐ इतः पूर्वं' से 'ॐ तत्सत्' तक मन्त्र पढ़कर आत्मसमर्पण करे। फिर शंख को ऊपर उठाकर 'साधु वाऽसाधु' से 'मम' तक श्लोक पढ़कर मूर्ति पर शंख को तीन बार घुमावे तथा शंखस्थित कुछ जल, देवता के दाहिने हाथ में समर्पण कर, बचे हुए जल से अपने को अभिषिंचित करे। शंख को यथा-

स्थाने निधाय, तं गन्धाऽक्षत-पुष्पैः सम्पूज्य, पुष्पाञ्जलिमादाय।

रश्मिरूपा महादेवा अत्र पूजित-देवताः।
हनुमदङ्गलीनास्ताः सन्तु सर्वाः सुखावहाः॥ १॥

इति समर्प्य, आवरणदेवताः प्रधानदेवाङ्गे लीना विभाव्य, 'क्षमस्व' इतिवदन्, तालत्रयेण देवं प्रबोध्य, तं तेजोमयं ध्यायन्।

गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वर!।
यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम्॥ २॥

इति [1]संहारमुद्रया तं निर्माल्य-पुष्पद्वारा समुधृत्याऽऽघ्राय, पूरकेन सहस्रदलकमलं प्रापय्य, तत्र क्षणं तेजोमयं ध्यात्वा, सुषुम्णया हृदयारविन्दमानीय पूर्ववद्ध्यात्वा, मानसोपचारैः सम्पूज्य, षडङ्गेन सङ्कलीकृत्य, मूलं दशधा प्रजप्य, क्षणं विश्राम्य,

---

स्थान रखकर, उसे गन्ध, अक्षत, पुष्प से पूजन कर, पुष्पांजलि लेकर 'रश्मिरूपा महादेवा०' श्लोक पढ़कर पुष्प समर्पित करे और आवरण देवताओं को हनुमान् जी के अंग में लीन होने की भावना करे। 'क्षमस्व' ऐसा पढ़कर तीन बार ताली बजा कर, हनुमान् जी को जगाकर, उनके तेजोमय शरीर का ध्यान करे।

पश्चात् 'गच्छ गच्छ परं स्थानं' श्लोक उच्चारण कर संहारमुद्रा से निर्माल्य-पुष्पद्वारा उस मूर्ति को उठाकर सूँघकर, पूरक प्राणायाम के द्वारा हृदयस्थ सहस्रदल कमल पर उन्हें रखकर, उनके तेजोमय स्वरूप का ध्यान करे, और सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा हृदयारविन्द पर उस तेज को बिठाकर, पूर्ववत् ध्यान करे। पुनः मानसपोचार से पूजन तथा षडंग न्यास करे। फिर मूल मन्त्र का दस बार जप कर,

---

१. संहारमुद्रा—ग्राह्यस्योपरि हस्तं प्रसार्य, कनिष्ठिकादि-तर्जन्यन्तानामङ्गुलीनां क्रमसङ्कोचनेनाऽङ्गुष्ठमूलानयनात् संहारमुद्रा।

पुनः कुण्डलीरूपेणाऽऽधारादि-ब्रह्मरन्ध्रान्तव्याप्तं ध्यायन्नाधारे स्थापयेत् ।

ततः शान्तिपाठं कृत्वा, श्रीगुरुं प्रार्थ्य, ताम्रपात्रे गन्ध-पुष्पोदकमादाय, 'ह्रीं ह्रीं हंसः श्रीसूर्याय एषोऽर्घ्यः स्वाहा ।' इति सूर्यायाऽऽर्घ्यं दत्वा प्रार्थयेत् ।

यज्ञच्छिद्रं तपच्छिद्रं यच्छिद्रं पूजने मम ।
तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु भास्करस्य प्रसादतः ॥ १ ॥

इति प्रार्थ्य, मूलेन प्राणानायम्य, ऋष्यादिकं विन्यस्य, निर्माल्यपुष्पं शिरसि धृत्वा, चरणोदकं स्वीकृत्य, स्वात्मानं श्रीहनुमत्स्वरूपं ध्यायन्, यथासुखं विहरेत् ।

ब्रह्मयज्ञम्- अथ ब्रह्मयज्ञं योगक्षेमं कुर्यात् । ततो मध्याह्ने स्नात्वा, सन्ध्या-तर्पणपुरःसरं प्राग्वत्पूजां वैश्वदेवं च कृत्वा,

---

क्षणभर उन्हें विश्राम कराये, फिर कुण्डली रूप से आधारादि ब्रह्मरन्ध्र तक उन्हें व्याप्त समझकर नाभि स्थित आधार पर्यन्त स्थान पर उन्हें स्थापित करे ।

तदनन्तर शान्तिपाठ कर, श्री गुरु की प्रार्थना करे। ताम्र पात्र में गन्ध एवं पुष्पोदक लेकर, 'ह्रीं ह्री हंसः०' इसको पढ़कर सूर्य को अर्घ्य प्रदान करे। तथा 'यज्ञच्छिद्रं तपच्छिद्रं' श्लोक पढ़कर प्रार्थना करे। एवं मूल मन्त्र को पढ़कर प्राणायाम करे और ऋष्यादि न्यास करे। निर्माल्य पुष्प को अपने सिर पर धारण करे। पश्चात् हनुमान् जी के चरणोदक को लेकर अपने को श्रीहनुमान् जी जैसा भावना करे। तदनन्तर यथासुख निवास करे।

ब्रह्मयज्ञ—तदनन्तर अपने योगक्षेम कारक ब्रह्मयज्ञ करे। पश्चात् मध्याह्न में स्नान कर, सन्ध्या, तर्पण कर, पुनः पूजा तथा वैश्वदेव

ब्राह्मणैः सह श्रीहनुमत्प्रसादं स्वीकृत्य, आचम्य, यथोक्त-गण्डूषादिना मुखशुद्धिं विधाय, देवं स्मरन् पुराणं शृणुयात्।

ततः सायङ्काले सन्ध्योपासनादि-देवपूजनान्तं कर्मा-ऽग्नि-होत्रं च कृत्वा, शुद्धशय्यायां देवं स्मरन् शयनं कुर्यात्।

एवं यः पूजयेद् देवं त्रिकालं धर्ममाचरन्।
न पीडयतेऽरिदुःखौघैः स नरो हररक्षितः ॥ १ ॥
त्रिकालपूजनाशक्तः कुर्याद् द्विः सकृदप्यथ।
विशेषेण यजेद् देवं सङ्क्रान्त्यादिषु पर्वसु ॥ २ ॥
दशभिः पञ्चभिर्वाऽपि पूजयेदुपचारकैः।
पूजां कर्तुमशक्तश्चेद् दद्यादर्चनसाधनम् ॥ ३ ॥

करके ब्राह्मणों के साथ श्रीहनुमत्प्रसाद को ग्रहण करे, और आचमन करे तथा शास्त्रीय रीति के अनुसार कुल्ला कर मुखशुद्धि करे। फिर हनुमान् जी का स्मरण करता हुआ पुराण श्रवण करे।

तदनन्तर सायंकाल में सन्ध्योपासन से लेकर देव-पूजन एवं अग्नि-होत्र कर्म करे। और शुद्ध शय्या पर हनुमान्जी का स्मरण करता हुआ शयन करे।

श्लोकार्थ—इस प्रकार धर्म का आचरण करता हुआ जो व्यक्ति त्रिकाल (प्रातः, मध्याह्न, सायं) हनुमान् जी का पूजन करता है, उसे शत्रुजन्य पीड़ा कदापि नहीं होती। वह सदैव शंकर से परिरक्षित रहता है ॥१॥ त्रिकालपूजन में असमर्थ जो व्यक्ति दो काल अथवा एक काल की संक्रान्ति अथवा पर्व (अमावस्या, पौर्णमासी) के दिन विशेष रूप से दशोपचार तथा पंचोपचार से देवता का पूजन करता है अथवा पूजन करने में असमर्थ व्यक्ति केवल पूजा की सामग्री भी प्रदान करता है, अथवा पूजन करने में या पूजा की सामग्री प्रदान करने में असमर्थ जो

दानाशक्तः समर्चन्तं पश्येत् तत्परमानसः ।
पूजायाः साधनाभावे कुर्याच्छुद्धाम्भसा व्रती ॥ ४ ॥
सूतकी वा तु रोगी वा न स्नायान्न च पूजयेत् ।
विलोक्य मूर्ति देवस्य यदि वा सूर्यमण्डलम् ॥ ५ ॥
सकृन्मूलमनुं जप्त्वा तत्र पुष्पं विनिक्षिपेत् ।
ततस्तस्मिन् गते स्नात्वा पूजयित्वा गुरुं द्विजान् ॥ ६ ॥
पूजाविच्छेददोषो मे माऽस्त्विति प्रार्थयेत्ततः ।
तेभ्यश्चाऽऽशिषमादाय देवेशं पूजयेद् यजेत् ॥ ७ ॥
स्वयं सम्पाद्य सर्वाणि श्रद्धया साधनानि यः ।
पूजयेत् तत्परो देवं स लभेदखिलं फलम् ॥ ८ ॥
पूजने तु फलार्धः स्यादन्यदत्तैस्तु साधनैः ।
तस्मात् स्वयं समानीय साधनान्यर्चनं चरेत् ॥ ९ ॥

व्यक्ति एकचित्त हो केवल पूजा को देखता है, पूजा-सामग्री के अभाव में जो व्यक्ति शुद्ध चित्त से व्रत कर केवल जल से अर्घ्य देता है ॥२-४॥ सूतकी अथवा रोगी होने के कारण व्रती यदि स्नान एवं पूजन न कर सके तो देवविग्रह अथवा सूर्यमण्डल का दर्शन सूतक की निवृत्ति अथवा आरोग्य होने पर स्नान कर पुष्पार्पण द्वारा कहे कि, हे भगवन् ! मेरे पूजा के विच्छेद का दोष मुझे न लगे । फिर गुरु की पूजा कर उनका आशीर्वाद लेकर पुनः देवेश का यजन एवं पूजन करे ॥५-७॥ पूजा की सामग्री स्वयं श्रद्धापूर्वक इकट्ठा करे एवं तन्मनस्क होकर देवादिदेव का पूजन करे तो उसे समस्त फल की प्राप्ति हो जाती है ॥८॥

साधक यदि दूसरे के द्वारा सम्पादित साधन से पूजा करता है, तो उसे पूजा का आधा फल प्राप्त होता है, इसलिए सम्पूर्ण फल की

देवपूजाविहीनो यः स नरो नरकं पचेत् ।
तस्माच्छक्त्या तु देवार्चा विधेया श्रद्धयान्वितैः ॥१०॥
वेदेषु-नन्द-चन्द्राब्दे माघे भौमदिने मिते ।
दशम्यां सज्जयपुरे कपीशार्चनपद्धतिः ॥११॥
गौडविप्रान्वयोत्पन्न-रामचन्द्रतनूभुवा ।
नाथूनारायणेनेयं निर्मिता प्रीतये सताम् ॥१२॥
आचन्द्रभास्करं सैषा विराजतु महीतले ।
दयया कपिराजस्य लोकप्राणस्वरूपिणः ॥१३॥

इति पण्डित-श्रीसन्तशरणमिश्रात्मज-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचिते हनुमद्-रहस्ये श्रीगौडवंशवर्य-चतुर्वेदिरामचन्द्रात्मज-नाथूनारायण-शर्मणा विरचिता श्रीहनुमत्पूजापद्धतिः सम्पूर्णा ।

—*—

प्राप्ति के हेतु स्वयं पूजा सामग्री श्रद्धापूर्वक एकत्रित कर देवादिदेव का पूजन करे ॥९॥ जो लोग देवादिदेव का पूजन नहीं करते, वे निश्चय ही नरकगामी होते हैं। इसलिए यथाशक्ति श्रद्धापूर्वक नित्य देव-पूजा करनी चाहिए ॥१०॥

सं० १९५४ के माघ शुक्ल दशमी भौमवार को मैंने जयपुर में श्रीहनुमत्पूजा-पद्धति का निर्माण किया ॥११॥ सज्जनों की प्रीति के लिए गौडवंशोत्पन्न रामचन्द्र के पुत्र श्रीनाथूनारायण ने इस पद्धति का निर्माण किया ॥१२॥ लोक में प्राणस्वरूप श्रीकपिराज हनुमान् की कृपा से जब तक पृथ्वी पर सूर्य एवं चन्द्रमा विराजमान रहें तब तक, यह पद्धति अमर रहे ॥१३॥

इस प्रकार पण्डित श्रीसन्तशरणमिश्रात्मज-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्या सहित हनुमद्-रहस्य में गौडवंशावतंस चतुर्वेदि रामचन्द्रात्मज श्रीनाथूनारायणशर्माकृत हनुमत्पूजापद्धति समाप्त ।

हनुमत्पटलम्

अथोच्यते हनुमतो मन्त्राः सर्वेष्ट-साधकाः ।
इन्द्र-स्वरेन्दु-संयुक्तो वराहो ह-स-फाग्नयः ॥ १ ॥
झिंटीश-बिन्दु-संयुक्तं द्वितीयं बीजमीरितम् ।
गादि-पान्ता-ऽग्नि-रुद्रेन्दु-संयुतः स्यात्तृतीयकम् ॥ २ ॥
ह-स-रा-मनु-चन्द्राढ्यं चतुर्थं ह-स-खाः फ-रौ ।
शिवेन्द्वाढ्यौ पञ्चमं स्यात् ह-सौ मन्विन्दुगौ परम् ॥ ३ ॥

एक समय भगवती पार्वती ने राम के अनन्य भक्तों के परम सेवनीय अंजनीसुत हनुमान् जी के मन्त्र का निरूपण करिए? इस प्रश्न के उत्तर में शंकर जी ने कहा कि,हे देवि पार्वति ! आपने समस्त प्राणिमात्र के हित की इच्छा से बहुत सुन्दर प्रश्न किया, अतः राम के अत्यन्त प्रिय दूत तथा मेरे अंशभूत श्री हनुमान् जी के मन्त्र का निरूपण मैं करता हूँ, जो इस प्रकार है। इन्द्रस्वर=औ, इन्दु = ँ, वराह = ह, इस प्रकार 'इन्द्रस्वरेन्दु-संयुक्तो वराह' इस पद से 'हौं' यह प्रथमबीज, ह–स–फ = ह् स् फवर्ण, अग्नि = र, झिंटीश = ए, बिन्दु = ँ इस तरह 'ह-स-फाग्नयः झिंटीश-बिन्दुसंयुक्तं' इसपदसे 'ह्स्फ्रें' यह द्वितीयबीज, गादि=ख, पान्त = फ, अग्नि = र, रुद्र = ए, इन्दु = ँ इस प्रकार 'गादिपान्ताऽग्नि-रुद्रेन्दु-संयुतः' इस पद से 'ख्फ्रें' यह तीसरा बीज, ह-स-रा = ह–स्, र्, मनु = औ, चन्द्र = ँ इस प्रकार 'ह-स-रा-मनु-चन्द्राढ्यं', इस पद से 'ह्स्रौं' यह चतुर्थ बीज, 'ह-स-खाः फ-रौ = ह्-स्-ख्-फ्-र् शिव = ए, इन्दु = ँ इस तरह 'ह-स खाः फ-रौ शिवेन्द्वाढ्यौ' इस से 'ह्स्ख्फ्रें' यह पंचम बीज, ह-सौ = ह् स्, मनु = औ, इन्दु = ँ इस प्रकार 'ह-सौ मन्विन्दु' इस पद से 'ह्–सौं यह छठा बीज, इसी प्रकार चतुर्थी विभक्ति से युक्त 'हनुमत्' शब्द के आगे हार्द्र = 'नमः' पद के योग से 'ॐ ह्रौं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं

ङेयुतो हनुमान् हार्द मन्त्रोऽयं द्वादशाक्षरः ।
रामचन्द्रो मुनिश्चाऽस्य जगतीच्छन्द ईरितः ॥ ४ ॥
हनुमान् देवता बीजं षष्ठं शक्तिर्द्वितीयकम् ।
षट्बीजैरङ्गषट्कं स्यान्मूर्ध्नि भाले दृशोर्मुखे ॥ ५ ॥
कण्ठे च बाहु-द्वितये हृदि कुक्षौ च नाभितः ।
लिङ्गे जानुद्वये पादद्वये वर्णान् क्रमान् न्यसेत् ॥ ६ ॥
षड्बीजानि पदद्वन्द्वं मूर्ध्नि भाले मुखे हृदि ।
नाभावूर्वो र्जङ्घयोश्च पादयोर्विन्यसेत् क्रमात् ॥ ७ ॥
मूलमन्त्रं समुच्चार्य सर्वाङ्गे व्यापकं चरेत् ।
ततो ध्यायेदाञ्जनेयं स्व-हृत्पद्मेऽखिलाप्तये ॥ ८ ॥

हस्ख्फ्रें ह्स्रौं हनुमते नमः' यह द्वादशाक्षर मन्त्र निर्मित हुआ । इस हनुमान् मन्त्र के रामचन्द्र मुनि, जगती छन्द, ॥ १-४ ॥ हनुमान् देवता, छह बीज तथा अंजनीसूनु शक्ति है । इन छह बीजों से युक्त द्वादशाक्षर मन्त्र के प्रत्येक वर्ण से क्रमशः मस्तक, कपाल, दोनों नेत्र, मुख, कण्ठ, दोनों भुजाएँ हृदय, कुक्षि, नाभि, लिंग, दोनों घुटना और पैर में वर्ण-न्यास करे ॥५-६॥

इसी प्रकार दोनों पैर, मस्तक, कपाल, मुख, हृदय, नाभि, घुटना तथा दोनों जँघाओं में छह बीज द्वारा क्रम से न्यास करे ॥ ७ ॥ इसके बाद द्वादशाक्षर मूल मन्त्र का उच्चारण कर, समस्त अंगों में आठ बार व्यापक मुद्रा प्रदर्शित करे । तदनन्तर अभीष्ट समस्त सिद्धि प्राप्ति के लिए, हृदय-कमल में स्थित, अंजनीपुत्र हनुमान् जी का इस प्रकार ध्यान करे ॥ ८ ॥

---

१. 'ह्रौं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं हनुमते नमः' इति द्वादशाक्षरो मन्त्रः श्रीहनुमतो बोद्धव्यः ।

बालार्का-ऽयुत-तेजसं त्रिभुवन-प्रक्षोभकं सुन्दरं
सुग्रीवादि-समस्त-वानरगणैराराधितं साऽञ्जलिम् ।
नादेनैव समस्त-राक्षसगणान् सन्त्रासयन्तं प्रभुं
श्रीमद्राम-पदाम्बुज-स्मृतिरतं ध्यायामि वातात्मजम् ॥९॥

एवं ध्यात्वा जपेदर्क-सहस्रं जितमानसः ।
दशांशं जुहुयाद् ब्रीहीन् पयो-दध्याज्य-संयुतान् ॥१०॥

विमलादियुते पीठे पूजा कार्या हनूमतः ।
केशरेष्वङ्गपूजा स्याद् दलेष्वन्यांस्तदा ह्वयान् ॥११॥

रामभक्तो महातेजा कपिराजो महाबलः ।
द्रोणाद्रिहारको मेरुपीठकार्चनकारकः ॥१२॥

ध्यान—करोड़ों बालसूर्य के समान तेजस्वी, तीनों लोक को क्षुब्ध करनेवाले, अत्यन्त सुन्दर एवं हाथ जोड़े हुए, सुग्रीवादि सम्पूर्ण वानरगणों से सेवित, अपने हुंकारमात्र से ही समस्त राक्षसगणों को भयभीत करने में समर्थ, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के चरण-कमलों की सेवा में निरन्तर रत ऐसे वायुपुत्र हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥९॥

इस प्रकार मानसिक ध्यान कर जितेन्द्रिय होता हुआ साधक को चाहिए कि वह द्वादशाक्षर मूलमन्त्र का बारह हजार जप करे। तत्पश्चात् दूध, दही, घृत मिश्रित ब्रीही (चावल) से जप का दशांश (बारह सौ) हवन करे ॥१०॥

तत्पश्चात् विमलादियुत सिंहासन पर हनुमान् जी का पूजन करे। तथा कमलपराग में हनुमान् जी के प्रत्येक अंग का पूजन करते हुए उस अष्ट कमलदल में रामभक्त, महातेजा, महाबली कपिराज, द्रोणाद्रिहारक

दक्षिणाशां भास्करश्च सर्वविघ्न-निवारकः ।
एवं सम्पूज्य नामानि दलाग्रेषु च वानरान् ॥१३॥
सुग्रीवमङ्गदं नीलं जाम्बवन्तं नलं तथा ।
सुषेणं द्विविदं मैन्दं पूजयेद् दिक्पतीनपि ॥१४॥
एवं सिद्धे मनौ मन्त्री स्व-परेष्टं प्रसाधयेत् ।
कदली-बीज-पूरा-ऽऽम्रफलैर्हुत्वा सहस्रकम् ॥१५॥
द्वाविंशति-ब्रह्मचारि-विप्रान् सम्भोजयेदथ ।
एवं कृते महाभूत-विष-चौराद्युपद्रवाः ॥१६॥
नश्यन्ति क्षणमात्रेण विद्वेषि-ग्रह-दानवाः ।
अष्टोत्तरशतं वारि मन्त्रितं विषनाशनम् ॥१७॥
रात्रौ नव-शतं मन्त्रं जपेद् दशदिनावधि ।
यो नरस्तस्य नश्यन्ति राजशत्रूत्थ-भीतयः ॥१८॥

मेरुपीठकार्चनकारक, दक्षिणाशा, भास्कर और सर्वविघ्ननिवारक इन आठ नामों का पूजन कर, उस दल के अग्र भाग में सुग्रीव, अंगद, नील, जाम्बवन्त, नल, सुषेण, द्विविद मैन्द नामक वानर तथा दश दिक्पालों का पूजन करे ॥११-१४॥ इस प्रकार साधक-गण हनुमन्मन्त्र को सिद्ध कर, अपने और दूसरे भी इष्ट कार्य को सम्पन्न करें। कदली बीज, पूर एवं आम्रफल से हजार बार हवन कर, बाईस ब्राह्मण ब्रह्मचारियों को भोजन करावे। इस प्रकार करने पर महाभूत, विष तथा चोर आदि का उपद्रव एवं चतुर्थ, अष्टम, द्वादश स्थान स्थित क्रूरग्रह तथा दानवादिकों का भय आदि क्षणमात्र में नष्ट हो जाते हैं। एक सौ आठ बार हनुमन्मन्त्र-द्वारा अभिमन्त्रित जल विष नष्ट करने से अचूक रामबाण है ॥१५-१७॥ जो साधक दस दिन तक रात्रि में नव सौ बार जप करता है उसके

अभिचारोत्थ-भूतोत्थ-ज्वरे तन्मन्त्रमन्त्रितैः ।
भस्मभिः सलिलैर्वाऽपि ताडयेज्ज्वरिणं क्रुधा ॥१९॥
दिनत्रयाज्ज्वरान्मुक्तः स सुखं लभते नरः ।
तन्मन्त्रितौषधं जग्ध्वा नीरोगो जायते ध्रुवम् ॥२०॥
तन्मन्त्रितं पयः पीत्वा योद्धुं गच्छेन्मनुं जपन् ।
तज्जप्त-भस्म-लिप्ताङ्गः शस्त्रसङ्घैर्न बाध्यते ॥२१॥
शस्त्रक्षतं व्रणः शोफो लूता-स्फोटोऽपि भस्मना ।
त्रिमन्त्रितेन संस्पृष्टाः शुष्यन्त्यचिरतो नृणाम् ॥२२॥
सूर्यास्तमयमारभ्य जपेत् सूर्योदयावधि ।
कीलकं भस्म चादाय सप्ताहावधि संयुतः ॥२३॥

राजा एवं शत्रु-द्वारा की हुई समस्त आपत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं ॥१८॥ महामारी तथा भूत-प्रेतादि-जन्य ज्वर में हनुमन्मन्त्र-द्वारा अभिमन्त्रित भस्म एवं जल से अत्यन्त क्रुद्ध मुद्रा से रोगी पर तीन दिन फेंकने (छिड़कने) से उक्त रोगी निश्चय ही ज्वर से मुक्त हो सुखी होता है। उसी प्रकार हनुमन्मन्त्र-द्वारा अभिमन्त्रित औषधि के खाने से निश्चय ही रोगी रोगमुक्त हो जाता है ॥१९-२०॥

इसी प्रकार हनुमन्मन्त्र से अभिमन्त्रित चरणामृत का पान तथा हनुमन्मन्त्र-द्वारा अभिमन्त्रित भस्म से लिप्त प्राणी श्रीहनुमत्स्मरण करता हुआ यदि युद्ध में जाय, तो वह प्राणी शस्त्रासमूह से कभी पीड़ित नहीं होता ॥२१॥ इतना ही नहीं, अपितु तीन बार अभिमन्त्रित भस्म शरीर में लगा लेने पर उस मनुष्य के शस्त्र का घाव व्रण (फोड़ा-फुन्सी), शोफ, महामारी, बड़े-बड़े घाव आदि शीघ्र ही सूख जाते हैं ।२२॥ सूर्यास्त से लेकर सूर्योदय पर्यन्त सात दिन तक जप करता हुआ प्राणी

निखनेत् भस्मकीलौ तौ विद्विषां कार्यलक्षितः ।
विद्वेषमित्थमायान्ति पलायन्तेऽरयो चिरात् ॥२४॥
अभिमन्त्रित-भस्माम्बु देहचन्दनसंयुतम् ।
खाद्यादि-योजितं यस्मै दीयते सततं ज्वरात् ॥२५॥
क्रूराश्च जन्तवोऽनेन भवन्ति विधिना वशाः ।
ईशान-दिक्स्थमूलेन भूताङ्कुशतरोः शुभाम् ॥२६॥
अङ्गुष्ठमात्रां प्रतिमां प्रविधाय हनूमतः ।
प्राणसंस्थापनं कृत्वा सिन्दूरैः परिपूज्य च ।२७॥
गृहस्याऽभिमुखीं द्वारे निखनेन्मन्त्रमुच्चरन् ।
भूता-ऽभिचार-चौरा-ऽग्नि-विषरोग-नृपोद्भवाः ।२८॥

भस्म एवं कील (काँटा) को लेकर शत्रु के द्वार पर बिना जाने हुए गाड़ देने से वश में होते हैं तथा शीघ्रातिशीघ्र भाग जाते हैं ॥२३-२४॥ हनुमन्मन्त्र जपनेवाले प्राणी के शरीर में लगे हुए चन्दन एवं हनुमन्मन्त्राभिमन्त्रित भस्मजल ज्वराक्रान्त प्राणी को भोजन के पूर्व इन वस्तुओं को देने से ज्वर नष्ट होता है। और इसी विधि से क्रूर जन्तु आदि वश में होते हैं। ईशानकोण में स्थित करंज वृक्ष के नीचे श्रीहनुमान् की अंगुष्ठ प्रमाण सुन्दर मूर्ति बनाकर तथा विधि-विधान से उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर, सिन्दूर आदि से भलीभाँति पूजन कर, मूल मन्त्र का जप करता हुआ गृहद्वार के सम्मुख उस मूर्ति को गाड़ देने से भूत-प्रेतादि दोष, चोर, अग्नि, विषजन्य रोग, राजभय आदि उपद्रव उस गृह में कभी भी

१. 'स च दासवत्' इति पाठान्तरम् ।

सञ्जायन्ते गृहे तस्मिन्न कदाचिदुपद्रवाः ।
प्रत्यहं धन-पुत्राद्यैरेधते तद्गृहं चिरम् ॥ २९ ॥
निशि श्मशान-भूमिस्थ-भस्मना मृत्स्नयाऽपि वा ।
शत्रोः प्रतिकृतिं कृत्वा हृदि नाम समालिखेत् ॥ ३० ॥
कृतप्राणप्रतिष्ठां तां भिन्द्याच्छस्त्रैर्मनुं जपन् ।
मन्त्रान्ते प्रोच्चरेच्छत्रोर्नाम छिन्धि च भिन्धि च ॥ ३१ ॥
मारयेति च तस्याऽन्ते दन्तैरोष्ठं निपीड्य च ।
पाण्योस्तले प्रपीड्याऽथ त्यक्त्वा तां सदनं व्रजेत् ॥ ३२ ॥
एवं सप्तदिनं कुर्वन् हन्याच्छत्रुं शिवेरितम् ।
अर्धचन्द्राकृतौ कुण्डे स्थण्डिले वा हुतं चरेत् ॥ ३३ ॥
मुक्तकेशः श्मशानस्थो लवणैराजिकायुतैः ।
उन्मत्त-फल-पुष्पैश्च नख रोम-विषैरपि ॥ ३४ ॥

नहीं होते। तथा उस घर में प्रतिदिन निरन्तर धन, पुत्र आदि बढ़ते ही रहते हैं ॥ २५-२९ ॥

रात्रि में श्मशान भूमि की चिता की भस्म अथवा मिट्टी से शत्रु की मूर्ति बनाकर, उस मूर्ति के हृदय में शत्रु का नाम लिखे। तत्पश्चात् उस मूर्ति की प्राण-प्रतिष्ठा कर, हनुमन्मन्त्र को जपता हुआ एवं मन्त्र के अन्त में शत्रु का नाम लेता हुआ तथा 'छिन्धि भिन्धि मारय' इस प्रकार कहता हुआ शस्त्र द्वारा उस प्रतिमा को काटे। तदनन्तर दाँत से ओठ को चबाता हुआ उस प्रतिमा की हथेली आदि को दबाकर और उसको श्मशान में ही छोड़कर, अपने घर जाये। इस प्रकार सात दिन तक शंकर द्वारा निर्दिष्ट इस विधि को करता हुआ शत्रु को नष्ट करे ॥ ३०-३२½ ॥ श्मशान में मुक्त केश होते हुए नमक, राई, धतूरे का फल, पुष्प, नख, रोम,

काक-कौशिक-गृध्राणां पक्षैः श्लेष्मान्तकाक्षजैः ।
समिद्वरैश्च त्रिशतं दक्षिणाशामुखो निशि ॥ ३५ ॥
सप्तघस्रानिदं कुर्यान्मारयेद्रिपुमुद्धतम् ।
शतषट्कं जपेद्रात्रौ श्मशाने दिवसत्रयम् ॥ ३६ ॥
ततो वेताल उत्थाय वदेद् भावि शुभाऽशुभम् ।
उदितं कुरुते सर्वं किङ्करीभूय मन्त्रिणः ॥ ३७ ॥
हनुमत्प्रतिमां भूमौ विलिखेत् तत्पुरो मनुम् ।
साध्यनाम द्वितीयान्तं विमोचय विमोचय ॥ ३८ ॥
तत्सर्वं मार्जयेद् वामहस्तेनाऽथो पुनर्लिखेत् ।
एवमष्टोत्तरशतं लिखित्वा मार्जयेत् पुनः ॥ ३९ ॥

विष, कौवा, उलूक, गीध के पंख, श्लेष्मान्तक, अक्षज, सुन्दर तीन सौ समिधा की लकड़ी से दक्षिण मुख होकर सात रात्रि पर्यन्त अर्ध चन्द्राकार वाले कुण्ड एवं वेदी में हवन करने से उद्दण्ड शत्रु का भी मारण अवश्य होता है ॥ ३२½-३५½ ॥

तीन दिन तक श्मशान में छह सौ जप रात्रि में करने के बाद वेताल स्वयं प्रकट होकर, भविष्य के शुभाशुभका वर्णन करता है। तथा मन्त्र जप करनेवाले पुरुष का वह वेताल सदा के लिए सेवक बनकर उसका समस्त कार्य करता है॥३५½-३७॥ कारागार में पड़े हुए मनुष्य का नाम द्वितीयान्त पद से लिखकर, उसके आगे 'विमोचय विमोचय' ऐसा लिखकर, बायें हाथ द्वारा जल से भूमि में लिखे हुए मन्त्र युक्त हनुमत्प्रतिमा का मार्जन करे। इसी प्रकार एक सौ आठ बार उसी प्रकार लिखकर मार्जन करने से उपर्युक्त मनुष्य शीघ्र ही कारागार (जेलखाने) के बन्धन से मुक्त हो जाता है ॥३८-३९½ ॥

एवं कृते पराधीना मुच्यते निगडाद् क्षणात् ।
एवं विद्वेषणादीनि कुर्यात् तत्पल्लवं लिखन् ॥ ४० ॥
वश्यार्थं सर्षपैर्होमो विद्वेषे करवीरजैः ।
कुसुमैरिध्मकाष्ठैर्वा जीरकैर्मरिचैरपि ॥ ४१ ॥
ज्वरे दूर्वा-गुडूचीभिर्दध्ना क्षीरेण वा घृतः ।
शूले होमः कुबेराक्षैरेरण्ड-समिधा तथा ॥ ४२ ॥
तैलाक्ताभिश्च निर्गुण्डी–समिद्भिर्वा प्रयत्नतः ।
सौभाग्यचन्दनैश्चन्द्रै रोचनैला-लङ्गकैः ॥ ४३ ॥
सुगन्धपुष्पैर्वस्त्राप्तो तत्तद्धान्यैस्तदाप्तयं ।
तत्पादरजसा राजी-लवणाक्तेन मृत्यवे ॥ ४४ ॥

इसी तरह मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन आदि के लिए द्वितीयान्त साध्य नाम के आगे 'मारय मारय, मोहय मोहय, उच्चाटय उच्चाटय, नाशय नाशय, विद्रावय विद्रावय' आदि पदोंसे युक्त हनुमन्मन्त्र के जप करने से उस साधक के समस्त कार्य सिद्ध होते हैं ॥ ३९½-४०॥

वशीकरण के लिए सरसों, विद्वेषण (मारण) के लिए करंज, कुसुम पुष्प, इध्मकाष्ठ, जीरा, मीरिच, ज्वर के लिए दूब गुरूच, दही, दूध, घृत, शूल के कुबेराक्ष (सागर गोटा' महाराष्ट्र भाषा में), रेंड़, निर्गुण्डी, समिधा, तेल में डूबे हुए उपर्युक्त वस्तुएँ हवन करे ॥४१-४२½॥ जिस-जिस अन्नकी प्राप्ति करने की इच्छा हो उस-उस अन्न द्वारा हवन करने से उस अन्न की प्राप्ति होती है। वस्त्र-प्राप्ति के लिए सौभाग्य चन्दन, कपूर, गोरोचन, इलायची, लवंग तथा सुगन्धित पुष्प से हवन करे। राजी (राई), नमक से युक्त शत्रु के पैर की धूलि से हवन करने से

किं बहूक्तैर्विषे व्याधौ शान्तौ मोहे च मारणे ।
विवादे स्तम्भने द्यूते भूतभीतौ च सङ्कटे ॥ ४५ ॥
वश्ये युद्धे नृपद्वारे समरे वैरिसङ्कटे ।
मन्त्रोऽयं साधितो दद्यादिष्टसिद्धिं नृणां ध्रुवम् ॥ ४६ ॥
वक्ष्ये हनुमतो यन्त्रं सर्वसिद्धि-प्रदायकम् ।
वलयत्रितयं लेख्यं पुच्छाकार-समन्वितम् । ४७ ॥
साध्यनाम लिखेन्मध्ये पाशबीजप्रवेष्टितम् ।
उपर्यष्टदलं कृत्वा वर्म पत्रेषु संलिखेत् ॥ ४८ ॥
वलयं बहिरालिख्य तद्बहिश्चतुरस्रकम् ।
चतुरस्रस्य रेखाग्रे त्रिशूलानि समालिखेत् ॥ ४९ ॥

निश्चय ही शत्रु मर जाता है ॥४२½-४४॥ और कहाँ तक निरूपण किया जाय, उक्त हनुमन्मन्त्र सिद्ध होने पर साधक के समस्त इष्ट कार्य को निश्चय ही सिद्ध करता है तथा विष, व्याधि, शान्ति, मोहन, मारण, विवाद, स्तम्भन, जुआ, भूत-व्याधिभय, संकट, वशीकरण, युद्ध, राजद्वार, युद्धस्थल एवं शत्रु द्वारा प्राप्त संकट आदि शीघ्र नष्ट होते हैं ॥ ४५-४६ ॥

यन्त्रविधान—समस्त सिद्धिप्रदायक हनुमद्यन्त्र के विधान का निरूपण करते हैं—सर्वप्रथम पुच्छाकार युक्त वलय-त्रितय में 'आम्' बीज से युक्त उस वलयत्रितय के मध्य साध्य का नाम लिखे। उसके ऊपर अष्टदल कमल का निर्माण कर, उसके प्रत्येक पँखुड़ियों में वर्मबीज (हुम्) लिखे ॥४७-४८॥ तदनन्तर उन पत्रों के बाहर वलय निर्माण कर, और उस वलय के बाहर चतुरस्रक रेखा का निर्माण कर उन प्रत्येक रेखाओं के अग्रभाग में त्रिशूल बनावे ॥४९॥ यन्त्रास्थित अष्टदल कमल

भूपुरस्याऽष्टवज्रेषु हसौं बीजं लिखेत्ततः ।
कोणेष्वङ्कुशमालिख्य मालामन्त्रेण वेष्टयेत् ॥ ५० ॥
तत्सर्वं वेष्टयेद्यन्त्रं वलयत्रितयेन च ।
वस्त्रे शिलायां फलके ताम्रपात्रेऽथ कुड्यजे ॥ ५१ ॥
भूर्जे वा ताडपत्रे वा रोचना-नाभिकुङ्कुमैः ।
यन्त्रमेतन्समालिख्य त्यक्ताशी ब्रह्मचर्यवान् ॥ ५२ ॥
कपेः प्राणान् प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्तद्यथाविधि ।
सर्वदुःखनिवृत्त्यैतद्-यन्त्रमात्मनि धारयेत् ॥ ५३ ॥
ज्वरमार्यमभिचारघ्नं सर्वोपद्रवशान्तिकृत् ।
योषितामपि बालानां धृतं जनमनोहरम् ॥ ५४ ॥
मालामन्त्रमथो वक्ष्ये प्रणवो वाग्घरिप्रिया ।
दीर्घत्रयान्विता माया पूर्वोक्तं कूटपञ्चकम् ॥ ५५ ॥

के प्रत्येक दल में 'ह् सौं' इस बीज मन्त्र को लिखकर, तत्पश्चात् कोण में अंकुश का निर्माण कर, माला मन्त्र से वेष्टित करे। उस मन्त्र को तीन वलय (घेरा) से वेष्टित करे। उस यन्त्र का निर्माण-वस्त्र, चिकनी शिला, पीढ़ा, ताँबे का पत्र एवं दीवाल में भोजपत्र अथवा ताड़पत्र में गोरोचन, कस्तूरी तथा कुंकुम आदि से लोभरहित ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ (निर्माण) करे ॥५०-५२॥ तत्पश्चात् हनुमन्मूर्ति की प्राणप्रातिष्ठा एवं यथाविधि षोडशोपचार से पूजन कर, समस्त कष्ट निवारण के लिए उस यन्त्र को धारण करे ॥५३॥ जो पुरुष, बालक तथा स्त्रियाँ इस परम सुन्दर यन्त्र को धारण करती हैं, उनके समस्त उपद्रव, ज्वर एवं आधि-व्याधि आदि शान्त होते हैं ॥५४॥ तत्पश्चात् मालामन्त्र का निरूपण करते हैं। सर्वप्रथम प्रणव (ॐ) का उच्चारण करता हुआ

तारो नमो हनुमते प्रकटान्ते पराक्रम ।
आक्रान्त-दिग्मण्डलतो यशोवीति च तान च ॥ ५६ ॥
धवलीकृतवर्णान्ते जगत्त्रितयवज्रदे ।
हान्ते ज्वलदग्निसूर्यकोट्यन्ते तु समप्रभ ॥ ५७ ॥
तनूरुहपदं रुद्रावतारपदमीरयेत् ।
लङ्कापुरीदहान्ते नोदधिलङ्घनवर्णकाः ॥ ५८ ॥
दशग्रीवशिरः पश्चात् कृतान्तकपदं ततः ।
सीता-श्वासन-वाय्यन्ते सुतं शब्दमुदीरयेत् ॥ ५९ ॥
अञ्जनीगर्भसम्भूत-श्रीसमान्ते तु लक्ष्मणा ।
नन्दकान्ते करकपि-सैन्य-प्राकार-वर्णकाः ॥ ६० ॥
सुग्रीवसख्यकावर्णा रणबालिनिबर्हण ।
कारणद्रोणद्रोणपर्वान्ते तोत्पाटनपदं वदेत् ॥ ६१ ॥

वाक् (ऐं, हरिप्रिया (श्री) तथा दीर्घत्रयान्विता माया बीज (ह्रां ह्रीं ह्रूं) एवं पूर्वोक्त पंचबीजात्मक हनुमन्मन्त्र के उच्चारण से 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह स्फ्रें ख्फ्रें ह स्रौं हस्ख्फ्रें ह सौं ॐ हनुमते नमः' यह माला मन्त्र निर्मित हुआ। इस मन्त्र के आगे 'प्रकटाय, पराक्रमाय, आक्रान्त-दिङ्मण्डलाय, यशोवीतिवितानाय, धवलीकृतवर्णाय जगत्त्रिताय, वज्रदाय हान्ताय, ज्वलदग्निसूर्यकोटये, समप्रभाय, ॥५५-५७॥ तनूरुहपदाय, रुद्रावताराय, लङ्कापुरीदहनाय, नोदधिलङ्घनाय, दशग्रीवशिरःकृतान्त-काय, सीताश्वासनाय, वायुसुताय, ॥५८-५९॥ अञ्जनीगर्भसम्भूताय, श्रीरामलक्ष्मणानन्दकारकाय, कपिसैन्यप्राकारकाय, सुग्रीवसख्यकाय, रणबालिनिबर्हणकारणाय, द्रोणपर्वतोत्पाटनाय, अशोकवनविदारणाय,

अशोकवनवीत्यन्ते दारणाक्षकुमारक ।
छेदनान्ते वनपदं रक्षाकरसमूह च ॥ ६२ ॥
विभञ्जनान्ते ब्रह्मास्त्र-ब्रह्मशक्ति-ग्रसेति च ।
लक्ष्मणान्ते शक्तिभेद-निवारणपदं पुनः ॥ ६३ ॥
विशल्यौषधिवर्णान्ते समानयनवर्णकाः ।
बालोदितान्ते भान्वन्ते मण्डलग्रसनेति च ॥ ६४ ॥
मेघनादेति होमान्ते विध्वंसनपदं वदेत् ।
इन्द्रजिद्वधकारान्ते णसीतारक्षकेति च ॥ ६५ ॥
राक्षसीसङ्घवर्णान्ते विदारण च कुम्भ च ।
कर्णादिवधशब्दान्ते परायणपदं वदेत् ॥ ६६ ॥
श्रीरामभक्तिशब्दान्ते तत्परेति समुद्र च ।
व्योमद्रुमलङ्घनेति महासामर्थ्यमेति च ॥ ६७ ॥
हातेजः पुञ्जवीत्यन्ते राजमानपदं पुनः ।
स्वामिवचन-सम्पादितार्जुनान्ते च संयुगे ॥ ६८ ॥
सहायान्ते कुमारेति ब्रह्मचारीपदं वदेत् ।
गम्भीरशब्दो-ऽग्निर्वायु-दक्षिणाशापदं पुनः ॥ ६९ ॥

अक्षकुमारच्छेदनाय, वनरक्षाकरसमूहविभञ्जनाय, ब्रह्मास्त्र-ब्रह्मशक्ति-ग्रसाय, लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारणाय ॥ ६०-६३ ॥ विशल्यौषधिः-सनानयनाय, बालोदितभानुमण्डलग्रसनाय, मेघनादहोमविध्वंसनाय, इन्द्रजिद्वधकाराय, सीतारक्षकाय, राक्षसीसङ्घविदारणाय, कुम्भकर्णवध-परायणाय ॥६४-६६॥ श्रीरामभक्तितत्पराय, समुद्रव्योमद्रुमलङ्घनाय, महासामर्थ्याय, महातेजपुञ्जविराजमानाय, स्वामिवचनसम्पादिताय, अर्जुनसंयुगसहायाय, कुमारब्रह्मचारिणे, गम्भीराय, अग्निर्वायु-दक्षिण-

मार्तण्डमेरुशब्दान्ते पर्वतेति पदं वदेत् ।
पीठिकार्चन-वर्णान्ते सकलेति पदं पुनः ॥ ७० ॥
मन्त्रागमाचार्य मम सर्वग्रहविनाशन ।
सर्वज्वरोच्चाटनेति सर्वविषविनाशन ॥ ७१ ॥
सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टेति सम्पठेत् ।
निबर्हणपदं सर्प-व्याघ्रादिभय-तत्परम् ॥ ७२ ॥
निवारणसर्वशत्रूच्छेदनेति पदं मम ।
परस्य च त्रिभुवनं पुं-स्त्री-नपुंसकात्मकम् ॥ ७३ ॥
सर्वजीवपदं पश्चात् जातं वशययुग्मकम् ।
ममाज्ञाकारकं पश्चात् सम्पादय-पदत्रयम् ॥ ७४ ॥
नना-नामपदं धेयान् सर्वान् राज्ञः स सम्पठेत् ।
परिवारान् ममेत्यन्ते सेवकान् कुरुयुग्मकम् ॥ ७५ ॥
सर्वशस्त्रास्त्रवीत्यन्ते पाणि-विध्वंसय-द्वयम् ।
माया दीर्घत्रयोपेता हात्रयं चैहियुग्मकम् ॥ ७६ ॥

मार्त्तण्ड-मेरुपर्वताय, पीठिकार्चन-सकलमन्त्रागमाचार्याय, मम सर्वग्रह-विनाशनाय, सर्वापत्तिनिवारणाय, सर्वदुष्टनिवर्हणाय, सर्वव्याघ्रादिभय-निवारणाय, सर्वशत्रूच्छेदनाय, मम परस्य च त्रिभुवन-पुं-स्त्री-नपुंसक-सर्वजीवजातं वशय वशय, ममाज्ञां सम्पादय, सम्पादय, सम्पादय ॥६७-७४॥
नानानामधेयान् सर्वान् राज्ञः परिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु ॥७५॥
सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय विध्वंसय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्फ्रें ह्स्ख्फ्रें ह्सौं एहि एहि ॐ ह्सौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं ख्फ्रें ह्स्फ्रें सर्वशत्रून् हन हन,

विलोम-पञ्चकूटानि सर्वशत्रून् हनद्वयम् ।
परबलान्ते लानि परसैन्यानि क्षोभयद्वयम् ॥ ७७ ॥
मम सर्वं कार्यजातं साधय-द्वितयं ततः ।
सर्वदुष्टदुर्जनान्ते मुखानि कीलयद्वयम् ॥ ७८ ॥
घेत्रयं हात्रयं वर्मत्रितयं फट्त्रयं ततः ।
वह्निप्रियान्तो मन्त्रोऽयं मालासंज्ञोऽखिलेष्टदः ॥ ७९ ॥
अष्टाशीत्युत्तराः पञ्चशतवर्णा मनोः स्मृताः ।
महोपद्रवसम्पाते स्मृतोऽयं दुःखनाशनः ॥ ८० ॥
द्वादशार्णैतिमान् वर्णान् षट्त्यक्त्वैकं तथादिमम् ।
[1]पञ्चकूटात्मको मन्त्रो निखिलाऽभीष्टसाधकः । ८१ ॥
मुनी रामोऽथ गायत्री छन्दो देवः कपीश्वरः ।
पञ्चबीजैः समस्तेन षडङ्गं मुनिभिः स्मृतम् ॥ ८२ ॥

परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय ॥७६-७७॥ मम सर्वं कार्यजातं साधय साधय, सदुष्टदुर्जनमुखानि कीलय कीलय, ॥७८॥ घे घे घे, हा हा हा, रक्ष रक्ष रक्ष, फट् फट् फट्, स्वाहा' इस मन्त्र का नाम माला मन्त्र है। इसमें ५८८ वर्ण हैं। यह मन्त्र महान् उपद्रव एवं दुःख को नाश करनेवाला है ॥७९-८०॥ 'हनुमते नमः' इन छह वर्ण एवं 'हौं' इस प्रथम वर्ण का परित्याग कर, अवशिष्ट बारह वर्ण वाले 'हस्फ्रें स्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं' यह पंच कूटात्मक मन्त्र है जो कि समस्त अभीष्टसिद्धि प्रदायक है ॥८१॥

इस हनुमन्मन्त्र के रामचन्द्र ऋषि, गायत्री छन्द तथा कपीश्वर देवता हैं। ऋषियों ने इस प्रकार पञ्चबीज-द्वारा षडंग हृदयादिन्यास का विधान बताया है ॥८२॥ 'रामदूताय, लक्ष्मणदात्रे, अञ्जनी-

---

१. 'ह्स्फ्रें स्फ्रें ह्स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं' इत्ययं पञ्चकूटात्मको मन्त्रः ।

रामदूतो लक्ष्मणान्ते प्राणदाताऽञ्जनीसुतः ।
सीताशोकविनाशोऽथ लङ्काप्रासादभञ्जनः ॥ ८३ ॥
हनूमदाद्याः पश्चते बीजाद्या ङेसमन्विताः ।
षडङ्गमन्त्राः सन्दिष्टा ध्यान-पूजादि पूर्ववत् ॥ ८४ ॥
तारो वाक्कमला माया दीर्घत्रयसमन्विता ।
पञ्चकूटानि मन्त्रोऽयं[1] रुद्राणोऽभीष्टसिद्धिदः ॥ ८५ ॥
अर्चनं पूर्ववच्चास्य परो मन्त्रोऽभिधीयते ।
हृदयं भगवान् ङेऽन्त आञ्जनेयमहाबलौ ॥ ८६ ॥
ङेऽन्तौ वह्निप्रियान्तोऽयं मनुरष्टादशाक्षरः[2] ।
मुनिरीश्वर एवास्याऽनुष्टुप्-छन्दः समीरितः ॥ ८७ ॥
हनुमान् देवता बीजं हुँ शक्तिर्वह्निवल्लभा ।
आञ्जनेयो रुद्रमूर्तिर्वायुपुत्रस्तथैव च ॥ ८८ ॥

सुताय, सीताशोकविनाशाय, लङ्काप्रासादभञ्जनाय, हनुमते नमः' आदि पञ्चबीज से युक्त यह षडंग मन्त्र ऋषियों ने कहा है। पूर्ववत् इसका भी ध्यान, पूजन करना चाहिए ॥८३-८४॥ 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं हं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह् स्त्रौं ह स्ख्फ्रें ह स्त्रौं' यह पञ्चकूटात्मकमन्त्र समस्त अभीष्टसिद्धि प्रदायक ऋषियों द्वारा एकादशाक्षरात्मक मन्त्र बताया है। इस मन्त्र का भी पूर्ववत् पूजन करे ॥ ८५ ॥

तत्पश्चात् अष्टादशाक्षरात्मकमन्त्र का निरूपण भी ऋषियों द्वारा किया गया है, जो इस प्रकार है 'ॐ नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा'। इस मन्त्र के ऋषि ईश्वर, अनुष्टुप् छन्द, हनुमान्

---

१. 'ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्फ्रें ख्फ्रें ह् स्त्रौं ह्स्ख्फ्रें' इत्ययमेकादशाक्षरस्य हनुमतो मन्त्रः ।

२. 'नमो भगवते आञ्जनेयाय महाबलाय स्वाहा' इत्ययमष्टादशाक्षरो मन्त्रः ज्ञेयः ।

अग्निगर्भो रामदूतो ब्रह्मास्त्रविनिवारणः ।
एतैर्ङेऽन्तैः षडङ्गानि कृत्वा ध्यायेत् कपीश्वरम् ॥८९॥
दहन-तप्तसुवर्ण-समप्रभं भयहरं हृदये विहिताञ्जलिम् ।
श्रवणकुण्डलशोभि-मुखाम्बुजं नमत वानरराजमिहाऽद्भुतम् ॥९०॥
अयुतं प्रजपेन्मन्त्रं दशांशं जुहुयात्तिलैः ।
वैणवे पूजयेत् पीठे पूर्ववत् कपिनायकम् ॥९१॥
जितेन्द्रियो नक्तभोजी प्रत्यहं साष्टकं शतम् ।
जपित्वा क्षुद्ररोगेभ्यो मुच्यते दिवसत्रयात् ॥९२॥
भूत-प्रेत-पिशाचादि-नाशायैवं समाचरेत् ।
महारोगनिवृत्त्यै तु सहस्रं त्रिदिनं जपेत् ॥९३॥

देवता, हुँ बीज तथा स्वाहा शक्ति है। पश्चात् 'आञ्जनेयाय रुद्रमूर्तये, वायुपुत्राय, अग्निगर्भिणे, रामदूताय, ब्रह्मास्त्रविनिवारणाय' इन छह पदों से हृदयादि षडंग न्यास कर, कपीश्वर हनुमान् जी का इस प्रकार ध्यान करे ॥८६-८९॥ तपे हुए सुवर्ण के समान कान्तिवाले, भयविनाशक, हृदय पर अंजलि बाँधे हुए, कानों में धारण किये हुए कुण्डल से अत्यन्त सुशोभित मुखकमलवाले तथा अद्भुत स्वरूप युक्त वानरराज को आप सभी प्रणाम करें ॥९०॥ उक्त मन्त्र का दस हजार जप कर, तिल से तद्दशांश हवन करे और काष्ठ के सिंहासन पर कपिनायक हनुमान् जी का स-विधि पूजन करे ॥९१॥ साधक को चाहिए कि वह जितेन्द्रिय होता हुआ जपानुष्ठान के समय केवल रात्रि में ही भोजन करे। तथा प्रतिदिन एकसौ आठ बार तीन दिन तक उक्त मन्त्र का जप करने से क्षुद्र रोग, भूत, प्रेत, पिशाच आदि नष्ट होते हैं। इसी प्रकार तीन दिन तक सहस्र (हजार) बार जप करने से भयंकर राजरोग आदि की निवृत्ति होती है ॥९२-९३॥ जितासन होकर

जितासनोऽयुतं नित्यं जपन् ध्यायन कपीश्वरम् ।
राक्षसौघं विनिघ्नन्तमचिराज्जयति द्विषः ॥९४॥
सुग्रीवेण समं रामं सन्दधानं स्मरन् कपिम् ।
प्रजप्याऽयुतमात्रं तु सन्धि कुर्याद् विरुद्धयोः ॥९५॥
लङ्कां दहन्तं तं ध्यायन्नयुतं प्रजपन् मनुम् ।
शत्रूणां प्रदहेद् ग्रामानचिरादेव साधकः ॥९६॥
प्रयाणसमये ध्यायन् हनूमन्तं मनुं जपन् ।
यो याति सोऽचिरात् स्वेष्टं साधयित्वा गृहं व्रजेत् ॥९७॥
यः कपीशं सदा गेहे पूजयेज्जपतत्परः ।
आयुर्लक्ष्म्यौ प्रवर्धेते तस्य नश्यन्त्युपद्रवाः ॥९८॥
शार्दूल-तस्करादिभ्यो रक्षेन्मनुरयं स्मृतः ।
प्रस्वापकाले चौरेभ्यो दुष्टस्वप्नादपि ध्रुवम् ॥९९॥

कपीश्वर श्रीहनुमान् जी का ध्यान करता हुआ, दश हजार जप करने से समस्त राक्षसगण एवं शत्रु शीघ्र ही नष्ट होते हैं।।९४। इसी प्रकार सुग्रीव सहित राम एवं हनुमान् का ध्यान करते हुए अयुत (दस हजार) मात्र जपकरने से परस्पर विरुद्ध मतवाले प्राणियों में सन्धि होती है ।।९५।। इसी तरह लंका-दहन करते हुए हनुमान् का ध्यान कर, दस हजार जप करने से तत्क्षण शत्रुओं का ग्राम जलकर नष्ट हो जाता है ।।९६।। जो मनुष्य घर से बाहर निकलते समय हनुमान् जी का जप करके जाता है, वह अपनी इष्टसिद्धि प्राप्त कर सकुशल घर लौट आता है ।।९७।। जो प्राणी जपपरायण होता हुआ अपने घर हनुमान् जी का पूजन करता है, उसकी आयु और लक्ष्मी निरन्तर बढ़ती रहती है तथा उसके समस्त उपद्रव नष्ट हो जाते हैं ।।९८।। इस हनुमन्मन्त्र के जप करने से सिंह, चोर आदि का भय नहीं होता, एवं शयन करने पर दुष्ट स्वप्न, चोर आदि का भय निश्चय ही नष्ट होता है ।।९९।।

पवनद्वितयं सद्योजातयुक्तं हनूपदम् ।
महाकालः शशाङ्काढ्यः कामिका फलफ-क्रिया ॥१००॥
स-नेत्रा णान्तमीनौ ग सात्वतो गित-आयुरा ।
ष लोहितं रुडाहेति वेदनेत्राक्षरो मनुः ॥१०१॥
प्लीहरोगहरस्याऽस्य मुन्याद्यं पूर्ववन्मतम् ।
प्लीहयुक्तोदरे स्थाप्यं नागवल्लीदलं शुभम् ॥१०२॥
तदुपर्यष्टगुणितं वस्त्रमाच्छादयेत्ततः ।
वंशजं शकलं तस्योपरि मुञ्चेत् कपिं स्मरन् ॥१०३॥
आरण्यप्रस्तरोत्पन्ने वह्नौ यष्टिं प्रतापयेत् ।
बदरीतरुसम्भूतां यन्त्रेणाऽनेन सप्त यः ॥१०४॥
तया सन्ताडयेद् वंश-शकलं जठरस्थितम् ।
सप्तकृत्वः प्लीहरोगो नश्यत्येव नृणां क्षणात् ॥१०५॥

चौबीस वर्ण वाले 'यो यो हनुमन्त फलफलित-धगधगित-आयुराष-परुडाह' यह प्लीहा (बरवट) रोगनाशक मन्त्र पान के पत्ते पर रोगी के उदर (पेट) में स्थापित कर, उसे अष्टगुणित वस्त्र से आच्छादित करे। तथा हनुमान् जी का स्मरण करते हुए कच्चे बाँस के टुकड़े, उस वस्त्र पर रखे ॥१००-१०३॥

तत्पश्चात् बदरी (बैर) वृक्ष के डण्डे को जंगली पत्थर से उत्पन्न अग्नि में तपाकर, चौबीस वर्णवाले इस मन्त्र से सात बार रोगी के पेट पर रखे हुए, उन बाँस के टुकड़ों को ताडित (मारने से) करने से तत्क्षण रोगी प्लीहा रोग से मुक्त हो जाता है ॥१०४-१०५॥

पुच्छाकारे सुवसने लेखिन्या कोकिलोत्थया ।
अष्टगन्धैर्लिखेद्रूपं कपिराजस्य सुन्दरम् ॥ १०६ ॥
तन्मध्येऽष्टादशार्णं तु शत्रुनामयुतं लिखेत् ।
तेन मन्त्रप्रजप्तेन शिरोबद्धेन भूमिपः ॥ १०७ ॥
जयत्यरिगणं सर्वं दर्शनादेव निश्चितम् ।
युद्धं जिगीषुर्नृपतिः पूर्वोक्तं लेखयेद् ध्वजे ॥ १०८ ॥
ध्वजमादायोपरागे संस्पर्शान्मोक्षणावधि ।
मातृकां जापयेत् पश्चाद् दशांशेन हुतं चरेत् ॥ १०९ ॥
सर्षपैस्तिल-सम्मिश्रैः संस्कृते हव्यवाहने ।
गजस्थं तं ध्वजं दृष्ट्वा पलायन्तेऽरयोऽचिरात् ॥ ११० ॥

कोयलके पंख की कलम से अष्टगन्ध द्वारा हनुमान् जी की सुन्दर मूर्ति पुच्छाकार वस्त्र पर बनाकर, उस मूर्ति के मध्य अष्टादश वर्ण वाले मन्त्र के मध्य में शत्रु का नाम लिखकर राजा पगड़ी बाँधकर इस मन्त्रका जप करे, जिससे उस मूर्ति के दर्शन मात्र से ही वह राजा समस्त शत्रुगणों पर निश्चय ही विजय प्राप्त करता है। उसी प्रकार युद्ध में विजय प्राप्त करने वाले राजा को चाहिए कि ध्वजा पर अठारह वर्ण वाले मन्त्र के मध्य में शत्रु का नाम लिखकर, जब तक वह सूख न जाय तब तक ध्वजा को हाथ में लेकर हाथी पर रख दे। पश्चात् मातृका जप कर अग्नि में सरसों, तिल मिले हुए शाकल से दशांश हवन करे। रणस्थल में उस राजा के शत्रुगण हाथी पर स्थित उस ध्वजा को देखते ही तत्क्षण भाग जाते हैं ॥१०६-११०॥

अथो हनुमतो मन्त्रं वक्ष्ये रक्षाविधायकम् ।
लिखेदष्टदलं पद्मं साध्याख्याऽयुतकर्णिकम् ॥ १११ ॥
दलेष्वष्टार्णमालिख्य मालामन्त्रेण वेष्टयेत् ।
तद्बहिर्मायया वेष्टय प्राणस्थापनमाचरेत् ॥ ११२ ॥
लिखितं स्वर्णलेखिन्या दले भूर्जतरोः शुभे ।
रोचना-कुङ्कुमाभ्यां च वेष्टितं कनकादिभिः ॥ ११३ ॥
सम्पात-साधितं यन्त्रं भुजे वा मूर्ध्नि धारयेत् ।
रणे जयमवाप्नोति व्यवहारे दुरोदरे[1] ॥ ११४ ॥
ग्रहैर्विघ्नैर्विषैः शस्त्रैश्चौरैर्नैवाभिभूयते ।
रोगान् सर्वान् पराकृत्य चिरं जीवति भाग्यवान् ॥ ११५ ॥

इसके बाद रक्षाविधायक हनुमान् जी के मन्त्र का विधान लिखते हैं। सुवर्ण की कलम से सुन्दर भोजपत्र पर अष्टदल कमल निर्मित कर, उसकी कर्णिकामें साध्यशत्रु का नाम लिखे, और कमल के अष्टदल में अष्टाक्षर मन्त्र लिखकर, उसे माला मन्त्र से वेष्टित करे। उसके बाहर मालामन्त्र 'ह्रीं' बीज से वेष्टित कर, उसकी प्राणप्रतिष्ठा करे। तत्पश्चात् गोरोचन, कुंकुम तथा कनक से वेष्टित अर्थात् चारों तरफ घुमाकर उस यन्त्र को भुजा एवं मस्तक पर धारण करे। इस प्रकार करने पर साधक युद्ध में निश्चय ही विजय प्राप्त करता है। तथा जुआ खेलने में उसकी जीत होती है। और क्रूरग्रह, विघ्न, विष, शस्त्र और चोर आदि से वह कभी भी तिरस्कृत नहीं होता। तथा समस्त रोगों को नष्ट कर चिरकाल पर्यन्त सौभाग्य भोग का उपभोग करता हुआ वह जीवित रहता है॥१११-११५॥ 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ' यह अष्टार्ण मन्त्र है। इसके बाद माला मन्त्र का निरूपण करते हैं।

---

१. 'द्यूते' इत्यर्थः ।

वियदग्नियुतं दीर्घषट्काद्यं तारसम्पुटम् ।
[1]अष्टार्णमन्त्रः संख्यातो मालामन्त्रोऽथ कीर्त्यते ॥११६॥

वज्रकाय वज्रतुण्ड कपिलेत्यथ पिङ्गल ।
ऊर्ध्वकेश महावर्ण बल रक्तमुखेति च ॥११७॥

तडिज्जिह्व महारौद्र दंष्ट्रोत्कटक-ह-द्वयम् ।
करालिने महादृढ-प्रहारिन्निति वर्णकाः ॥११८॥

लङ्केश्वरवधायान्ते महासेतुपद ततः ।
बन्धान्ते च महाशैल-प्रवाह-गगनेचर ॥११९॥

एह्येहि भगवन्नन्ते महाबलपराक्रम ।
भैरवाज्ञापयैह्येहि महारौद्रपदं पुनः ॥१२०॥

दीर्घपुच्छेन वर्णान्ते वेष्टयान्ते तु वैरिणम् ।
जम्भय-द्वितयं हु फट् प्रणवादिः समीरितः ॥१२१॥

बाण-नेत्रेन्दु-वर्णोऽयं मालामन्त्रोऽखिलेष्टदः ।
युद्धे जप्तो जयं दद्यात् व्याधौ व्याधिविनाशनः ॥१२२॥

'ॐ वज्रकाय वज्रतुण्डाय कपिलपिङ्गलाय ऊर्ध्वकेशाय महाबलाय रक्तमुखाय तडिज्जिह्वाय महारौद्राय द्रंष्ट्रोत्कटकाय हहकरालिने महादृढ-प्रहारिणे लंकेश्वरवधाय महासेतुबन्धाय महाशैलप्रवाहाय गगने-चराय एह्येहि भगवते महाबद्धपराक्रमाय भैरवाज्ञापयाऽऽज्ञापय एह्येहि महारौद्राय दीर्घपुच्छाय वेष्टय-वेष्टय वैरिणं भञ्जय-भञ्जय हुँ फट्' यह एक सौ पचीस वर्ण वाला माला मन्त्र है। इस मालामन्त्र के जप करने से

1. 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ' इत्ययमष्टार्णो मन्त्रः ज्ञेयः ।

अष्टार्णमालामन्त्रोऽस्तु मुन्याद्यर्चा तु पूर्ववत् ।
भूरिणा किमिहोक्तेन सर्वं दद्यात् कपीश्वरः ॥१२३॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचिते हनुमद्-रहस्ये
मन्त्रमहोदधिप्रोक्तं हनुमत्पटलं समाप्तम् ।

*

युद्ध में विजय तथा रोगी का रोग नष्ट होता है ॥११६-१२२॥ अष्टार्ण एवं माला मन्त्र का विधिवत् पूर्वोक्त प्रकार पूजन करने से समस्त इष्ट सिद्धि निश्चय ही श्रीहनुमान् जी की कृपा से पाप्त होती है, इस विषय में अधिक कहना व्यर्थ है ॥१२३॥

इस प्रकार पण्डित श्री शिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचित हिन्दीव्याख्यासहित
हनुमद्-रहस्य में मन्त्रमहोदधिप्रोक्त हनुमत्पटल समाप्त ।

*

हनुमत्कवचम् (१)

नारद उवाच

एकदा सुखमासीनं शङ्करं लोकशङ्करम् ।
पप्रच्छ गिरिजाकान्त कर्पूरधवलं शिवम् ॥ १ ॥

पार्वत्युवाच

भगवन् ! देवदेवेश ! लोकनाथ ! जगत्प्रभो ! ।
शोकाकुलानां लोकानां केन रक्षा भवेद् भव[1] ॥ २ ॥
सङ्ग्रामे सङ्कटे घोरे भूत-प्रेतादिके भये ।
दुःख-दावाग्नि-सन्तप्त-चेतसां दुःखभागिनाम् ॥ ३ ॥

ईश्वर उवाच

शृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि लोकानां हितकाम्यया ।
विभीषणाय रामेण कथितं कवचं पुरा ॥ ४ ॥

नारद जी ने कहा—किसी समय कपूर के समान अत्यन्त शुभ्र-वर्ण वाले, लोक का कल्याण करने वाले, तथा सुख से बैठे हुए, अपने स्वामी भगवान् शंकर से पार्वती ने पूछा ॥ १ ॥

पार्वती ने कहा– हे देवदेवेश ! हे लोकनाथ ! हे जगत्प्रभो ! हे भगवन् ! संग्राम, घोर संकट तथा भूत-प्रेतादिकों के द्वारा उत्पन्न भय में पड़े हुए सन्तप्त चित्त वाले मनुष्यों की रक्षा किस स्तोत्र से होती है ? ॥२-३॥

ईश्वर ने कहा—हे देवि ! लोक के कल्याण की कामना से भगवान् राम ने अत्यन्त बुद्धिमान् कपिराज वायुपुत्र का, जो कवच विभीषण

---

१. 'ध्रुवम्' इति पाठान्तरम् ।

कवचं कपिनाथस्य वायुपुत्रस्य धीमतः।
गुह्याद् गुह्यं प्रवक्ष्यामि विशेषात्तव सुन्दरि ! ॥ ५ ॥

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीहनुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीरामचन्द्रऋषिः, श्रीवीरो हनुमान् परमात्मा देवता, अनुष्टुप्-छन्दः, मारुतात्मज इति बीजम्, अञ्जनीसूनुरिति शक्तिः, लक्ष्मणप्राणदाता इति जीवः, श्रीरामशक्तिरिति कवचम्, लङ्काप्रदाहक इति कीलकम्, मम सकलकार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः।

मन्त्रः—ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः।

करन्यासः—ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ह्रूँ मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

हृदयादिन्यासः ॐ अञ्जनीसूनवे नमो हृदयाय नमः।

को प्रदान किया था, तथा जो अत्यन्त गोपनीय है, उस कवच को मैं तुमसे कहता हूँ ॥४-५॥

विनियोग—हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीहनुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य' से लेकर 'जपे विनियोगः' तक वाक्य पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

मन्त्र—'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रू ह्रैं ह्रौं ह्रः'।

करन्यास—'ॐ ह्रां' इस मन्त्र से दोनों अगूठे, 'ॐ ह्रीं' मन्त्र से दोनों तर्जनी अँगुलि, 'ॐ ह्रू' मन्त्र से दोनों मध्यमा अंगुलि, 'ॐ ह्रैं' इससे दोनों अनामिका अंगुलि का, 'ॐ ह्रौं' मन्त्र से दोनों कनिष्ठिका तथा 'ॐ ह्रः' इस मन्त्र से दोनों हाथ के तलवे तथा पृष्ठ भाग का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यास—'ॐ अंजनीसूनवे नमो हृदयाय नमः' से हृदय,

ॐ रुद्रमूर्तये नमः शिरसे स्वाहा। ॐ वातात्मजाय नमः शिखायै वषट्, ॐ श्रीरामभक्तिरताय नमः कवचाय हुम्। ॐ वज्र-कवचाय नमो नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय नमः अस्त्राय फट्।

ध्यानम्

ध्यायेद् बालदिवाकर-द्युतिनिभं देवारि-दर्पापहं
देवेन्द्रप्रमुख-प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा।
सुग्रीवादि-समस्त-वानरयुतं सुव्यक्ततत्त्वप्रियं
संरक्तारुण-लोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम् ॥ ६ ॥
उद्यन्मार्तण्डकोटि-प्रकटरुचियुतं चारुवीरासनस्थं
मौञ्जी-यज्ञोपवीता-ऽऽभरण-रुचिशिखा-शोभितं कुण्डलाढ्यम्।

'ॐ रुद्रमूर्तये नमः शिरसे स्वाहा' इस मन्त्र से शिर, 'ॐ वातात्मजाय नमः शिखायै वषट्' इस मन्त्र से शिखा, 'ॐ श्रीरामभक्तिरताय नमः कवचाय हुम्' इस मन्त्र से दोनों बाहुओं का, 'ॐ कवचाय नमो नेत्रत्रयाय वौषट्' इस मन्त्र से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे तथा 'ॐ ब्रह्मास्त्रनिवारणाय नमः अस्त्राय फट्' इस मन्त्र से अपने चारों ओर चुटकी बजावे।

तदनन्तर नीचे लिखे मन्त्र से ध्यान करे—

ध्यान – उदय होते हुए बाल सूर्य के समान कान्ति वाले, राक्षसों के गर्व को दूर करने वाले, देवताओं में प्रमुख, उत्तम कीर्ति वाले, तेज से देदीप्यमान, सुग्रीवादि वानरों से युक्त, ब्रह्मतत्त्व का साक्षात् करने वाले, रक्त एवं अरुण नेत्र वाले, पीताम्बर से अलंकृत श्री हनुमान् जी का ध्यान करे॥६॥ उदय होते हुए करोड़ों सूर्य के समान कान्ति वाले, वीरासन से विराजमान, मौंजी तथा यज्ञोपवीतरूप आभरण को अत्यन्त स्नेह से धारण करने वाले, तथा कुण्डलों से सुशोभित एवं प्रतिदिन

भक्तानामिष्टदान-प्रवणमनुदिनं वेदनादप्रमोदं
[1]ध्यायेद्देवं विधेयं प्लवगकुलपतिं गोष्पदीभूतवार्धिम् ॥ ७ ॥

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥ ८ ॥

वज्राङ्गं पिङ्गकेशाढ्यं स्वर्णकुण्डल-मण्डितम् ।
उद्यद्दक्षिण-दोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तये ॥ ९ ॥

स्फटिकाभं स्वर्णकान्तिं द्विभुजं च कृताञ्जलिम् ।
कुण्डलद्वय-संशोभि-मुखाम्भोज हरिं भजे ॥१०॥

उद्यदादित्य-सङ्काशमुदारभुज-विक्रमम् ।
कन्दर्प-कोटि-लावण्यं सर्वविद्या-विशारदम् ॥११॥

भक्तों के अभीष्ट प्रदान करने में निपुण, वेदों के शब्द से अपार हर्ष वाले, वानरों के अधिपति तथा समुद्र को गोपद के समान अनायास उल्लंघन करने वाले ऐसे हनुमान् जी का ध्यान करे ॥७॥ मन एवं पवन के समान अतिशीघ्रगामी, जितेन्द्रिय, बुद्धिमानों में श्रेष्ठ तथा वानरों के मुख्य सेनापति, वायुपुत्र, रामदूत, श्रीहनुमान् जी की मैं शरणागत हूँ ॥८॥ जिनका शरीर वज्र के समान कठोर है, केश पीला है, जो स्वर्ण कुण्डल से सुशोभित हैं, जिनका दाहिना हाथ ऊपर को उठा हुआ है, ऐसे हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥९॥ स्वच्छस्फटिक के समान कान्ति वाले, स्वर्ण के समान देदीप्यमान, दो भुजा वाले, अंजलि बाँधे हुए तथा जिनका मुखमण्डल कुण्डलों से सुशोभित है, उन हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥१०॥ उदय होते हुए सूर्य की प्रभा वाले, उदार तथा भुजाओं से पराक्रम दिखाने वाले, करोड़ों कामदेव के समान सुन्दर,

---

१. 'ध्यायेदेवं' इत्यपि क्वचित्पाठः ।

श्रीरामहृदयानन्दं भक्तकल्पमहीरुहम् ।
अभयं वरदं दोर्भ्यां कलये मारुतात्मजम् ॥१२॥

अपराजित ! नमस्तेऽस्तु नमस्ते रामपूजित ! ।
प्रस्थानं च करिष्यामि सिद्धिर्भवतु मे सदा ॥१३॥

यो वारान्निधिमल्प-पल्वलमिवोल्लङ्घ्य प्रतापान्वितो
वैदेहीघनशोक-तापहरणो वैकुण्ठभक्तप्रियः ।
अक्षाद्यूर्जित-राक्षसेश्वरमहा-दर्पापहारी रणे
सोऽयं वानरपुङ्गवोऽवतु सदा चाऽस्मान् समीरात्मजः ॥१४॥

वज्राङ्गं पिङ्गनेत्रं कनकमय-ललित्-कुण्डलाक्रान्तगण्डं
सर्वाविद्याधिनाथं करतलविधृतं पूर्णकुम्भं दृढं च ।

सभी विद्याओं में विशारद श्रीहनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥११॥ श्रीराम के हृदय को आनन्दित करने वाले, भक्तों के अभीष्ट पूर्ति के लिए कल्पवृक्ष, अपने भुजाओं से अभयप्रदान करने वाले, वरदाता, वायुपुत्र श्री हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥१२॥ हे अपराजित, हे रामपूजित, मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ । मैं शत्रुओं के विजय के लिए प्रस्थान कर रहा हूँ । सर्वदा मेरा कार्य सिद्ध हो ॥१३॥

अपार समुद्र को छोटे गड्ढे के समान लाँघने वाले, अत्यन्त पराक्रमशील, वैदेही के अपार शोक-ताप को हरण करने वाले, मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम के अत्यन्त प्रिय, संग्राम में महाबली, अक्षयकुमार एवं रावण के अभिमान को भी नष्ट करनेवाले, वायुपुत्र, वानरों में श्रेष्ठ श्री हनुमान् जी हम लोगों की रक्षा करें ॥१४॥ वज्र के समान कठोर शरीर वाले, पिंगल (भूरे) नेत्र वाले, कनकमय कुण्डलों से सुशोभित, हाथ में दृढ़ता से अमृत संयुक्त, पूर्ण कुम्भ धारण करनेवाले, भक्तों के

भक्ताभीष्टाधिकारं विदधति च सदा सुप्रसन्नं कपीन्द्रं
त्रैलोक्यत्राणकारं सकलभुवनगं रामदूतं नमामि ॥१५॥

उद्यल्लाङ्गूलकेश-प्रचलजलधरं भीममूर्तिं कपीन्द्रम् ।
वन्दे रामाङ्घ्रिपद्म-भ्रमरपरिवृतं सत्त्वसारं प्रसन्नम् ॥१६॥
वामे करे वीरभयं वहन्तं शैलं च धत्ते निजकण्ठलग्नम् ।
उद्यानमुत्थाय सुवर्णवर्णं भजे ज्वलत्कुण्डलरामदूतम् ॥१७॥
पद्मरागमणि-कुण्डल-त्विषा पाटलीकृत-कपोलमण्डलम् ।
दिव्यगेह-कदलीवनान्तरे भावयामि पवमान-नन्दनम् ॥१८॥

अभीष्ट-सिद्धि करने वाले, सदैव प्रसन्न रहने वाले, वानरों में मुख्य, त्रैलोक्य-रक्षा में समर्थ, अबाध गति से सम्पूर्ण विश्व में गमन करने वाले, रामदूत हनुमान् जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१५॥ मेघपर्यन्त स्पर्श करने वाली लम्बी पूँछ को हिलानेवाले, भीमकाय, श्रीरामचरणरूपी कमल के भ्रमर, अत्यन्त बलवान्, सदैव प्रसन्न रहने वाले, श्री हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥१६॥

बायें हाथ में कण्ठ से लगे हुए वीरों को भय प्रदान करने वाले, पर्वत को धारण किये हुए तथा वैद्य सुषेण द्वारा निर्दिष्ट दाहिने हाथ से देदीप्यमान सुवर्ण वर्ण के स्वयं प्रज्वलित संजीवनी बूटी के उद्यान को उठाये हुए, जगमगाते कुण्डल धारण किये हुए, श्रीरामदूत का मैं ध्यान करता हूँ ॥१७॥ पद्मरागमणि के द्वारा बने हुए कुण्डल की कान्ति से अपने गण्डस्थल को गुलाब के समान रक्त वर्ण बनाने वाले, कदलीवन के दिव्य गृह में निवास करने वाले, पवनात्मज श्री हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥१८॥

ॐ ऐं ह्रीं हनुमते रामदूताय शाकिनी-डाकिनी-विध्वंसनाय किल-किल वामकरेण निषण्णाय हनुमद्देवाय ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां स्वाहा।

मन्त्रः – ॐ नमो भगवते हनुमदाख्यरुद्राय सर्वदुष्टजनमुखस्तम्भनं कुरु कुरु ह्रां ह्रीं ह्रूं ठंठंठं हुँ फट् स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते अञ्जनीगर्भसम्भूताय रामलक्ष्मणानन्दकराय कपिसैन्यप्रकाशनाय पर्वतोत्पाटनाय सुग्रीवामात्याय रणपरोद्घाटनाय कुमारब्रह्मचारिणे गम्भीरभीमशब्दोदयाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं सर्वदुष्टनिवारणाय स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते सर्वग्रहान् भूत-भविष्यद्-वर्तमानान् दूरस्थान् समीपस्थान् सर्वकाल-दुष्टबुद्धीनुच्चाटयोच्चाटय परबलानि क्षोभय- क्षोभय मम सर्वकार्याणि साधय-साधय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं फट् देहि-देहि स्वाहा। शिवं सिद्धिं ह्रूं ह्रां ह्रीं स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते परकृत-यन्त्र-मन्त्र-पराहङ्कार-भूत-प्रेत-पिशाच-परदृष्टि-सर्वविघ्न-दुर्जनचेटकविद्या-सर्वग्रहभयं निवारय-निवारय वध-वध पच-पच दल-दल विलुलु-विलुलु किलु-किलु सर्वयन्त्राणि कुरुष्व वाचं ॐ फट् स्वाहा।

ॐ नमो हनुमते पाहि-पाहि एहि-एहि सर्वग्रहभूतानां शाकिनी-डाकिनीनां विषमदुष्टानां सर्वविषयानाकर्षय-सर्वविषयानाकर्षय मर्दय-मर्दय-छेदय-छेदय अपमृत्युं ममोपशोषय-अपमृत्युं

पुनः ॐ ऐं ह्रीं' से आरम्भ कर 'हनुमदाज्ञा स्फुरेत् स्वाहा' तक मन्त्रों का पाठ कर पूर्वोक्त प्रकार से हनुमान् जी का ध्यान करे।

ममोपशोषय ज्वल-ज्वल प्रज्वल-प्रज्वल भूतमण्डलं पिशाचमण्डलं निरासय-निरासय भूतज्वर-प्रेतज्वर-चतुर्थज्वर-विषमज्वर-महेश-ज्वरान् छिन्धि-छिन्धि भिन्धि-भिन्धि अक्षिशूल-पक्षशूल-शिरोऽभ्यन्तरशूल-गुल्मशूल पित्तशूल--ब्रह्मराक्षसकुल-परबल--नाग-कुलविषं निर्विषं फट् ॐ सर्वदुष्टग्रह-निवारणाय स्वाहा ।

ॐ नमो हनुमते पवनपुत्राय वैश्वानरमुखाय पापदृष्टि-घोरदृष्टि-हनुमदाज्ञा स्फुरेत् स्वाहा ।

[कवचम्] श्रीराम उवाच

हनुमान् पूर्वतः पातु दक्षिणे पवनात्मजः ।
पातु प्रतीच्यां रक्षोघ्नः पातु सागरपारगः ॥१९॥
उदीच्यामूर्ध्वगः पातु केसरीप्रियनन्दनः ।
अधस्ताद् विष्णुभक्तस्तु पातु मध्यं च पावनिः ॥२०॥
अवान्तरदिशः पातु सीताशोकविनाशनः ।
लङ्काविदाहकः पातु सर्वापद्भ्यो निरन्तरम् ॥२१॥
सुग्रीवसचिवः पातु मस्तकं वायुनन्दनः ।
भालं पातु महावीरो भ्रुवोर्मध्ये निरन्तरम् ॥२२॥

श्रीराम ने कहा-पूर्व की ओर हनुमान्, दक्षिण की ओर पवनात्मज, पश्चिम की ओर रक्षोघ्न, तथा उत्तर की ओर सागर-पारग, ऊपर की ओर केसरीनन्दन, नीचे की ओर विष्णुभक्त, मध्य में पावनि, अवान्तर दिशाओं में सीताशोक-विनाशन तथा समस्त आपत्तियों से निरन्तर लंका- विदाहक हमारी रक्षा करें ॥१९-२१॥

सुग्रीव सचिव मेरे मस्तक की, वायुनन्दन भाल की, तथा महावीर

नेत्रे च्छायापहारी च पातु नः प्लवगेश्वरः ।
कपोले कर्णमूले च पातु श्रीरामकिङ्करः ॥२३॥
नासाग्रमञ्जनीसूनुः पातु वक्त्रं हरीश्वरः ।
वाचं रुद्रप्रियः पातु जिह्वां पिङ्गललोचनः ॥२४॥
पातु दन्तान् फाल्गुनेष्टश्चिबुकं दैत्यपादहा ।
पातु कण्ठं च दैत्यारिः स्कन्धौ पातु सुरार्चितः ॥२५॥
भुजौ पातु महातेजाः करौ तु चरणायुधः ।
नखान् नखायुधः पातु कुक्षिं पातु कपीश्वरः ॥२६॥
वक्षो मुद्रापहारी च पातु पार्श्वे भुजायुधः ।
लङ्काविभञ्जनः पातु पृष्ठदेशे निरन्तरम् ॥२७॥

भौंह के मध्य में निरन्तर रक्षा करें ॥२२॥ छायापहारी (सिंहिका का वध करने वाले) नेत्रों की, प्लवगेश्वर कपोलों की तथा श्रीरामकिंकर कर्णमूल की रक्षा करें ॥२३॥

अंजनीसूनु नासाग्र की, हरीश्वर मुख की, रुद्रप्रिय वाणी की, तथा पिंगललोचन हमारी जीभ की रक्षा करें ॥२४॥ अर्जुन के विजय रथ की ध्वजा में स्थित फाल्गुनेष्ट दाँतों की, दैत्यों को पैर से मारने वाले दैत्यपादहा चिबुक की, दैत्यारि कण्ठ की, तथा देवता से पूजित सुरार्चित मेरे दोनों कन्धों की रक्षा करें ॥२५॥ महातेजस्वी महातेजा भुजाओं की, चरणायुध दोनों हाथों की, नखायुध सभी नखों की, तथा कपीश्वर कुक्षिभाग (कोख) की रक्षा करें ॥२६॥ मुद्रापहारी (श्रीराम की अँगूठी रखने वाले) वक्षःस्थल की, भुजायुध अगल-बगल की, तथा लंका का नाश करने नाले लंकाविभंजन निरन्तर मेरे पृष्ठदेश (पीठ) की रक्षा

नाभिं च रामदूतस्तु कटिं पात्वनिलात्मजः ।
गुह्यं पातु महाप्राज्ञो लिङ्गं पातु शिवप्रियः ॥ २८ ॥
ऊरू च जानुनी पातु लङ्काप्रासादभञ्जनः ।
जङ्घे पातु कपिश्रेष्ठो गुल्फौ पातु महाबलः ॥ २९ ॥
अचलोद्धारकः पातु पादौ भास्करसन्निभः ।
अङ्गान्यमित-सत्त्वाढ्यः पातु पादाङ्गुलीस्तथा ॥ ३० ॥
सर्वाङ्गानि महाशूरः पातु रोमाणि चात्मवान् ।
हनुमत्कवचं यस्तु पठेद् विद्वान् विचक्षणः । ३१ ॥
स एव पुरुषश्रेष्ठो भुक्तिं मुक्तिं च विन्दति ।
त्रिकालमेककालं वा पठेन्मासत्रयं सदा ॥ ३२ ॥
सर्वान् रिपून् क्षणाञ्जित्वा स पुमान् श्रियमाप्नुयात् ।
मध्यरात्रे जले स्थित्वा सप्तवारं पठेद् यदि ॥ ३३ ॥

करें ।।२७।। रामदूत नाभि की, अनिलात्मज कटिप्रदेश (कमर) की, महाप्राज्ञ गुदा की तथा शिवप्रिय लिंग की रक्षा करें ।।२८।। लंका को ढाहनेवाले लंकाप्रासादभंजन जानु तथा ऊरु की, कपिश्रेष्ठ जंघा की तथा महाबल दोनों गुल्फों की रक्षा करें ।।२९।। पर्वत उठानेवाले अचलोद्धारक दोनों पैरों की, भास्कर के समान तेजस्वी, भास्करसन्निभ अंगों की; अमितपराक्रम वाले अमितसत्त्वाढ्य पैर की अंगुलियों का रक्षा करें ।।३०।। महाशूर समस्त अंगों की, आत्मवान् समस्त रोम-समूहों की रक्षा करें । इस प्रकार जो विचक्षण विद्वान् इस हनुमत्-कवच का पाठ करते हैं, वे ही पुरुषश्रेष्ठ भुक्ति तथा मुक्ति प्राप्त करते हैं । जो तीनों काल अथवा एक काल तीन महीने तक इस हनुमत्-कवच का पाठ करते हैं वे सभी शत्रुओं को क्षणमात्र में जीतकर लक्ष्मी प्राप्त करते हैं । यदि आधीरात के समय जल में स्थित होकर सात बार इस कवच

क्षया-ऽपस्मार-कुष्ठादि-तापज्वर-निवारणम् ।
अश्वत्थमूलेऽर्कवारे स्थित्वा पठति यः पुमान् । ३४ ॥
अचलां श्रियमाप्नोति सङ्ग्रामे विजयं तथा ।
लिखित्वा पूजयेद् यस्तु सर्वत्र विजयी भवेत् ॥ ३५ ॥
यः करे धारयेन्नित्यं स पुमान् श्रियमाप्नुयात् ।
विवादे द्यूतकाले च द्यूते राजकुले रणे ॥ ३६ ॥
दशवारं पठेद् रात्रौ मिताहारो जितेन्द्रियः ।
विजयं लभते लोके मानुषेषु नराधिपः ॥ ३७ ॥
भूत-प्रेत-महादुर्गे रणे सागरसम्प्लवे ।
सिंह-व्याघ्रभये चोग्रे शर-शस्त्रास्त्र-पातने ॥ ३८ ॥
शृङ्खलाबन्धने चैव काराग्रह-नियन्त्रणे ।
कायस्तोभे वह्निचक्रे क्षेत्रे घोरे सुदारुणे ॥ ३९ ॥

का पाठ करे तो क्षय, अपस्मार, कुष्ठ तथा तिजारी ज्वर का अवश्य नाश होता है। रविवार के दिन जो पुरुष पीपल के नीचे इस कवच का पाठ करता है वह अचल लक्ष्मी तथा संग्राम में विजय प्राप्त करता है। जो इस कवच को लिखकर उसकी पूजा करता है वह सर्वत्र विजय प्राप्त करता है, तथा जो इस कवच को हाथ में धारण करता है वह लक्ष्मी को प्राप्त करता है। विवाद जूएबाजी, राजकुल तथा रण में अल्पाहार-पूर्वक जितेन्द्रिय होकर जो रात्रि में दस बार इस कवच का पाठ करता है वह विजय प्राप्त करता है। तथा मनुष्यों में राजा होता है ॥३१-३७॥

भूत, प्रेत से आविष्ट होने पर, महादुःख की अवस्था, रण, समुद्र में डूबने, अत्यन्त भयानक सिंह तथा बाघ से भय उत्पन्न होने पर, बाण तथा शस्त्रास्त्र से युद्ध की स्थिति में, सीकड़ से बँधने की स्थिति में तथा कारागार (जेल) जाने की स्थिति में, शरीर पीड़ा की स्थिति में आग

शोके महारणे चैव ब्रह्मग्रहविनाशनम् ।
सर्वदा तु पठेन्नित्यं जयमाप्नोत्यसंशयम् ॥ ४० ॥
भूर्जे वा वसने रक्ते क्षौमे वा तालपत्रके ।
त्रिगन्धेनाथ मश्यैव विलिख्य धारयेन्नरः ॥ ४१ ॥
पञ्च-सप्त-त्रिलोहैर्वा गोपितं कवचं शुभम् ॥
गले कट्यां बाहुमूले कण्ठे शिरसि धारितम् ॥ ४२ ॥
सर्वान् कामानवाप्नोति सत्यं श्रीरामभाषितम् ॥ ४३ ॥

इति पण्डित-शिवदत्तमिश्रशास्त्रिनिर्मिते हनुमद्-रहस्ये ब्रह्माण्डपुराणे नारदाऽगस्त्यसंवादे श्रीरामप्रोक्तं हनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ।

*

लगने की स्थिति में, अत्यन्त भयानक क्षेत्र (खेत) रक्षण की स्थिति में, शोक, महारण, ब्रह्मग्रह आदि में इस कवच का पाठ करने से ब्रह्मबाधा आदि समस्त दुःख दूर हो जाते हैं। जो सर्वदा इस कवच का पाठ करते हैं वे निश्चय ही विजन प्राप्त करते हैं ॥३८-४०॥

भोजपत्र, रेशमी, लाल वस्त्र पर अथवा ताड़पत्र पर इस कवच को त्रिगन्ध स्याही से लिखकर मनुष्यों को यह कवच धारण करना चाहिए ॥४१॥ पाँच, सात तथा तीन लोहे के भीतर रखकर गले, कटि अथवा बाहुमूल, कण्ठ या सिर में इस कवच को धारण करने से मनुष्य की समस्त कामनाएँ पूरी होती हैं। यह सचमुच ही श्रीराम का कहा हुआ कवच है ॥४२-४३॥

इस प्रकार पण्डितशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत हिन्दीव्याख्या सहित हनुमद्-रहस्य में ब्रह्माण्डपुराणोक्त नारद तथा अगस्त्य के संवाद में श्री राम द्वारा कथित हनुमत्कवच सम्पूर्ण ।

०

पञ्चमुखहनुमत्कवचम् (२)

अस्य श्रीपञ्चमुख-हनुमन्मन्त्रस्य ब्रह्माऋषिः, गायत्रीच्छन्दः, पञ्चमुखविराट् हनुमान् देवता, ह्रीं बीजम्, श्रीं शक्तिः, क्रौं कीलकम्, क्रूं कवचम्, क्रैं अस्त्राय फट्। इति दिग्बन्धः।

गरुड उवाच

अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि शृणु सर्वाङ्गसुन्दरम्।
यत्कृतं देवदेवेन ध्यानं हनुमतः प्रियम् ॥ १ ॥
पञ्चवक्त्रं महाभीमं त्रिपञ्चनयनैर्युतम्।
बाहुभिर्दशभिर्युक्तं सर्वकामार्थसिद्धिदम् ॥ २ ॥
पूर्वं तु वानरं वक्त्रं कोटिसूर्यसमप्रभम्।
दंष्ट्राकरालवदनं भृकुटी-कुटिलेक्षणम् ॥ ३ ॥

साधक को चाहिए कि सर्वप्रथम 'ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्य से लेकर 'क्रैं अस्त्राय फट्' पर्यन्त मन्त्र पढ़ कर, दसों दिशाओं में चुटकी बजाता हुआ दिग्बन्धन करे।

गरुड़ जी ने कहा—हे सुन्दरी! देवादिदेव भगवान् ने अपने प्रिय हनुमान् जी का जिस प्रकार ध्यान एवं पूजन आदि किया था उसका मैं निरूपण करता हूँ, उसे सावधान पूर्वक सुनो ॥१॥ महा भयंकर पाँचमुख तथा पन्द्रह नेत्र एव भक्तों के समस्त अभीष्ट कार्य को करने वाले, दस बाहुओं से युक्त पचवक्त्र हनुमान् जी का स्वरूप है ॥२॥ जिसमें पूर्व दिशा वाला मुख करोड़ों सूर्य के समान कान्ति, एवं भयंकर दांतों से युक्त तथा क्रोधयुक्त भृकुटी चढ़ी हुई दृष्टि वाला वानर नाम का मुख

अत्रैव दक्षिणं वक्त्रं नारसिंहं महाद्भुतम् ।
अत्युग्रतेजोवपुषं भीषणं भयनाशनम् ॥ ४ ॥
पश्चिमं गारुडं वक्त्रं वक्रतुण्डं महाबलम् ।
सर्वनागप्रशमनं विषभूतादिकृन्तनम् ॥ ५ ॥
उत्तरं सौकरं वक्त्रं कृष्ण दीप्तं नभोपमम् ।
पाताल - सिंह - वेताल - ज्वररोगादि - कृन्तनम् ॥ ६ ॥
ऊर्ध्वं हयाननं घोरं दानवान्तकरं परम् ।
येन वक्त्रेण विप्रेन्द्र ! तारकाख्यं महासुरम् ॥ ७ ॥
जघान शरणं तत् स्यात् सर्वशत्रुहरं परम् ।
ध्यात्वा पञ्चमुखं रुद्रं हनुमन्तं दयानिधिम् । ८ ॥

है ॥३॥ उनके दक्षिण ओर के मुख का नाम नारसिंह है, जो कि भय-विनाशक, अत्यन्त तेजस्वी शरीर वाला, भयंकर तथा महा अद्भुत है ॥४॥ उसी प्रकार महाबलवान्, समस्त नागों को शान्त करने वाला तथा विष, भूत आदि को नष्ट करने वाला, टेढ़े मुख वाले हनुमान् जी के पश्चिम मुख का नाम गारुडमुख है ॥५॥ उनके उत्तर दिशा की ओर के मुख का नाम सौकर है, जो कि आकाश के समान देदीप्यमान, नील वर्ण वाला, तथा पाताल, सिंह, बेताल और ज्वरादि रोगों को नष्ट करने वाला है ॥६॥ उसी तरह भयंकर, दानवों को नष्ट करने वाला, तथा महाबलवान् तारकासुर को जिस मुख से वध किया था हे विप्रश्रेष्ठ ! ऐसे हनुमान् जी के ऊपर की ओर के मुख का नाम हयानन है ॥७॥ जो साधक इन रुद्रस्वरूप, दयासागर, पंचमुख वाले हनुमान् का ध्यान करता है एवं उनके शरणागत होता है, उसके समस्त शत्रुओं को हनुमान्

खड्गं त्रिशूलं खट्वाङ्गं पाशमङ्कुशपर्वतम् ।
मुष्टिं कौमोदकीं वृक्षं धारयन्तं कमण्डलुम् ॥ ९ ॥
भिन्दिपालं ज्ञानमुद्रां दशभिर्मुनिपुङ्गवम् ।
एतान्यायुधजालानि धारयन्तं भजाम्यहम् ॥१०॥
प्रेतासनोपविष्टं तं सर्वाभरणभूषितम् ।
दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम् ॥११॥
सर्वाश्चर्यमयं देवं हनुमद्विश्वतोमुखम् ।
पञ्चास्य–मच्युतमनेक–विचित्रवर्णं
वक्त्रं शशाङ्क-शिखरं कपिराजवर्यम् ।
पीताम्बरादि - मुकुटैरुपशोभिताङ्गं
पिङ्गाक्षमाद्यमनिशं मनसा स्मरामि ॥१२॥
मर्कटेशं महोत्साहं सर्वशत्रुहरं परम् ।
शत्रुं संहर मां रक्ष श्रीमन्नापदमुद्धर ॥१३॥

जी नष्ट कर देते हैं ॥८॥ खड्ग, त्रिशूल, खट्वांग, पाश, अंकुश, पर्वत मुष्टि, कौमोदकी गदा, वृक्ष तथा कमण्डलु, भिन्दिपाल, अस्त्र धारण किये हुए, एवं दशों ज्ञानमुद्रा ऋषियों को प्रदर्शित करते हुए, समस्त आभरणों से सुशोभित, प्रेतासन (मुरदे) पर बैठे हुए, दिव्य माला एवं गन्ध लगाये हुए, चारों ओर मुख वाले, आश्चर्यकारी ऐसे हनुमान् जी का मैं ध्यान करता हूँ ॥९-११॥ स्थिर, अनेक विचित्र वर्ण वाले, चन्द्रमा से सुशोभित मस्तक वाले, कवियों में श्रेष्ठ, पीताम्बर एवं मुकुट से सुशोभित अंगवाले, तथा पीले नेत्र वाले, आदिभूत, पंचमुख वाले हनुमान् जी का मैं मन से निरन्तर स्मरण करता हूँ ॥१२। हे हनुमन् ! आप वानराधिपति, महान् उत्साही तथा समस्त शत्रुओं को नष्ट करने वाले हैं। अतः आप मेरी रक्षा करें, शत्रुओं का संहार करें और भयंकर

ॐ हरिमर्कट मर्कट मन्त्रमिदं
परिलिख्यति लिख्यति वामतले।
यदि नश्यति नश्यति शत्रुकुलं
यदि मुञ्चति मुञ्चति वामलता ॥ १४ ॥

ॐ हरिमर्कटाय स्वाहा। ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पूर्वकपिमुखाय सकलशत्रु-संहरणाय स्वाहा। ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय दक्षिणमुखाय करालवदनाय नरसिंहाय सकलभूत-प्रमथनाय स्वाहा। ॐ नमो भगवते पञ्चवदनाय पश्चिममुखाय गरुडाननाय सकलविषहराय स्वाहा। ॐ नमो भगवते पञ्चवद-नायोत्तरमुखायादिवराहाय सकलसम्पत्कराय स्वाहा, ॐ नमो भगवते पञ्चवदनायोर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय सकलजन-वशंकराय स्वाहा।

विनियोग:—ॐ अस्य श्रीपञ्चमुखहनुमन्मन्त्रस्य श्रीराम-चन्द्रऋषि:, अनुष्टुपछन्द:, पञ्चमुखवीरहनुमान् देवता, हनुमानिति बीजम्, वायुपुत्र इति शक्ति:, अञ्जनीसुत इति

आपत्तियों से भी मेरा उद्धार करें॥ १३ ॥ यदि साधक 'ॐ हरिमर्कटाय स्वाहा' इस मन्त्र को लिखकर अपनी बाँयीं भुजा में बाँधता है, तो उसके समस्त शत्रु कुल निश्चय ही नष्ट होते हैं। तथा अशुभ भी अपनी अशुभता का परित्याग कर शुभ फल प्रदान करता है॥१४॥

तत्पश्चात् 'ॐ हरिमर्कटाय स्वाहा' यहाँ से आरम्भ कर 'सकल-जनवशंकराय स्वाहा' पर्यन्त का पाठ करे।

विनियोग—दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीपञ्चमुख-

कीलकम्, श्रीरामदूतहनुमत्प्रसादसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः। इति ऋष्यादिक विन्यस्य।

करन्यासः—ॐ अञ्जनीसुताय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ रुद्रमूर्तये तर्जनीभ्यां नमः। ॐ वायुपुत्राय मध्यमाभ्यां नमः। ॐ अग्निगर्भाय अनामिकाभ्यां नमः। ॐ रामदूताय कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ॐ पञ्चमुखहनुमते करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः।

हृदयादिन्यासः—ॐ अञ्जनीसुताय हृदयाय नमः। ॐ रुद्रमूर्तये शिरसे स्वाहा। ॐ वायुपुत्राय शिखायै वषट्। ॐ अग्निगर्भाय कवचाय हुम्। ॐ रामदूताय नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ पञ्चमुखहनुमते अस्त्राय फट्। इति हृदयादिन्यासः।

दिग्बन्धः - ॐ पञ्चमुखहनुमते स्वाहा। इति दिग्बन्धः।

ध्यानम्[1]

हनुमन्मन्त्रस्य' से लेकर 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर जल छोड़ दे।

करन्यास- 'ॐ अञ्जनीसुताय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः' से लेकर 'ॐ पञ्चमुखहनुमते अस्त्राय फट्' पर्यन्त पढ़ता हुआ करादि एवं हृदयादि न्यास करे। तत्पश्चात् 'ॐ पंचमुखहनुमते स्वाहा' यह पढ़कर अपने मस्तक के चारों ओर चुटकी बजाता हुआ दिग्बन्ध करे।

---

१. पञ्चमुखीहनुमद्-ध्यानं ग्रन्थान्तरे—

ध्यायेद् वानर-नारसिंह-खगराट् क्रोडाश्ववक्त्रं स्फुटं
पद्माक्षीस्फुटपञ्चवक्त्ररुचिरं बालार्ककोटिद्युतिम्।
हस्ते शूल-कपाल-मुद्गरवरं कौमोदकीभूरुहं
खट्वाङ्गा-ऽङ्कुश-पाश-पर्वतधरं पीताम्बरं वानरम्॥

वन्दे वानर-नारसिंह-खगराट्-क्रोडाश्व-वक्त्रान्वितं
दिव्यालङ्करणं त्रिपञ्चनयनं देदीप्यमानं रुचा ।
हस्ता-ऽब्जैरसिखेट-पुस्तक-सुधा-कुम्भा-ऽङ्कुशाद्रिं हलं
खट्वाङ्गं फणिभूरुहं दशभुजं सर्वारिवीरापहम् ॥

विनियोगः — श्रीरामदूतायाऽऽञ्जनेयाय वायुपुत्राय महाबल-पराक्रमाय सीतादुःखनिवारणाय लङ्कादहनकारणाय महाबल-प्रचण्डाय फाल्गुनसखाय कोलाहल-सकलब्रह्माण्ड-विश्वरूपाय सप्तसमुद्रनिर्लङ्घनाय पिङ्गलनयनाया ऽमितविक्रमाय सूर्यबिम्ब-फलसेवनाय दुष्टनिवारणाय दृष्टिनिरालङ्कृताय सञ्जीविनी-सञ्जीविताङ्गद-लक्ष्मण-महाकपिसैन्यप्राणदाय दशकण्ठविध्वंस-नाय रामेष्टाय महाफाल्गुनसखाय सीतासहित-समवरप्रदाय षट्प्रयोगागम-पञ्चमुखवीरहनुमन्मन्त्रजपे विनियोगः ।

दिग्बन्धः — ॐ हरिमर्कट-मर्कटाय वं वं वं वं वं वौषट् स्वाहा । ॐ हरिमर्कट-मर्कटाय फं फं फं फं फं फट् स्वाहा । ॐ

ध्यान दिव्य अलंकारों से सुशोभित, पन्द्रह नेत्र वाले, अपनी कान्ति से ही देदीप्यमान, तलवार, खेट, पुस्तक, अमृतकलश, अंकुश, पर्वत, हल, खट्वांग, सर्प और वृक्ष आदि आयुध (शस्त्र) अपने दसों कर-कमलों में धारण किये हुए, तथा समस्त वीर शत्रुओं को नष्ट करने वाले, वानर, नृसिंह, गरुड़, वाराह एवं अश्व इन पाँच मुख वाले हनुमान् जी को मैं नमस्कार करता हूँ ।

विनियोग हाथ में जल लेकर, 'श्रीरामदूताया-ऽऽञ्जनेयाय' से प्रारम्भ कर 'हनुमन्मन्त्रजपे विनियोगः' तक पढ़कर जल छोड़े ।

तत्पश्चात् 'ॐ हरिमर्कट-मर्कटाय' से लेकर 'षं सं हं लं क्षं स्वाहा'

हरिमर्कट-मर्कटाय खें खें खें खें खें मारणाय स्वाहा। ॐ हरिमर्कट-मर्कटाय लुं लुं लुं लुं लुं आकर्षित-सकलसम्पत्कराय स्वाहा। ॐ हरिमर्कट-मर्कटाय धं धं धं धं धं शत्रुस्तम्भनाय स्वाहा। ॐ टं टं टं टं टं कूर्ममूर्तये पञ्चमुखवीरहनुमते परयन्त्र परतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा। ॐ कं खं गं घं ङं चं छं जं झं ञं टं ठं डं ढं णं तं थं दं धं नं पं फं बं भं मं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं स्वाहा। इति दिग्बन्धः।

ॐ पूर्वकपिमुखाय पञ्चमुखहनुमते टं टं टं टं टं सकल-शत्रुसंहारणाय स्वाहा। ॐ दक्षिणमुखाय पञ्चमुखहनुमते करालवदनाय नरसिंहाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः सकल-भूत-प्रेत-दमनाय स्वाहा। ॐ पश्चिममुखाय गरुडाननाय पञ्चमुख-हनुमते मं मं मं मं मं सकलविषहराय स्वाहा। ॐ उत्तर-मुखायाऽऽदिवराय लं लं लं लं लं नृसिंहाय नीलकण्ठमूर्तये पञ्चमुखहनुमते स्वाहा। ॐ ऊर्ध्वमुखाय हयग्रीवाय रुं रुं रुं रुं रुं रुद्रमूर्तये सकलप्रयोजन-निर्वाहकाय स्वाहा। ॐ अञ्जनी-सुताय वायुपुत्राय महाबलाय सीताशोकनिवारणाय श्रीरामचन्द्र-कृपापादुकाय महावीर्यप्रमथनाय ब्रह्माण्डनाथाय कामदाय पञ्चमुखवीरहनुमते स्वाहा। भूत-प्रेत-पिशाच-ब्रह्मराक्षस-शाकिनी-डाकिन्यन्तरिक्षग्रह-परयन्त्र-परतन्त्रोच्चाटनाय स्वाहा।

तक पढ़कर अपने मस्तक के चारों ओर चुटकी बजा कर दिग्बन्ध करे।

इसके बाद 'ॐ पूर्वकपिमुखाय' से आरम्भ कर 'जं जं जं जं जं

सकलप्रयोजननिर्वाहकाय पञ्चमुखवीरहनुमते श्रीरामचन्द्रवर-प्रसादाय जं जं जं जं जं स्वाहा ।

इदं कवचं पठित्वा तु महाकवचं पठेन्नरः ।
एकवारं जपेत् स्तोत्रं सर्वशत्रुनिवारणम् ॥ १५ ॥
द्विवारं तु पठेन्नित्यं पुत्र-पौत्र-प्रवर्धनम् ।
त्रिवारं च पठेन्नित्यं सर्वसम्पत्करं शुभम् ॥ १६ ॥
चतुर्वारं पठेन्नित्यं सर्वरोगनिवारणम् ।
पञ्चवारं पठेन्नित्यं सर्वलोकवशङ्करम् ॥ १७ ॥
षट्वारं च पठेन्नित्यं सर्वदेववशङ्करम् ।
सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्वसौभाग्यदायकम् ॥ १८ ॥
अष्टवारं पठेन्नित्यमिष्टकामार्थ-सिद्धिदम् ।
नववारं पठेन्नित्यं राजभोगमवाप्नुयात् ॥ १९ ॥
दशवारं पठेन्नित्यं त्रैलोक्यज्ञानदर्शनम् ।
रुद्रावृत्तिं पठेन्नित्यं सर्वसिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ॥ २० ॥

स्वाहा' तक इस कवच का पाठकर, तदनन्तर महाकवच का पाठ करे।

इस कवच का एक बार पाठ करने से समस्त शत्रुनाश, दो बार करने से पुत्र-पौत्रादिकी वृद्धि, तीन बार पाठ करने से समस्त सम्पत्ति प्राप्ति तथा चार बार पाठ करने से सभी रोगों का नाश, पांच बार पाठ करने से समस्त प्राणिमात्रवशकारी एवं छह बार पाठ करने से समस्त देवगण वशीभूत, और सात बार पाठ करने से समस्त सौभाग्य प्राप्ति, आठ बार पाठ करने से इष्ट कार्य की सिद्धि, नव बार पाठ करने से राज्यसुखोपभोग प्राप्ति, दस बार पाठ करने से त्रिलोक-

कवचस्मरणेनैव महाबलमवाप्नुयात् ॥ २१ ॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते हनुमद्-रहस्ये
सुदर्शनसंहितायां श्रीरामचन्द्रसीताप्रोक्तं
पञ्चमुख-हनुमत्कवचं सम्पूर्णम् ।

—*—

सप्तमुखहनुमत्कवचम् (१)

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीसप्तमुखीवीरहनुमत्कवचस्तोत्र-मन्त्रस्य नारदऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, श्रीसप्तमुखीकपिः, परमात्मा देवता, ह्रां बीजम्, ह्रीं शक्तिः, ह्रूं कीलकम्, मम सर्वाभीष्ट-सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ।

ज्ञान की दृष्टि एवं ग्यारह बार पाठ करने से निश्चित ही समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। और इस कवच के स्मरण मात्र से ही मनुष्य महाबलवान् होता है ॥१५-२१॥

इस प्रकार हनुमद्-रहस्य में सुदर्शनसंहितान्तर्गत श्रीरामचन्द्र सीताप्रोक्त
हिन्दीव्याख्यासहित पञ्चमुखहनुमत्कवच समाप्त ।

*

विनियोग— साधक को चाहिए कि सर्वप्रथम दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीसप्तमुखीवीरहनुमत्कवचस्तोत्रमन्त्रस्य' से लेकर 'जपे विनियोगः' तक पढ़कर भूमि पर जल छोड़े।

करन्यासः—ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः, ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः, ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः, ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः, ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः, ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। इति करन्यासः। एव हृदयादिन्यासः।

ध्यानम्

वन्दे वानर-सिंह-सर्प-रिपु-वाराहा-ऽश्व-गो-मानुषै-
र्युक्तं सप्तमुखैः करैर्द्रुमगिरिं चक्रं गदां खेटकम्।
खट्वाङ्गं हलमङ्कुशं फणिसुधा-कुम्भौ शराब्जाभयान्
शूलं सप्तशिखं दधानममरैः सेव्यं कपिं कामदम्॥

ब्रह्मोवाच

सप्त शीर्ष्णः प्रवक्ष्यामि कवचं सर्वसिद्धिदम्।
जप्त्वा हनुमतो नित्यं सर्वपापैः प्रमुच्यते॥ १॥

करन्यास—'ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः' से आरम्भ कर 'ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः' तक वाक्य पढ़कर करन्यास एवं हृदयादि-षडंगन्यास करे।

ध्यान - अपने करकमलों में वृक्ष, पर्वत, चक्र, गदा, खेटक, खट्वांग, हल, अंकुश, सर्प, अमृतकलश, बाण, कमल, अभय, शूल और अग्नि को धारण किये हुए, सर्वाभीष्टप्रदायक, देवताओं से भी सेवित, वानर, सिंह गरुड़, वाराह, अश्व तथा मनुष्य इन सप्तमुख वाले हनुमान् जी को मैं नमस्कार करता हूँ।

कवच—ब्रह्मा ने कहा—हे देवगण! सात मुख वाले हनुमान् जी के सर्वसिद्धिप्रदायक कवच का मैं वर्णन करता हूँ, जिसका नित्य पाठ करने से मनुष्य त्रिविध ताप-पाप से मुक्त हो जाता है॥१॥

सप्तस्वर्गपतिः पायाच्छिखां मे मारुतात्मजः ।
सप्तमूर्धा शिरोऽव्यान्मे सप्तार्चिर्भालदेशकम् ॥ २ ॥
त्रिःसप्तनेत्रो नेत्रेऽव्यात् सप्तस्वरगतिः श्रुती ।
नासां सप्तपदार्थोऽव्यान्मुखं सप्तमुखोऽवतु ॥ ३ ॥
सप्तजिह्वस्तु रसनां रदान् सप्तहयोऽवतु ।
सप्तच्छन्दो हरिः पातु कण्ठं बाहू गिरिस्थितः ॥ ४ ॥
करौ चतुर्दशकरो भूधरोऽव्यान्ममाङ्गुलीः ।
सप्तर्षिध्यातो हृदयमुदरं कुक्षिसागरः ॥ ५ ॥
सप्तद्वीपपतिश्चित्तं सप्तव्याहृतिरूपवान् ।
कटिं मे सप्तसंस्थार्थदायकः सक्थिनी मम ॥ ६ ॥
सप्तग्रहस्वरूपी मे जानुनी जङ्घयोस्तथा ।
सप्तधान्यप्रियः पादौ सप्तपातालधारकः ॥ ७ ॥
पशून् धनं च धान्यं च लक्ष्मीं लक्ष्मीप्रदोऽवतु ।
दारान् पुत्रांश्च कन्याश्च कुटुम्बं विश्वपालकः ॥ ८ ॥

सप्तस्वर्गपति वायुनन्दन मेरे शिखा की, सप्तमूर्धा मस्तक की, सप्तार्चि कपाल की, त्रिसप्तनेत्र नेत्र की, सप्तस्वरगति दोनों कान की, सप्तपदार्थ नासिका की, सप्तमुख मुख की रक्षा करें ॥२-३॥ इसी प्रकार सप्तजिह्व जीभ की, सप्तहय दाँत की, सप्तच्छन्दकपि कण्ठ की तथा गिरिस्थित दोनों बाहुओं की, चतुर्दशकर दोनों हाथों की, भूधर अँगुलियों की, सप्तर्षिध्यात हृदय की, कुक्षिसागर पेट की सप्तद्वीपपति चित्त की, सप्तव्याहृति कटिप्रदेश की, सप्तसंस्थार्थदायक मेरे सक्तियों की रक्षा करें॥४-६॥ तथा सप्तग्रहस्वरूपी मेरे घुटनों की, सप्तधान्यप्रिय जंघाओं की, सप्तपातालधारक मेरे पैरों की, लक्ष्मीप्रद पशु, धन, धान्य, लक्ष्मी की, विश्वपालक पत्नी, पुत्र, कन्या एवं कुटुम्ब की रक्षा करें ॥७-८॥

अनुक्तस्थानमपि मे पायाद् वायुसुतः सदा ।
चौरेभ्यो व्यालदंष्ट्रिभ्यः शृङ्गिभ्यो भूत-राक्षसात् ॥ ९ ॥
दैत्येभ्योऽप्यथ यक्षेभ्यो ब्रह्मराक्षसजाद् भयात् ।
दंष्ट्राकरालवदनो हनुमान् मां सदाऽवतु ॥ १० ॥
परशस्त्र-मन्त्र-तन्त्र-यन्त्रा-ऽग्नि-जल-विद्युतः ।
रुद्रांशः शत्रुसङ्ग्रामात् सर्वावस्थासु सर्वभृत् ॥ ११ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय आद्यकपिमुखाय वीरहनुमते सर्वशत्रुसंहारणाय ठं ठं ठं ठं ठं ठं ठं ॐ नमः स्वाहा ॥ १२ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय द्वितीयनारसिंहास्याय अत्युग्रतेजोवपुषे भीषणाय भयनाशनाय हं हं हं हं हं हं हं ॐ नमः स्वाहा ॥ १३ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय तृतीयगरुडवक्त्राय वज्र-दंष्ट्राय महाबलाय सर्वरोगविनाशनाय मं मं मं मं मं मं मं ॐ नमः स्वाहा ॥ १४ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय चतुर्थक्रोडतुण्डाय सौमित्रि-रक्षकाय पुत्राद्यभिवृद्धिकराय लं लं लं लं लं लं लं ॐ नमः स्वाहा ॥ १५ ॥

मेरे अनुक्त (अकथित) अंगों की वायुसुत निरन्तर रक्षा करें । उसी प्रकार चोर, सर्प, भयकर दाँत एवं सींग वाले पशु, भूत, राक्षसादिगण, दैत्य, यक्ष तथा ब्रह्मराक्षस द्वारा उत्पन्न भयसे दंष्ट्राकरालवदन हनुमान् हमारी रक्षा करें ॥९-१०॥ शत्रुद्वारा चलाये गये शस्त्र, मन्त्र, तन्त्र, यन्त्र आदि तथा अग्नि, जल, बिजली और शत्रु-संग्राम से रुद्रांश और सभी अवस्थाओं में सर्वभृत् कपि मेरी रक्षा करें ॥११॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय पञ्चमाश्ववदनाय रुद्रमूर्त्तये सर्ववशीकरणाय सर्वागमस्वरूपाय रुं रुं रुं रुं रुं रुं रुं ॐ नमः स्वाहा ॥ १६ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय षष्ठगोमुखाय सूर्यरूपाय सर्वरोगहराय मुक्तिदात्रे ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ नमः स्वाहा ॥ १७ ॥

ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय सप्तमानुषमुखाय रुद्रावताराय अञ्जनीसुताय सकलदिग्यशोविस्तारकाय वज्रदेहाय सुग्रीवसाह्यकराय उदधिलङ्घनाय सीताशुद्धिकराय लङ्कादहनाय अनेकराक्षसान्तकाय रामानन्ददायकाय अनेकपर्वतोत्पाटकाय सेतुबन्धकाय कपिसैन्यनायकाय रावणान्तकाय ब्रह्मचर्याश्रमिणे कौपीनब्रह्मसूत्रधारकाय रामहृदयाय सर्वदुष्टग्रहनिवारणाय शाकिनी-डाकिनी-वेताल-ब्रह्मराक्षस-भैरवग्रह-यक्षग्रह - पिशाचग्रह-ब्रह्मग्रह-क्षत्रियग्रह-वैश्यग्रह-शूद्रग्रहान्त्यजग्रह - म्लेच्छग्रह-सर्वग्रहोच्चाटकाय मम सर्वकार्यसाधकाय सर्वशत्रुसंहारकाय सिंहव्याघ्रादि-दुष्ट-सत्त्वाकर्षकायैकाहिकादि - विविधज्वरच्छेदकाय परयन्त्र-मन्त्र-तन्त्र-नाशकाय सर्वव्याधि-निकृन्तकाय सर्पादि-सर्वस्थावर-जङ्गम-विषस्तम्भनकराय सर्वराजभय-चोरभयाऽग्नि-भय-प्रशमनायाऽऽध्यात्मिका-ऽऽधिदैविकाधि-भौतिक - तापत्रय-निवारणाय सर्वविद्या-सर्वसम्पत्-सर्वपुरुषार्थदायकाया-ऽसाध्य-कार्य-साधकाय सर्ववरप्रदाय सर्वाऽभीष्टकराय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ नमः स्वाहा ॥ १८ ॥

तत्पश्चात् 'ॐ नमो भगवते सप्तवदनाय' से लेकर 'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ नमः स्वाहा' तक इस कवच का पाठ करे ॥१२-१८॥

फलश्रुतिः—य इदं कवचं नित्यं सप्तास्यस्य हनूमतः।
त्रिसन्ध्यं जपते नित्यं सर्वशत्रुविनाशनम् ॥१९॥
पुत्र-पौत्रप्रदं सर्वं सम्पद्-राज्यप्रदं परम्।
सर्वरोगहरं चाऽऽयुः-कीर्तिदं पुण्यवर्धनम् ॥२०॥
राजानं स वशं नीत्वा त्रैलोक्यविजयी भवेत्।
इदं हि परमं गोप्यं देयं भक्तियुताय च ॥२१॥
न देयं भक्तिहीनाय दत्त्वा स निरयं व्रजेत् ॥२२॥
नामानि सर्वाण्यपवर्गदानि रूपाणि विश्वानि च यस्य सन्ति।
कर्माणि देवैरपि दुर्घटानि तं मारुतिं सप्तमुखं प्रपद्ये ॥२३॥

इति पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविनिर्मिते हनुमद्-रहस्ये-ऽथर्वणरहस्योक्त-सप्तमुखहनुमत्कवचं समाप्तम्।

०

फलश्रुति—जो इस सप्तमुख हनुमत्कवच का त्रिकाल पाठ करता है उसके समस्त शत्रु नष्ट हो जाते हैं, तथा उसे पुत्र, पौत्र आदि की प्राप्ति होती है। एवं उसके समस्त असाध्य रोग नष्ट हो जाते हैं तथा समस्त सम्पत्ति एवं राज्यसुख का वह उपभोग करता है। और उसकी आयु, कीर्त्ति एवं पुण्य की निरन्तर वृद्धि होती है ॥१९-२०॥ और वह प्राणी राजाओं को अपने वश कर त्रैलोक्य में विजय प्राप्त करता है। अत्यन्त गुप्त यह कवच श्रद्धा-भक्तिहीन नास्तिक को कदापि प्रदान न करे। यदि अज्ञानवश वह नास्तिक को उपदेश देता है, तो निश्चय ही वह नरकगामी होता है ॥२१-२२॥ जिनके स्वरूप एवं नाम इस लोक में मोक्ष देने वाले हैं तथा जिनके कार्य अति भयंकर हैं, जिसे कि समस्त देवगण भी करने में असमर्थ हैं ऐसे सप्तमुख हनुमान् को मैं शरण में हूँ ॥२३॥

इस प्रकार पण्डितशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत हनुमद्-रहस्य में अथर्वणरहस्योक्त हिन्दीव्याख्यासहित सप्तमुखहनुमत्कवच समाप्त।

एकादशमुखहनुमत्कवचम् (४)

लोपामुद्रोवाच

कुम्भोद्भव ! दयासिन्धो ! श्रुतं हनुमतः प्रभो ।
यन्त्र-मन्त्रादिकं सर्वं त्वन्मुखोदीरितं मया ॥ १ ॥
दयां कुरु मयि प्राणनाथ ! वेदितुमुत्सहे ।
कवचं वायुपुत्रस्य एकादशमुखात्मनः ॥ २ ॥
इत्येवं वचनं श्रुत्वा प्रियायाः प्रश्रयान्वितम् ।
वक्तुं प्रचक्रमे तत्र लोपामुद्रां प्रति प्रभुः ॥ ३ ॥

अगस्त्य उवाच

नमस्कृत्वा रामदूतं हनुमन्तं महामतिम् ।
ब्रह्मप्रोक्तं तु कवचं शृणु सुन्दरि ! सादरात् ॥ ४ ॥

अगस्त्यपत्नी लोपामुद्रा ने महर्षि अगस्त्यजी से कहा हे दयासागर ! कुम्भ से उत्पन्न प्राणनाथ ! आपने तो मुझे अपने मुख से ही श्रीहनुमान् जी का यन्त्र, मन्त्र, तन्त्र आदि सभी कुछ बताया। इसके अनन्तर वायुपुत्र एकादश मुख वाले हनुमान् जी के कवच जानने की मेरी अपूर्व इच्छा है, जिसे दयापूर्वक आप बताने की कृपा करें। इस प्रकार अपनी प्रिय पत्नी के वचन सुनकर लोपामुद्रा से अगस्त्यजी ने इस प्रकार कहा ॥ १-३ ॥

हे सुन्दरि ! सृष्टिविधायक ब्रह्मा-द्वारा कथित एकादश मुख वाले हनुमान् जी के कवच का वर्णन मैं करता हूँ, जिसे तुम श्रद्धा-भक्ति से सावधानी-पूर्वक सुनो। इस प्रकार कहकर अतुलित बुद्धि वाले रामदूत हनुमान् जी को प्रणाम कर, महर्षि अगस्त्यजी ने इस प्रकार कहा ॥४॥

सनन्दनाय च महच्चतुराननभाषितम् ।
कवचं कामदं दिव्यं रक्षःकुलनिबर्हणम् ।। ५ ।।
सर्वसम्पत्प्रदं पुण्यं मर्त्यानां मधुरस्वरे ।
ॐ अस्य श्रीकवचस्यैकादशवक्त्रस्य धीमतः ।। ६ ।।
हनुमत्कवचमन्त्रस्य सनन्दनऋषिः स्मृतः ।
प्रसन्नात्मा हनूमांश्च देवताऽत्र प्रकीर्तिता ।। ७ ।।
छन्दोऽनुष्टुप्-समाख्यातं बीजं वायुसुतस्तथा ।
मुख्याऽत्र प्राणशक्तिश्च विनियोगः प्रकीर्तितः ।
सर्वकामार्थसिद्ध्यर्थं जप एवमुदीरयेत् ।। ८ ।।
स्फ्रें बीजशक्तिधृक् पातु शिरो मे पवनात्मजः ।
इति अङ्गुष्ठाभ्यां नमः ।

हे प्रिये ! चतुर्मुख ब्रह्मा ने समस्त अभीष्टप्रद एवं सम्पूर्ण राक्षसों को नष्ट करने वाले तथा अणिमादि आठ सिद्धियों को देने वाले, एकादश मुख वाले श्रीहनुमान् जी के पुण्यकारी कवच का वर्णन भगवद्-पार्षद सनन्दनादिकों से मधुर स्वर में इस प्रकार किया ।।५½।।

विनियोग—हे सनन्दनादि महर्षिगण ! इन एकादशमुख वाले हनुमत्कवच मन्त्र के सनन्दन ऋषि, प्रसन्न चित्त वाले हनुमान् देवता, अनुष्टुप् छन्द, वायुसुत बीज एवं मुख्य प्राण शक्ति रूप से हैं, इस प्रकार कहा । साधक को चाहिए कि वह दाहिने हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीकवचस्य, एकादशवक्त्रस्य' इत्यादि देश-काल का निरूपण करते हुए, 'सर्वकामार्थ–सिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः' तक कहकर भूमि पर जल छोड़ दे ।।५½-८।।

न्यास—तत्पश्चात् 'स्फ्रें बीजशक्तिधृक् पातु' से आरम्भ कर,

क्रौं बीजात्मा नयनयोः पातु मां वानरेश्वरः ।
इति तर्जनीभ्यां नमः ॥ ९ ॥
ॐ क्षं बीजरूपीकर्णौ मे लक्ष्मणप्राणदायकः ।
इति मध्यमाभ्यां नमः ।
ॐ ग्लौं बीजवाच्यो नासां मे लक्ष्मणप्राणदायकः ।
इति अनामिकाभ्यां नमः ॥ १० ॥
ॐ वं बीजार्थश्च कण्ठं मे अक्षयक्षयकारकः ।
इति कनिष्ठिकाभ्यां नमः ।
ॐ रां बीजवाच्यो हृदयं पातु मे कपिनायकः ।
इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ ११ ॥

कवचम्

ॐ वं बीजकीर्तितः पातु बाहू मे चाऽञ्जनीसुतः ।
ॐ ह्रां बीजं राक्षसेन्द्रस्य दर्पहा पातु चोदरम् ॥ १२ ॥
सौं बीजमयो मध्यं मे पातु लङ्काविदाहकः ।
ह्रीं बीजधरो गुह्यं मे पातु देवेन्द्रवन्दितः ॥ १३ ॥
रं बीजात्मा सदा पातु चोरू मे वार्धिलङ्घनः ।
सुग्रीवसचिवः पातु जानुनी मे मनोजवः ॥ १४ ॥

'इति करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः' तक पढ़कर करादि तथा हृदयादि षडंगन्यास करे ॥९-११॥

कवच—'वं' बीजयुक्त अंजनीसुत मेरे दोनों भुजाओं की, 'ह्रां' बीज युक्त रावण के अभिमान को नष्ट करने वाले दर्पहा पेट की, 'सौं' बीज सहित लंकाविदाहक नाभि की, 'ह्रीं' बीज वाले देवेन्द्रवन्दित गुप्तांग की,

आपादमस्तकं पातु रामदूतो महाबलः ।
पूर्वे वानरवक्त्रो मां चाऽऽग्नेय्यां क्षत्रियान्तकृत् ॥ १५ ॥

दक्षिणे नारसिंहस्तु नैर्ऋत्यां गणनायकः ।
वारुण्यां दिशि मामव्यात् खगवक्त्रो हरीश्वरः ॥ १६ ॥

वायव्यां भैरवमुखः कौबेर्यां पातु मे सदा ।
क्रोडास्यः पातु मां नित्यमीशान्यां रुद्ररूपधृक् ॥ १७ ॥

रामस्तु पातु मां नित्यं सौम्यरूपी महाभुजः ।
एकादशमुखस्यैतद् दिव्यं वै कीर्तितं मया ॥ १८ ॥

रक्षोघ्नं कामदं सौम्यं सर्वसम्पद्-विधायकम् ।
पुत्रदं धनदं चोग्रं शत्रुसम्पत्तिमर्दनम् ॥ १९ ॥

'रं' बीजात्मक वार्धिलंघन दोनों घुटनों की, सुग्रीवमन्त्री मनोजव मेरे जानुकी रक्षा करें।।१२-१४।। इसी प्रकार महाबली रामदूतपैरसे लेकर मस्तक पर्यन्त मेरे सभी अंगों की रक्षा करें। तथा वानरमुख वाले पूर्व दिशा में, परशुराम आकृति वाले आग्नेय में, नारसिंहवक्त्रवाले दक्षिण में, गणेश मुखवाले नैर्ऋत्यमें, एवं गरुडमुखवाले कपीश्वर पश्चिम में, भैरव मुखवाले वायव्य में, वाराह मुखवाले उत्तरमें तथा रुद्रमुख वाले ईशान दिशा में मेरी निरन्तर रक्षा करें।।१५-१७।। विशाल बाहुवाले, शान्त-स्वरूप, मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम मेरी निरन्तर रक्षा करें। इस प्रकार मैंने आपसे राक्षसों को नष्टकरने वाले, सर्वाभीष्टप्रद, सौम्य, सर्वसम्पत्ति-प्रदायक, पुत्र एवं धनप्रद तथा समस्त शत्रु और उनकी सम्पत्ति विनाशक, चिन्तित मनोरथपूर्णकारक, स्वर्ग-मोक्षप्रद, एकादश-

स्वर्गा-ऽपवर्गदं दिव्यं चिन्तितार्थप्रदं शुभम् ।
एतत् कवचमज्ञात्वा मन्त्रसिद्धिर्न जायते ॥ २० ॥

फलश्रुतिः

चत्वारिंशत्सहस्राणि पठेच्छुद्धात्मना नरः ।
एकवारं पठेन्नित्यं कवचं सिद्धिदं महत् ॥ २१ ॥
द्विवारं वा त्रिवारं वा पठेदायुष्यमाप्नुयात् ।
क्रमादेकादशादेवमावर्तनकृतात् सुधीः ॥ २२ ॥
वर्षान्ते दर्शनं साक्षाल्लभते नाऽत्र संशयः ।
यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति पूरुषः ।
ब्रह्मोदीरितमेतद्धि तवाऽग्रे कथितं महत् ॥ २३ ॥

मुख वाले हनुमान् जी के इस दिव्य कवच का वर्णन किया। इस कवच को बिना किये किसी भी अवस्था में मन्त्र सिद्धि नहीं होती ॥१८-२०॥

फलश्रुति--मनुष्य को चाहिए कि वह अत्यन्त श्रद्धा-भक्तिपूर्वक चालीस हजार इस कवच का पाठ करे। तथा सदैव एक बार पाठ करने से यह कवच सिद्ध होता है। इसी प्रकार दो या तीन बार नित्य पाठ करने से अपमृत्यु (अकाल मृत्यु) का नाश एवं आयुष्य वृद्धि कारक होता है। जो साधक नित्य इस कवच का ग्यारह, बारह पाठ करता है, उसे निश्चित ही वर्षभर के भीतर निःसन्देह हनुमान् जी का साक्षात्कार दर्शन प्राप्त होता है। और वह जिन-जिन कामनाओं की इच्छा करता है वे सभी अवश्य ही उसके पूर्ण होते हैं। हे प्रिये ! ब्रह्मा ने सनन्दनादि ऋषियों से जिस प्रकार इस कवच का निरूपण किया था उसे मैंने तुम्हारे समक्ष सम्पूर्ण रूप से कहा ॥२१-२३॥ इस प्रकार महर्षि अगस्त्य जी ने

इत्येवमुक्त्वा कवचं महर्षिस्तूष्णीं बभूवेन्दुमुखीं निरीक्ष्य।
संहृष्टचित्ताऽपि तदा तदीय-पादौ ननामाऽतिमुदा स्वभर्तुः ॥२४॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचिते हनुमद्-रहस्ये-
ऽगस्तिसंहितोक्त-एकादशमुख-हनुमत्कवचं सम्पूर्णम्।

*

हनुमत्स्तोत्रम्

नमो हनुमते तुभ्यं नमो मारुतसूनवे।
नमः श्रीरामभक्ताय श्यामलाङ्गाय ते नमः ॥ १ ॥
नमो वानरवीराय सुग्रीवसख्यकारिणे।
सीता-शोक-विनाशाय राममुद्राधराय च ॥ २ ॥
रावणान्त-कुलच्छेदकारिणे ते नमो नमः।
मेघनाद-मखध्वंस-कारिणे ते नमो नमः ॥ ३ ॥

इस कवच का चन्द्रमुखी लोपामुद्रा के समक्ष वर्णन कर मौन हो गये। तत्पश्चात् अत्यन्त प्रसन्न चित्तवाली उस लोपामुद्रा ने अपने परमाराध्य पति अगस्त्यजी के चरणों में अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति युक्त हो प्रणाम किया ॥ २४ ॥

इस प्रकार पण्डितशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत हमुमद्-रहस्य में अगस्ति संहितोक्त हिन्दीव्याख्यासहित एकादशमुखहनुमत्कवच सम्पूर्ण।

०

मारुतसुत, श्रीरामभक्त, श्याममुख वाले हनुमान्‌जी को नमस्कार है ॥१॥ वानरों में श्रेष्ठ, सुग्रीव से मित्रता करने वाले तथा सीता के शोक नष्ट करने वाले, श्रीराममुद्रा (अँगूठी) धारण करने वाले, रावण

वायुपुत्राय वीराय आकाशोदरगामिने ।
वनपाल - शिरच्छेद - लङ्काप्रासादभञ्जिने ॥ ४ ॥
ज्वलत्कनकवर्णाय दीर्घलाङ्गूलधारिणे ।
सौमित्रिजयदात्रे च रामदूताय ते नमः ॥ ५ ॥
अक्षय्यवधकर्त्रे च ब्रह्मपाशनिवारिणे ।
लक्ष्मणांघ्रि-महाशक्ति-घातक्षत-विनाशिने ॥ ६ ॥
रक्षोघ्नाय रिपुघ्नाय भूतघ्नाय च ते नमः ।
ऋक्ष-वानर-वीरैकप्राणदाय नमो नमः ॥ ७ ॥
परसैन्यबलघ्नाय शस्त्राऽस्त्रघ्नाय ते नमः ।
विषघ्नाय द्विषघ्नाय ज्वरघ्नाय च ते नमः ॥ ८ ॥

के कुल को समूल उच्छेदन करने वाले, मेघनाद के यज्ञ को नष्ट करने वाले आपको बारंबार नमस्कार है ॥२-३॥

वायुपुत्र, वीर, उछलकर आकाश में जाने वाले, अशोक वन की रक्षा करने वाले, राक्षसों के सिर काटने वाले, लंका के महल को नष्ट करने वाले, तपे हुए सुवर्ण के समान स्वरूप वाले, लम्बी पूँछ वाले, संजीवनी बूटी द्वारा लक्ष्मण को जीवित करने वाले रामदूत को नमस्कार है ॥४-५॥

अक्षय कुमार को मारने वाले, ब्रह्मपाश को अपने हुँकार से लौटाने वाले, मेघनाद द्वारा प्रयुक्त लक्ष्मण के चरणों में महाशक्ति से उत्पन्न प्रहार को नष्ट करने वाले, राक्षस, शत्रु एवं भूत, प्रेतादिकों को नष्ट करने वाले, भालू-बानर आदिकों को प्राणदान करने वाले, शत्रु के सैन्य को नष्ट करने वाले तथा अस्त्रों को विनष्ट करने वाले, विष, शत्रु तथा ज्वर को नाश करने वाले ऐसे आपको बारंबार नमस्कार है ॥६-८॥

महाभयरिपुघ्नाय भक्तत्राणैककारिणे ।
परप्रेरित-मन्त्राणां यन्त्राणां स्तम्भकारिणे ॥ ९ ॥
पयःपाषाण-तरणकरणाय नमो नमः ।
बालार्क-मण्डलत्रास-कारिणे भवतारणे ॥१०॥
नखायुधाय भीमाय दन्तायुधधराय च ।
रिपुमाया-विनाशाय रामाज्ञालोकरक्षिणे ॥११॥
प्रतिग्रामस्थितायाऽथ रक्षोभूतवधार्थिने ॥१२॥
करान्त-शैलशस्त्राय द्रुमशस्त्राय ते नमः ।
बालैकब्रह्मचर्याय रुद्रमूर्तिधराय च ॥१३॥
दक्षिणाशाभास्कराय शतचन्द्रोदयात्मने ।
कृत-क्षत-व्यथाघ्नाय सर्वक्लेशहराय च ॥१४॥

महाभय एवं शत्रुनाशक, अपने भक्तों के एकमात्र रक्षक, शत्रुओं के द्वारा प्रेरित, मारण, मोहन, उच्चाटन और वशीकरण आदि मन्त्र-यन्त्रों को स्तम्भन करने वाले, सेतुबन्ध के समय समुद्र में पत्थर को तैराने वाले तथा उदित सूर्यमण्डल को त्रस्त करने वाले, अपने भक्तों को संसाररूपी भवसागर से पार करने वाले ऐसे श्रीहनुमान् जी को पुनः-पुनः नमस्कार है ॥९-१०॥

भयंकर रूप वाले, नख एवं दाँत रूप प्रधान शस्त्र धारण करने वाले तथा शत्रु की माया को समूल नष्ट करने वाले, राम की आज्ञा को पालन करने वाले, राक्षस एवं भूतगणों का निरन्तर वध करने वाले, ग्राम में स्थित रहने वाले ऐसे हनुमान् जी को नमस्कार है ॥११-१२॥ शैलखण्ड एवं वृक्षरूप शस्त्र को धारण करने वाले, बालब्रह्मचारी, दक्षिणायन सूर्यस्वरूपवाले, एक साथ सैकड़ों उदय चन्द्र के समान स्वरूपवाले,

स्वाम्याज्ञा-प्रार्थ-संग्रामसंख्ये सञ्जयकारिणे ।
भक्तानां दिव्यवादेषु संग्रामे जयदायिने ॥१५॥
किं कृत्वा बुबुकोच्चार-घोरशब्दकराय च ।
रात्रोग्र व्याधि-संस्तम्भ-कारिणे वनधारिणे ॥१६॥
सदा वनफलाहार-निरताय विशेषतः ।
महार्णव-शिलाबन्धे सेतुबन्धाय ते नमः ॥१७॥
वादे विवादे संग्रामे भये घोरे च संस्तवेत् ।
सिंह-तस्कर-व्याघ्रेषु पठंस्तत्र भयं न हि ॥१८॥
दिव्यभूतमये व्याघ्रे विषे स्थावर-जङ्गमे ।
राजशस्त्रभये चोग्रे तथा ग्रहभयेषु च ॥१९॥

प्राणिमात्र के क्षत (घाव) व्यथा को नष्ट करने वाले एवं समस्त कष्टों को तत्क्षण दूर करने वाले ऐसे हनुमान् जी को नमस्कार है ॥१३-१४॥

स्वामी के आज्ञानुसार अनेक युद्ध में प्रवृत्त होने वाले, सत्यमार्ग में स्थित, सर्वदा विजय कराने वाले, अपने भक्तों के समस्त व्यवहार एवं वाद-विवाद तथा सग्राम में विजय प्राप्त कराने वाले, एकाएक भयंकर 'बुबुक' अर्थात् बन्दर-घुड़की दिखाने वाले, प्रसन्नतारूपी सुन्दर किलकारी से भयंकरसे-भयकर व्याधि को नष्ट करने वाले, सर्वदा वन में विचरण करने वाले श्रीहनुमान् जी को नमस्कार है ॥१५-१६॥ निरन्तर जंगली फलों के आहार में रत रहने वाले, विशेषकर लंका में जाने के लिए समुद्र में पत्थर तैराकर पुल बनाने वाले श्रीहनुमान् जी को नमस्कार है ॥१७॥

वाद-विवाद, संग्राम, भयंकर भय, सिंह, चोर तथा व्याघ्र (बाघ) आदि द्वारा उत्पन्न भय इस हनुमत् स्तोत्र के पाठ करने से नष्ट होते हैं। उसी प्रकार भूत-प्रेतादि, व्याघ्र, विष तथा समस्त चराचर से उत्पन्न

जले सर्पे महावृष्टौ दुर्भिक्षे प्राणसम्प्लवे ।
पठन् स्तोत्रं प्रमुच्येत भयेभ्यः सर्वतो नरः ॥ २० ॥
तस्य क्वापि भयं नास्ति हनुमन्-स्तव-पाठनात् ।
सर्वदा वै त्रिकालं च पठनीयस्तवो ह्यसौ ॥ २१ ॥
सर्वान् कामानवाप्नोति नाऽत्र कार्या विचारणा ।
विभीषणकृतं स्तोत्रं तार्क्ष्येण समुदीरितम् ॥ २२ ॥
ये पठिष्यन्ति भक्त्या च सिद्धयस्तत्करे स्थिताः ॥ २३ ॥

इति पण्डित–श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिरचिते हनुमद्-रहस्ये सुदर्शन-संहितोक्तं विभीषणप्रोक्तं हमुमत्स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

*

भय एवं भयंकर राज-शस्त्रभय, ग्रहभय, जल, सर्प, महावृष्टि, दुर्भिक्ष, प्राणसकट आदि समस्त भयों से इस स्तोत्र का पाठ करने वाला मनुष्य छुटकारा पा जाता है ॥ १८-२०॥ इस हनुमत्स्तोत्र के तीनों समय (प्रातः, मध्याह्न, सायं) निरन्तर पाठ करने वाले मनुष्य को भयकभी भी नहीं होता। अतः इसका पाठ अवश्य करना चाहिए। निःसन्देह इस स्तोत्र का पाठकरने वाले प्राणी अपने समस्त अभीष्ट कार्य की सिद्धिप्राप्त करते हैं। उक्त स्तोत्र गरुड़ जी ने प्राणिमात्र के कल्याण के लिए कहा। जिसे विभीषण ने छन्दोबद्ध किया। जो प्राणी परम भक्ति से इस स्तोत्र का पाठ करेंगे, उनकी समस्त सिद्धियाँ मानो उनके मुट्ठी में बन्द हैं, अर्थात् वे समस्त सिद्धियाँ निःसन्देह प्राप्त करते हैं ॥२१-२३॥

इस प्रकार श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दीटीका सहित हनुमद्-रहस्य में श्रीसुदर्शनसंहितोक्त विभीषणरचित हनुमत्स्तोत्र समाप्त ।

—०—

हनुमत्सहस्रनामस्तोत्रम्

ऋषय ऊचुः

ऋषे लोहगिरिं प्राप्तः सीता-विरह-कातरः ।
भगवन् किं विधाद्-रामस्तत्सर्वं ब्रूहि सत्वरम् ॥ १ ॥

वाल्मीकिरुवाच

मायामानुषदेहोऽयं ददर्शाऽग्रे कपीश्वरम् ।
हनुमन्तं जगत्स्वामी बालाऽर्कसमतेजसम् ॥ २ ॥
स सत्वरं समागम्य साष्टाङ्गं प्रणिपत्य च ।
कृताञ्जलिपुटो भूत्वा हनुमान् राममब्रवीत् ॥ ३ ॥

हनुमानुवाच

धन्योऽस्मि कृतकृत्योऽस्मि दृष्ट्वा तत्पादपङ्कजम् ।
योगिनामप्यगम्यं च संसारभयनाशनम् ॥ ४ ॥

ऋषियों ने वाल्मीकि से कहा—हे भगवन् ! सीता के विरहसे दुःखी भगवान् राम किस प्रकार लोहगिरि (ऋष्यमूक पर्वत) पर पधारे। इस समस्त वृत्तान्त का वर्णन करने की कृपा करें ॥१॥

वाल्मीकिने कहा—उदयकालीन सूर्य के समान तेजस्वी, त्रिलोक-स्वामी, कपीश्वर हनुमान् के समक्ष परात्पर परब्रह्म परमेश्वर मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् राम ने अपनी मायारूप विग्रह (स्वरूप) का दर्शन कराया ॥२॥ अपने इष्टदेव के इस स्वरूप का दर्शन करते ही तत्क्षण हूक मारकर उनके चरणों में साष्टांग प्रणाम करते हुए हाथ जोड़कर भगवान् राम से हनुमान् जी ने इस प्रकार कहा ॥३॥

श्रीहनुमान् जी ने कहा—योगियों के लिए परम योगतत्त्व द्वारा भी अगम्य, संसाररूपी भय को नष्ट करने वाले, स्वाभीष्ट इन चरण-कमल को देखकर आज मैं धन्य एवं कृतकृत्य हो गया ॥४॥

पुरुषोत्तम ! देवेश ! कर्तव्यं तन्निवेद्यताम् ।

श्रीराम उवाच

जनस्थानं कपिश्रेष्ठ ! कोऽप्यागत्य विदेहजाम् ॥ ५ ॥
हतवान् विप्रसंवेशो मारीचानुगते मयि ।
गवेष्य साम्प्रतं वीर ! जानकीहरणे वर ॥ ६ ॥
त्वया गम्यो न को देशस्त्वं च ज्ञानवतां वरः ।
सप्तकोटि-महामन्त्र-मन्त्रितावयवः प्रभुः ॥ ७ ॥

ऋषय ऊचुः

को मन्त्रः किं च तद्ध्यानं तन्नो ब्रूहि यथार्थतः ।
कथासुधारसं पीत्वा न तृप्यामः परन्तप ! ॥ ८ ॥

हे देवादिदेव पुरुषोत्तम ! आप आज्ञा प्रदान कीजिए, कि मुझे अब क्या करना चाहिए ? ॥ ४½ ॥

रामने कहा—हे कपिवर ! मेरी पर्णकुटी में जब कि हम सुवर्णमय मायामृग वध के लिए उसके पीछे जाने पर ब्राह्मण-स्वरूप धारण कर न जाने कोई व्यक्ति उस कुटी में आकर विदेह राजपुत्री सीता का अपहरण कर लिया । अतः हे वीर ! जानकी के अपहरण करने वाले, उस मनुष्य का अति शीघ्र (इसी समय) खोज करो । कारण कि आप ज्ञानियों में श्रेष्ठ एवं सप्तकोटि (सात करोड़) महामन्त्रसे अभिमन्त्रित शरीर वाले, समर्थ पुरुष हैं । इसलिए आपके लिए कोई भी देश अगम्य नहीं है ॥५-७॥

ऋषियों ने कहा कि, हे परम तपस्वी ! वह मन्त्र तथा ध्यान कौन-सा है, इसका वास्तविक रूप से निरूपण करने की आप कृपा करें । कारण कि इस कथारूपी अमृतरस का पान कर अभी तक हम लोग अतृप्त ही रहे ॥८॥

वाल्मीकिरुवाच

मन्त्रं हनुमतो विद्धि भुक्ति-मुक्ति-प्रदायकम् ।
महारिष्ट-महापाप-महादुःख-निवारणम् ॥ ९ ॥

मन्त्रः—ॐ ऐं ह्रीं[1] हनुमते रामदूताय लङ्काविध्वंसनायाऽञ्जनीगर्भसम्भूताय शाकिनी-डाकिनी-ध्वंसनाय किलि-किलि बुबुकारेण विभीषणाय हनुमद्देवाय। ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां फट् स्वाहा।

अन्यं हनुमतो मन्त्रं सहस्रनामसंज्ञितम् ।
जानन्ति ऋषयः सर्वे महादुरितनाशनम् ॥ १० ॥
यस्य संस्मरणात् सीता लब्धा राज्यमकण्टकम् ।
विभीषणाय च ददावात्मानं लब्धवान् मया ॥ ११ ॥

ऋषय ऊचुः

सहस्रनाम-सन्मन्त्रं दुःखाद्योघ-निवारणम् ।
वाल्मीके ! ब्रूहि नस्तूर्णं शुश्रूषामः कथां पराम् ॥ १२ ॥

वाल्मीकि ने कहा—भुक्ति-मुक्तिप्रदायक एवं महारिष्ट, महापाप, महादुःखों को नष्ट करने वाला 'ॐ ऐं ह्रीं हनुमते रामदूताय' से लेकर 'फट् स्वाहा' तक यह हनुमन्मन्त्र है॥९॥ इसी प्रकार अन्य सहस्रनाम वाले समस्त पाप एवं आधि-व्याधि-विनाशक हनुमान्जी के मन्त्र को तो समस्त ऋषिगण जानते ही हैं॥१०॥ जिस मन्त्र के स्मरण मात्र से ही मैंने अपहृत सीता प्राप्त की, और विभीषण को अकण्टक राज्य प्रदान किया ॥११॥

ऋषियों ने कहा - हे वाल्मीकि मुनि ! आधि-व्याधि एवं समस्त दुःखों को नष्ट करने वाले इस सहस्रनाम मन्त्र को बताने की कृपा प्रदान करें, क्योंकि इस परम उत्कृष्ट कथा श्रवण करने की आपके श्रीमुख द्वारा इच्छा करते हैं ॥१२॥

---

1. अत्र 'श्रीं' इति क्वाचित्कोऽधिकः पाठः ।

वाल्मीकिरुवाच

शृण्वन्तु ऋषयः सर्वे सहस्रनामकं स्तवम् ।
स्तवानामुत्तमं दिव्यं सदर्थस्य प्रदायकम् ॥१३॥

विनियोगः—ॐ अस्य श्रीहनुमत्सहस्रनाम-स्तोत्र-मन्त्रस्य श्रीरामचन्द्रऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, श्रीहनुमान् महारुद्रो देवता, ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां बीजम्, श्रीं इति शक्तिः, किलि-किलि बुबु-कारेणेति कीलकम्, लङ्काविध्वंसनेति कवचम्, मम सर्वोपद्रव-प्राप्त्यर्थे सर्वकामसिद्ध्यर्थे च जपे विनियोगः ।

न्यासः—ऋष्यादिकं विन्यस्य । ॐ ऐं हनुमते रामदूताय अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ लङ्काविध्वंसनाय तर्जनीभ्यां स्वाहा । ॐ अञ्जनीगर्भसम्भूताय मध्यमाभ्यां वषट् । ॐ शाकिनी-डाकिनी-विध्वंसनाय अनामिकाभ्यां हुम् । ॐ किलि-किलि बुबुकारेण विभीषणाय हनुमद्देवाय कनिष्ठिकाभ्यां वौषट् । ॐ ह्रीं श्रीं ह्रौं ह्रां फट् स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां फट् । एवं हृदयादि ।

वाल्मीकि ने कहा—हे ऋषिगण ! समस्त स्तोत्रों में उत्तम दिव्य स्तोत्र तथा अपने अभीष्ट मनोरथ को पूर्ण करने वाले इस सहस्रनाम-स्तोत्रका आप लोग श्रवण करें ॥१३॥

विनियोग—दाहिने हाथमें जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीहनुमत्सहस्र-नामस्तोत्रमन्त्रस्य' से आरम्भ कर 'जपे विनियोगः' तक वाक्य पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे ।

न्यास—तत्पश्चात् ऋष्यादिन्यासकर 'ॐ ऐं हनुमते रामदूताय' से लेकर 'फट् स्वाहा' तक पढ़कर करादि एवं हृदयादि षडंग-न्यास करे ।

ध्यानम्

प्रतप्तस्वर्ण-वर्णाभं संरक्तारुणलोचनम् ।
सुग्रीवादियुतं ध्यायेत् पीताम्बरसमावृतम् ॥
गोष्पदीकृतवारीशं पुच्छमस्तकमीश्वरम् ।
ज्ञानमुद्रां च बिभ्राणं सर्वालङ्कारभूषितम् ॥१४॥
इति ध्यायेत् ।

श्रीरामचन्द्र उवाच

हनुमान् श्रीपदो वायुपुत्रो रुद्रोऽनघोऽजरः ।
अमृत्युर्वीरवीरश्च ग्रामवासो जनाश्रयः ॥१५॥
धनदो निर्गुणः कायो वीरो निधिपतिर्मुनिः ।
पिङ्गाक्षो वरदो वाग्मी सीताशोकविनाशनः ॥१६॥
शिवः सर्वः परोऽव्यक्तो व्यक्ताऽव्यक्तो रसाधरः ।
पिङ्गरोमः पिङ्गकेशः श्रुतिगम्यः सनातनः ॥१७॥
अनादिर्भगवान् देवो विश्वहेतुर्निरामयः ।
आरोग्यकर्ता विश्वेशो विश्वनाथो हरीश्वरः ॥१८॥

पश्चात् 'प्रतप्तस्वर्णवर्णाभं' से लेकर 'सर्वालङ्कारभूषितम्' पर्यन्त श्लोक पढ़कर हनुमान् जी का ध्यान करे। श्लोकार्थ तपे हुए सुवर्ण के समान देदीप्यमान, रक्त नेत्र वाले, पीताम्बरधारी, समुद्र का उल्लंघन करने वाले, मस्तक पर पुच्छ (पोंछ) लपेटे हुए, ज्ञानमुद्रा से सुशोभित एवं समस्त अलंकारों से अलंकृत तथा सुग्रीवादि समस्त वानरगणों से घिरे हुए, सर्व-समर्थ श्रीहनुमान्‌जी का ध्यान करे ॥१४॥

अब इसके बाद 'श्रीरामचन्द्र उवाच–हनुमान् श्रीपदो' श्लोक (१५)

भर्गो रामो रामभक्तः कल्याणप्रकृतिः स्थिरः ।
विश्वम्भरो विश्वमूर्तिर्विश्वाकारोऽथ विश्वदः ॥ १९ ॥
विश्वात्मा विश्वसेव्योऽथ विश्वो विश्वहरो रविः ।
विश्वचेष्टो विश्वगम्यो विश्वध्येयः कलाधरः ॥ २० ॥
प्लवङ्गमः कपिश्रेष्ठो ज्येष्ठो विद्यावनेचरः ।
बालो वृद्धो युवा तत्त्वं तत्त्वगम्यः सखा ह्यजः ॥ २१ ॥
अञ्जनी-सूनुरव्यग्रो ग्रामख्यातो धराधरः ।
भूर्भुवः स्वर्महर्लोके जनलोकस्तपोऽव्ययः ॥ २२ ॥
सत्यमोङ्कारगम्यश्च प्रणवो व्यापकोऽमलः ।
शिवधर्मप्रतिष्ठाता रामेष्टः फाल्गुनप्रियः ॥ २३ ॥
गोष्पदीकृत-वारीशः पूर्णकामो धरापतिः ।
रक्षोघ्नः पुण्डरीकाक्षः शरणागत-वत्सलः ॥ २४ ॥
जानकीप्राणदाता च रक्षःप्राणापहारकः ।
पूर्णः सत्यः पीतवासा दिवाकर-समप्रभः ॥ २५ ॥
देवोद्यान-विहारी च देवताभयभञ्जनः ।
भक्तोदयो भक्तलब्धो भक्तपालनतत्परः ॥ २६ ॥
द्रोणहर्ता शक्तिनेता शक्तिराक्षसमारकः ।
रक्षोघ्नो रामदूतश्च शाकिनीजीवहारकः ॥ २७ ॥
बुबुकार-हताराति-गर्वपर्वत-मर्दनः ।
हेतुस्त्वहेतुः प्रांशुश्च विश्वभर्ता जगद्गुरुः ॥ २८ ॥

से लेकर 'श्रितरुद्रश्च कामधुक् ॥ १३८½ ॥श्लोक' पर्यन्त हनुमत्सहस्रनाम का पाठ करे । विशेष-ग्रन्थ विस्तार के कारण इस सहस्रनाम-स्तोत्र का हिन्दी-अर्थ नहीं लिखा गया है ।

जगन्नेता जगन्नाथो जगदीशो जनेश्वरः ।
जगद्धितो हरिः श्रीशो गरुडस्मयभञ्जनः ॥ २९ ॥
पार्थध्वजो वायुपुत्रोऽमितपुच्छोऽमितप्रभः ।
ब्रह्मपुच्छः परंब्रह्म-पुच्छो रामेष्ट एव च ॥ ३० ॥
सुग्रीवादियुतो ज्ञानी वानरो वानरेश्वरः ।
कल्पस्थायी चिरञ्जीवी प्रसन्नश्च सदाशिवः ॥ ३१ ॥
सन्नतः सद्गतिर्भुक्ति-मुक्तिदः कीर्तिनायकः ।
कीर्तिः कीर्तिप्रदश्चैव समुद्रः श्रीपदः शिवः ॥ ३२ ॥
भक्तोदयो भक्तगम्यो भक्तभाग्यप्रदायकः ।
उदधिक्रमणो देवः संसारभयनाशकः ॥ ३३ ॥
वालि-बन्धनकृद्-विश्वजेता विश्वप्रतिष्ठितः ।
लङ्कारिः कालपुरुषो लङ्केश-गृह-भञ्जनः ॥ ३४ ॥
भूतवासो वासुदेवो वसुस्त्रिभुवनेश्वरः ।
श्रीरामरूपः कृष्णस्तु लङ्काप्रासादभञ्जकः ॥ ३५ ॥
कृष्णः कृष्णस्तुतः शान्तः शान्तिदो विश्वपावनः ।
विश्वभोक्ताऽथ मारघ्नो ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः ॥ ३६ ॥
ऊर्ध्वगो लाङ्गली माली लाङ्गुलाहतराक्षसः ।
समीरतनुजो वीरो वीरमारो जयप्रदः ॥
जगन्मङ्गलदः पुण्यः पुण्यश्रवणकीर्तनः ॥ ३७ ॥
पुण्यकीर्तिः पुण्यगतिः जगत्पावनपावनः
देवेशो [१]जितमारोऽथ रामभक्तिविधायकः ॥ ३८ ॥

१. 'ऽजितमारोऽथ' इति पाठान्तरम् ।

ध्याता ध्येयो भगः साक्षी चेता चैतन्यविग्रहः ।
ज्ञानदः प्राणदः प्राणो जगत्प्राणसमीरणः ॥ ३९ ॥
विभीषणप्रियः शूरः पिप्पलायनसिद्धिदः ।
सिद्धिः सिद्धाश्रयः कालः कालभक्षकभञ्जनः ॥ ४० ॥
लङ्केशनिधनस्थायी लङ्कादाहक ईश्वरः ।
चन्द्र-सूर्या-ऽग्नि-नेत्रश्च कालाग्निः प्रलयान्तकः ॥ ४१ ॥
कपिलः कपिशः पुण्य-राशिर्द्वादश-राशिगः ।
सर्वाश्रयोऽप्रमेयात्मा रेवत्यादिनिवारकः ॥ ४२ ॥
लक्ष्मणप्राणदाता च सीताजीवनहेतुकः ।
रामध्येयो हृषीकेशो विष्णुभक्तो जटी बलिः ॥ ४३ ॥
देवारिदर्पहा होता धाता कर्त्ता जगत्प्रभुः ।
नगरग्रामपालश्च शुद्धो बुद्धो निरन्तरः ॥ ४४ ॥
निरञ्जनो निर्विकल्पो गुणातीतो भयङ्करः ॥ ४५ ॥
जानकीघन-शोकोत्थ-तापहर्ता परात्परः ।
वाङ्मयः सदसद्रूपकारणं प्रकृतेःपरः ॥ ४६ ॥
भाग्यदो निर्मलो नेता पुच्छ-लङ्का-विदाहकः ।
पुच्छबद्ध-यातुधानो यातुधानरिपुप्रियः ॥ ४७ ॥
छायापहारी भूतेशो लोकेशः सद्गतिप्रदः ।
प्लवङ्गमेश्वरः क्रोधः क्रोधसंरक्तलोचनः ॥ ४८ ॥
सौम्यो गुरुः काव्यकर्ता भक्तानां च वरप्रदः ।
भक्तानुकम्पी विश्वेशः पुरुहूतः पुरन्दरः ॥ ४९ ॥
क्रोधहर्ता तापहर्ता भक्तानामभयप्रदः ।
अग्निर्विभावसुर्भानुर्यमो निर्ऋतिरेव च ॥ ५० ॥

वरुणो वायुगतिमान् वायुः कुबेर ईश्वरः ।
रविश्चन्द्रः कुजः सौम्यो गुरुः काव्यः शनैश्चरः ॥ ५१ ॥
राहुः केतुर्मरुद्दाता[1] धर्ता हर्ता समीरजः ।
मशकीकृत-देवारि-दैत्यारि-र्मधुसूदनः ॥ ५२ ॥
कामः कपिः कामपालः कपिलो विश्वजीवनः ।
भागीरथीपदाम्भोजः सेतुबन्धविशारदः ॥ ५३ ॥
स्वाहा स्वधा हविः कव्य-हव्यवाह-प्रकाशकः ।
स्वप्रकाशो महावीरो लघुरमितविक्रमः ॥ ५४ ॥
भञ्जनो दानगतिमान् सद्गतिः पुरुषोत्तमः ।
जगदात्मा जगद्-योनिर्जगदन्तो ह्यनन्तकः ॥ ५५ ॥
विपाप्मा निष्कलङ्कोऽथ महात्मा हृदहङ्कृतिः ।
खं वायुः पृथ्वीरापो वह्निर्दिक्पाल एव च ॥ ५६ ॥
क्षेत्रज्ञः क्षेत्रहर्ता च पल्वलीकृतसागरः ।
हिरण्मयः पुराणश्च खेचरो भूचरो मनुः ॥ ५७ ॥
हिरण्यगर्भः सूत्रात्मा राजराजो विशाम्पतिः ।
वेदान्तवेद्य उद्गीथो वेद-वेदाङ्ग-पारगः ॥ ५८ ॥
प्रतिग्रामस्थितिः सद्यः स्फूर्तिदाता गुणाकरः ।
नक्षत्रमाली भूतात्मा सुरभिः कल्पपादपः ॥ ५९ ॥
चिन्तामणिर्गुणनिधिः प्रजाधारो ह्यनुत्तमः ।
पुण्यश्लोकः पुरारातिर्ज्योतिष्मान् शर्करीपतिः ॥ ६० ॥

---

१. 'मरुद्धोता ध्याता' इत्यपि क्वचित्पाठः २. 'महन्महदहङ्कृतिः' इति ।
३. 'सुखदः' इति ।

किलि-किलाराव-सन्त्रस्त-भूत-प्रेत-पिशाचकः ।
ऋणत्रयहरः सूक्ष्मः स्थूलः सर्वगतिः पुमान् ॥ ६१ ॥
अपस्मारहरः स्मर्ता श्रुतिर्गाथा स्मृतिर्मनुः ।
स्वर्गद्वार-प्रजाद्वार- मोक्षद्वारपतीश्वरः ॥ ६२ ॥
नादरूपः परंब्रह्म ब्रह्म ब्रह्मपुरातनः ।
एकोऽनेको जनः शुक्लः स्वयंज्योतिरनाकुलः ॥ ६३ ॥
ज्योतिर्ज्योतिरनादिश्च सात्त्विको राजसस्तमः ।
तमोहर्ता निरालम्बो निराहारो गुणाकरः ॥ ६४ ॥
गुणाश्रयो गुणमयो बृहत्कर्मा बृहद्यशाः ।
बृहद्धनुर्बृहत्पादो बृहन्मूर्धा बृहत्स्वनः ॥ ६५ ॥
बृहत्कायो बृहन्नासो बृहद्बाहुर्बृहत्तनुः ।
बृहद्यत्नो बृहत्कामो बृहत्पुच्छो बृहत्करः ॥ ६६ ॥
बृहद्गतिर्बृहत्सेव्यो बृहल्लोकफलप्रदः[1] ।
बृहच्छक्ति-बृहद्वाञ्छाफलदो बृहदीश्वरः ॥ ६७ ॥
बृहल्लोकनुतो द्रष्टा विद्यादाता जगद्गुरुः ।
देवाचार्यः सत्यवादी ब्रह्मवादी कलाधरः ॥ ६८ ॥
सप्तपातालगामी च मलयाचलसंश्रयः ।
उत्तराशास्थितः श्रीदो दिव्यौषधिवशः खगः ॥ ६९ ॥
शाखामृगः कपीन्द्रोऽथ पुराणः प्राणचञ्चुरः ।
चतुरो ब्राह्मणो योगी योगगम्यः परावरः ॥ ७० ॥

१. 'गतिप्रदः' इति ।

अनादिनिधिदो व्यासो वैकुण्ठः पृथिवीपतिः ।
अपराजितो जितारातिः सदानन्दो गिरीशजः ॥ ७१ ॥
गोपालो गोपतिर्योद्धा कलिकालः परात्परः ।
मनोवेगी सदायोगी संसार-भयनाशनः ॥ ७२ ॥
तत्त्वदाताऽथ तत्त्वज्ञस्तत्त्वं तत्त्वप्रकाशकः ।
शुद्धो बुद्धो नित्ययुक्तो भक्तराजो जगद्रथः ॥ ७३ ॥
प्रलयोऽमितमायश्च मायातीतो विमत्सरः ।
मायाभर्जितरक्षाश्च मायानिर्मितविष्टपः ॥ ७४ ॥
मायाश्रयश्च निर्लेपो मायानिर्वर्तकः सुखम् ।
सुखी सुखप्रदो नागो महेशकृतसंस्तवः ॥ ७५ ॥
महेश्वरः सत्यसन्धः शरभः कलिपावनः ।
रसो रसज्ञः सन्मानो रूपं चक्षुः स्तुतिः खगः ॥ ७६ ॥
घ्राणो गन्धः स्पर्शनं च स्पर्शोऽहङ्कारमानगः ।
नेति-नेतीतिगम्यश्च वैकुण्ठभजनप्रियः ॥ ७७ ॥
गिरीशो गिरिजाकान्तो दुर्वासाः कविरङ्गिराः ।
भृगु-र्वसिष्ठश्च्यवनो नारदस्तुम्बरो बलः ॥ ७८ ॥
विश्वक्षेत्रं विश्वबीजं विश्वनेत्रं च विश्वपः ।
याजको यजमानश्च पावकः पितरस्तथा ॥ ७९ ॥
श्रद्धा बुद्धिः क्षमा तन्त्रो मन्त्री मन्त्रपिता सुरः ।
राजेन्द्रो भूपती रुण्डमाली संसारसारथिः ॥ ८० ॥
नित्यः सम्पूर्णकामश्च भक्तकामधुगुत्तमः ।
गणपः केशवो भ्राता पितामाताऽथ मारुतिः ॥ ८१ ॥

सहस्रमूर्द्धा सहस्रास्यः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
कामजित् कामदहनः कामी कामफलप्रदः ॥ ८२ ॥
मुद्रापहारि रक्षोघ्नः क्षितिभारहरो बलः ।
नखदंष्ट्रायुधो विष्णुर्भक्ताभयवरप्रदः ॥ ८३ ॥
दर्पहा दर्पहो द्रष्टा शतमूर्तिरमूर्तिमान् ।
महानिधिर्महाभागो महाभर्गो महर्द्धिदः ॥ ८४ ॥
महाकारो महायोगी महातेजा महाद्युतिः ।
महाकर्मो महानादो महामन्त्रो महामतिः ॥ ८५ ॥
[1]महागमो महोदारो महादेवात्मको विभुः ।
रुद्रकर्मा [2]क्रूरकर्मा रत्ननाभः कृतागमः ॥ ८६ ॥
अम्भोधिलङ्घनः सिंहः सत्यधर्मा प्रमोदनः ।
जितामित्रो जयः सोमो विजयो वायुवाहनः ॥ ८७ ॥
जीवो धाता सहस्रांशुर्मुकुन्दो भूरिदक्षिणः ।
सिद्धार्थः सिद्धिदः सिद्ध-सङ्कल्पः सिद्धिहेतुकः ॥ ८८ ॥
सप्तपातालचरणः सप्तर्षिगणवन्दितः ।
सप्ताब्धिलङ्घनो वीरः सप्तद्वीपोरुमण्डलः ॥ ८९ ॥
सप्ताङ्गराज्यसुखदः सप्तमातृनिषेवितः ।
सप्तस्वर्लोकमुकुटः सप्तहोतृस्वराश्रयः ॥ ९० ॥
सप्तच्छन्दोनिधिः सप्तच्छन्दः सप्तजनाश्रयः ।
सप्तसामोपगीतश्च सप्तपातालसंश्रयः ॥ ९१ ॥

---

१. 'महाशय' इति पाठान्तरम् । २. 'कृतकर्मा' इति ।

मेधादः कीर्तिदः शोकहारी दौर्भाग्यनाशनः ।
सर्ववश्यकरो गर्भदोषहा पुत्र-पौत्रदः ॥ ९२ ॥
प्रतिवादिमुखस्तम्भो रुष्टचित्तप्रसादनः ।
पराभिचारशमनो दुःखहा बन्धमोक्षदः ॥ ९३ ॥
नवद्वारपुराधारो नवद्वारनिकेतनः ।
नवनारायणस्तुत्यो नवनाथमहेश्वरः ॥ ९४ ॥
मेखली कवची खड्गी भ्राजिष्णुर्विष्णुसारथिः ।
बहुयोजन-विस्तीर्ण-पुच्छदुष्ट-हतासुरः ॥ ९५ ॥
दुष्टग्रहनिहन्ता च पिशाचग्रहघातकः ।
बालग्रह-विनाशी च धर्मनेता कृपाकरः ॥ ९६ ॥
उग्रकृत्य उग्रवेग उग्रनेत्रः शतक्रतुः ।
शतमन्युस्तुतः स्तुत्यः स्तुतिः स्तोता महाबलः ॥ ९७ ॥
समग्रगुणशाली च व्यग्रो रक्षोविनाशनः ।
रक्षोऽग्निदाहो ब्रह्मेशः श्रीधरो भक्तवत्सलः ॥ ९८ ॥
मेघनादो मेघरूपो मेघवृष्टि-निवारकः ।
मेघजीवनहेतुश्च मेघश्यामः परात्मकः ॥ ९९ ॥
समीरतनयो योद्धा तत्त्वविद्याविशारदः ।
अमोघोऽमोघदृष्टिश्च दिष्टदोऽरिष्टनाशनः ॥१००॥
अर्थोऽनर्थापहारी च समर्थो रामसेवकः ।
अर्थी धन्यो सुरारातिः पुण्डरीकाक्ष आत्मभूः ॥१०१॥
सङ्कर्षणो विशुद्धात्मा [1]विद्याराशिः सुरेश्वरः ।

---

१ 'विद्यादाता' इति पाठान्तरम् ।

अचलोद्धारको नित्यः सेतुकृद्-रामसारथिः ॥१०२॥
आनन्दः परमानन्दो मत्स्यः कूर्मो निधीश्वरः ।
वाराहो नारसिंहश्च वामनो जमदग्निजः ॥१०३॥
रामः कृष्णः शिवो बुद्धः कल्की [1]रामश्च मोहनः ।
भृङ्गी नन्दी च चण्डी च गणेशो गणसेवितः ॥१०४॥
कर्माध्यक्षः सुरारामो विश्रामो जगतीपतिः ।
जगन्नाथः कपीशश्च सर्वावासः सदाश्रयः ॥१०५॥
सुग्रीवादिस्तुतो दान्तः सर्वकर्मप्लवङ्गमः ।
नखदारित-रक्षाश्च नखयुद्ध-विशारदः ॥१०६॥
कुशलः सधनः शेषो वासुकिस्तक्षकस्तथा ।
स्वर्णवर्णो बलाढ्यश्च पुरजेता वनाशनः ॥१०७॥
कैवल्यदीपः कैवल्यो गरुडः पन्नगो गुरुः ।
किल-क्लीराव-हताराति-गर्वपर्वत-भेदनः ॥१०८॥
वज्राङ्गो वज्रवज्रश्च भक्तवज्र-निवारकः ।
नखायुधो मणिग्रीवो ज्वालामाली च भास्करः ॥१०९॥
प्रौढप्रतापस्तपनो भक्ततापनिवारकः ।
शरणं जीवनं भोक्ता नानाचेष्टोऽथ चञ्चलः ॥११०॥
स्वस्थः स्वस्थस्थहा दुःखशातनः पवनात्मजः ।
पावनः पवनः कान्तो भक्तागःसहनो बली ॥१११॥
मेघनादरिपु-र्मेघनाद-संहृतराक्षसः ।
क्षरोऽक्षरो विनीतात्मा वानरेशः सताङ्गतिः ॥११२॥

---

१. 'रामाश्रयो हरः' इति ।

श्रीकण्ठः शितकण्ठश्च सहायो सहनायकः ।
अस्थूलस्त्वनणुर्भर्गो दिव्यः संसृतिनाशनः ॥११३॥
अध्यात्मविद्यासारश्च अध्यात्मकुशलः सुधीः ।
अकल्मषः सत्यहेतुः सत्यदः सत्यगोचरः ॥११४॥
सत्यगर्भः सत्यरूपः सत्यः सत्यपराक्रमः ।
अञ्जनीप्राणलिङ्गश्च वायुवंशोद्वह.[1] सृतिः ॥११५॥
भद्ररूपो रुद्ररूपः सुरूपश्चित्ररूपधृक् ।
मैनाकवन्दितः सूक्ष्मदर्शनो विजयोऽजयः ॥११६॥
क्रान्तदिङ्मण्डलो रुद्रः प्रकटीकृतविक्रमः ।
कम्बुकण्ठः प्रसन्नात्मा दुःखनाशो वृकोदरः ॥११७॥
लम्बोष्ठः कुण्डली चित्रमाली योगविदां वरः ।
विपश्चित् कविरानन्द-विग्रहोऽनल्प-शासनः ॥११८॥
फाल्गुनीसूनुरव्यग्रो योगात्मा योगतत्परः ।
योगवियोगकर्ता च योगयोनिर्दिगम्बरः ॥११९॥
अकारादि-हकारान्त-वर्णनिर्मित-विग्रहः ।
उलूखलमुखः सिद्धसंस्तुतः प्रमथेश्वरः ॥१२०॥
श्लिष्टजङ्घः श्लिष्टजानुः श्लिष्टपाणिः शिखाधरः ।
सुशर्माऽमितशर्मा च नारायण-परायणः ॥१२१॥
जिष्णुर्भविष्णू रोचिष्णुर्ग्रसिष्णुः [2]स्थास्नुरेव च ।
हरि-रुद्राऽनुकृद्वक्ष-कम्पनो भूमिकम्पनः ॥१२२॥

---

१. 'वायुरशोद्भवः' इति क्वचित्पाठः ।
२. 'स्थाणुः' इत्यपि पाठः ।

गुणप्रवाहः सूत्रात्मा वीतरागः स्तुतिप्रियः ।
नागकन्या-भयध्वंसी ऋतुपर्णः कपालभृत् ॥१२३॥
अनाकुलो भगोऽपापो [1]भगवान् वेदपारगः ।
अक्षरः पुरुषो लोकनाथो ऋक्षप्रभुर्दृढः ॥१२४॥
अष्टाङ्गयोग-फलभूः सत्यसन्धः पुरुष्टुतः ।
श्मशानस्थान-निलयः प्रेतविद्रावणक्षमः ॥१२५॥
पञ्चाक्षरपरः पञ्चमातृको रञ्जनध्वजः ।
योगिनीवृन्द-वन्द्यश्रीः शत्रुघ्नोऽनन्तविक्रमः ॥१२६॥
ब्रह्मचारी-न्द्रियरिपु-धृतदण्डो दशात्मकः ।
अप्रपञ्चः सदाकारः [2]शूरसेनाविदारकः ॥१२७॥
वृद्धः प्रमोद आनन्दः सप्तजिह्वापतिर्धरः ।
नरद्वारपुराधारः [3]प्रत्यग्रः सामगायकः ॥१२८॥
षट्चक्रधाम स्वर्लोक-भयहृन्मानदो मदः ।
सर्ववश्यकरः शक्तिरनन्तोऽनन्तमङ्गलः ॥१२९॥
अष्टमूर्तिर्नयोपेतो विरूपः सुरसुन्दरः ।
धूम्रकेतुर्महाकेतुः सत्यकेतुर्महीधरः[4] ॥१३०॥
नन्दिप्रियः स्वतन्त्रश्च मेखली डमरुप्रियः ।
लोहाङ्गः सर्वविद्धन्वी [5]षण्डलः सर्व ईश्वरः ॥१३१॥
फलभुक् फलहस्तश्च सर्वकर्मफलप्रदः ।
धर्माध्यक्षो धर्मफलो धर्मो धर्मप्रदोऽर्थदः ॥१३२॥

---

१. 'अनपायो वेदपारगः' इति । २. 'दैत्यसेनाविदारकः' इति ।
३. 'प्रत्ययः' इति । ४. 'महेरिथः' इति । ५. 'अखिलः' इति ।

पञ्चविंशति-तत्त्वज्ञस्तारको ब्रह्मतत्परः ।
त्रिमार्गवसतिर्भीमः सर्वदुष्टनिबर्हणः ॥१३३॥
ऊर्जस्वान्निष्कलः शूली मौलिर्गर्जो निशाचरः ।
रक्ताम्बरधरो रक्तो रक्तमाला-विभूषणः ॥१३४॥
वनमाली शुभाङ्गश्च श्वेतः श्वेताम्बरो युवा ।
जयोऽजयः परीवारः सहस्रवदनः कपिः ॥१३५॥
शाकिनी-डाकिनी-यक्ष-रक्षो-भूतप्रभञ्जकः ।
सद्योजातः कामगति-र्ज्ञानमूर्ति-र्यशस्करः ॥१३६॥
शम्भुतेजाः सार्वभौमो विष्णुभक्तः प्लवङ्गमः ।
चतुर्नवति-मन्त्रज्ञः पौलस्त्य-बलदर्पहा ॥१३७॥
सर्वलक्ष्मीप्रदः श्रीमानङ्गद-प्रियदर्पनुत् ।
स्मृतिबीजं सुरेशानः संसारभयनाशनः ॥१३८॥
उत्तमः श्रीपरीवारः श्रितरुद्रश्च कामधुक् ।

वाल्मीकिरुवाच

इति नाम्नां सहस्रेण स्तुतो रामेण वायुभूः ॥१३९॥
उवाच तं प्रसन्नात्मा सन्ध्यायाऽऽत्मानमव्ययम् ।

हनुमान् उवाच

ध्यानास्पदमिदं ब्रह्म मत्पुरः समुपस्थितम् ॥१४०॥

फलश्रुति

वाल्मीकि ने कहा—इस प्रकार सहस्रनाम से राम ने हनुमान्‌जी की स्तुति की ॥ १–९ ॥

तत्पश्चात् परात्पर परब्रह्म परमेश्वर मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रजी का प्रसन्न चित्त हो अपने हृदय में ध्यान कर हनुमान्‌जी

स्वामिन् ! कृपानिधे ! राम ! ज्ञातोऽसि कपिना मया।
त्वद्ध्याननिरता लोकाः किं मां जपसि सादरम् ॥१४१॥
तवागमनहेतुश्च ज्ञातो ह्यत्र मयाऽनघ ! ।
कर्त्तव्यं मम ! किं राम ! तथा ब्रूहि च राघव ! ॥१४२॥
इति प्रचोदितो रामः प्रहृष्टात्मेदमब्रवीत् ।

श्रीराम उवाच

दुर्जयः खलु वैदेहीं गृहीत्वा कोऽपि निर्गतः ॥१४३॥
हत्वा तं निघृणं वीर ! आनयस्व कपीश्वर ! ।
मम दास्यं कुरु सखे ! भव विश्वसुखङ्करः ॥१४४॥
तथा कृते त्वया वीर ! मम कार्यं भविष्यति ।
ओमित्याज्ञां तु शिरसा गृहीत्वा स कपीश्वरः ॥१४५॥

ने इस प्रकार कहा — एक मात्र ध्यानैकगम्य पर ब्रह्मस्वरूप आप मेरे सम्मुख उपस्थित हुए हैं। हे स्वामिन् ! कृपासागर! राम! मैं तुच्छबुद्धि वानरस्वरूप वाला होते हुए भी मैंने आपको पहचान लिया। समस्त चराचर मात्र तो आपके ही ध्यान में निरन्तर रत रहते हैं और आप बड़े ही श्रद्धापूर्वक मेरी स्तुति करते हैं ॥१२९½–१४१॥

त्रिविधतापपाप रहित राघव! इस स्थान पर आपके आने का कारण मैं भलीभाँति समझ गया हूँ। अतः हे राम ! मुझे आप निःसंकोच आज्ञा प्रदान कीजिए कि मैं आपके लिए अब क्या करूँ ॥१४२॥ इस प्रकार हनुमान् जी के कहने पर प्रसन्न-चित्त हो, मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान् राम ने हनुमान्‌जी से इस प्रकार कहा कि न जाने किस वीर व्यक्ति ने जानकी का अपहरण किया। अतः हे कपीश्वर ! परमवीर ! मैं यही आज्ञा प्रदान करता हूँ कि उस दुष्ट को मारकर शीघ्रातिशीघ्र उसे मेरे सम्मुख ले आओ, और उसे मेरे अधीन करो। तथा हे मित्र ! तुम समस्त प्राणिमात्र को सुख प्रदान करो। हे वीर, आपके इस प्रकार कार्य करने पर मेरा

विधेयं विधिवत्तत्र चकार स शिवः स्वयम् ।
इदं नाम्नां सहस्रं तु योऽधीते प्रत्यहं नरः ॥१४६॥
दुःखौघो नश्यते तस्य सम्पत्तिर्वर्धते चिरम् ।
वश्यं चतुर्विधं तस्य भवत्येव न संशयः ।१४७॥
राजानो राजपुत्राश्च राजकार्याश्च मन्त्रिणः ।
त्रिकालपठनादस्य दृश्यान्ते च त्रिपक्षतः ॥१४८॥
अश्वत्थमूले जपतां नास्ति वैरिकृतं भयम् ।
त्रिकालपठनात्तस्य सिद्धिः स्यात् करसंस्थिता ॥१४९॥
ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय प्रत्यहं यः पठेन्नरः ।
ऐहिका-ऽऽमुष्मिकं सोऽपि लभते नात्र संशयः ॥१५०॥

समस्त अभीष्ट कार्य सिद्ध होगा । तत्पश्चात् कपीश्वर हनुमान् ने अपने इष्ट देव प्रभु राम की आज्ञा को शिरोधार्य कर, रुद्रावतार श्रीहनुमान्‌जी ने भलीभाँति सीताजी की खोज की । इस सहस्रनाम-स्तोत्र का जो प्राणी प्रतिदिन पाठ करता है, उसके समस्त दुःख नष्ट होते हैं, तथा उसकी ऋद्धि-सिद्धि चिर काल तक स्थिर रहती है, और निःसन्देह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चतुर्विध पुरुषार्थ उसके अधीन रहते हैं ॥१४३-१४७॥

प्रतिदिन तीनपक्षअर्थात् डेढ़ मास तक इस 'हनुमत्सहस्रनामस्तोत्र' के त्रिकाल पाठ करने से राजा, राजपुत्र, मन्त्रीगण सभी अपने अधीन हो जाते हैं । १४८॥ पीपल के जड़ पर बैठकर इस स्तोत्र का पाठकरने से शत्रुजन्य भय नष्ट होता है । उसी प्रकार त्रिकाल पाठ करने से शत्रुजन्य भय नष्ट होता है । उसी प्रकार त्रिकाल पाठ करने से समस्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ॥१४९॥

ब्राह्ममुहूर्त में उठकर जो प्राणी प्रतिदिन इस स्तोत्र का पाठ करता है वह निःसन्देह इहलोक तथा परलोक के सुख का भागी होता है ॥१५०॥

संग्रामे सन्निविष्टानां वैरिविद्रावणं परम् ।
ज्वरा-ऽपस्मार-शमनं गुल्मादीनां निवारणम् ॥१५१॥
साम्राज्य-सुखसम्पत्तिदायकं जपतां नृणाम् ।
स्वर्गं मोक्षं समाप्नोति रामचन्द्रप्रसादतः ॥१५२॥
य इदं पठते नित्यं श्रावयेद् वा समाहितः ।
सर्वान् कामानवाप्नोति वायुपुत्रप्रसादतः ॥१५३॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-हनुमद्-रहस्ये ब्रह्माण्डपुराणे उत्तरखण्डे श्रीरामकृतं हनुमत्सहस्रनामस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

[इति हनुमत्पञ्चाङ्गं[1] समाप्तम्]

इसस्तोत्रका पाठकरने से रणस्थलमें शत्रुओंको नष्ट कर विजयप्राप्त करता है। उसी प्रकार इस स्तोत्रके पाठ करने से ज्वर, अपस्मार (मृगी एवं हिस्टीरिया तथा गुल्म आदि समस्त रोग नष्ट होते हैं। तथा साम्राज्य, सुख, सम्पत्ति आदिप्राप्त होते हैं और मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्रकी कृपा से अन्त में स्वर्ग एवं मोक्ष भी प्राप्त होता है ॥१५१-१५२॥ जो प्राणी इस स्तोत्रका नित्यपाठकरता है एवं सुनता है (अर्थात् श्रोता तथा वक्ता दोनों ही) वायुपुत्रश्रीहनुमान्‌जी की कृपा से उनके समस्त मनोरथ सिद्ध होते हैं ॥१५३॥

इस प्रकार श्रीपण्डित शिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दीव्याख्या-सहित हनुमद्-रहस्य में ब्रह्माण्डपुराण के उत्तरखण्ड में श्रीरामकृत हनुमत्सहस्रनामस्तोत्र समाप्त ।

---

१. पटलं पद्धती वर्म तथा नाम-सहस्रकम् ।
स्तोत्राणि चेति पञ्चाङ्गं देवतोपासने स्मृतम् ॥
कवचं देवतागात्रं पटलं देवताशिरः ।
पद्धतिर्देवहस्तौ तु मुखं साहस्रकं स्मृतम् ॥
स्तोत्राणि देवतापादौ पञ्चाङ्गं पञ्चभिः स्मृतम् ।

हनुमत्सहस्रनामावली

विनियोगः—अस्य श्रीहनुत्सहस्रनामस्तोत्रमन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, हनुमान् देवता, अनुष्टुप्छन्दः, रां बीजं, मं शक्तिः, श्रीहनुमत्प्रीत्यर्थं तद्दिव्य-सहस्रनामभिरमुकसंख्याकपुष्पादि-द्रव्यसमर्पणे विनियोगः।

ध्यानम्—

ध्यायेद् बालदिवाकर-द्युतिनिभं देवारिदर्पापहं
देवेन्द्रप्रमुख-प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा।
सुग्रीवादि-समस्त-वानरयुतं सुव्यक्त-तत्त्वप्रियं
संरक्तारुण-लोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम् ॥ १ ॥
उद्यदादित्य-सङ्काशमुदार-भुजविक्रमम्।
कन्दर्पकोटि-लावण्यं सर्वविद्या-विशारदम् ॥ २ ॥
श्रीरामहृदयानन्दं भक्तकल्पमहीरुहम्।
अभयं वरदं दोर्भ्यां चिन्तयेन्मारुतात्मजम् ॥ ३ ॥

ततस्तत्तन्नामभिः प्रत्येकं प्रणवादिभिः नमोऽन्तैरर्क-पुष्पादिसमर्पणं कुर्यात्। तद्यथा—

नामावली

१. ॐ हनुमते नमः
२. ॐ श्रीप्रदाय नमः
३. ॐ वायुपुत्राय नमः
४. ॐ रुद्राय नमः
५. ॐ अघनाय नमः
६. ॐ अजराय नमः
७. ॐ अमृत्यवे नमः
८. ॐ वीरपीराय नमः

९ ॐ ग्रामवासाय नमः
१० ॐ जनाश्रयाय नमः
११ ॐ धनदाय नमः
१२ ॐ निर्गुणाय नमः
१३ ॐ कायाय नमः
१४ ॐ वीराय नमः
१५ ॐ निधिपतये नमः
१६ ॐ मुनये नमः
१७ ॐ पिङ्गाक्षाय नमः
१८ ॐ वरदाय नमः
१९ ॐ वाग्मिने नमः
२० ॐ सीताशोकविनाशनाय नमः
२१ ॐ शिवाय नमः
२२ ॐ शर्वाय नमः
२३ ॐ पराय नमः
२४ ॐ अव्यक्ताय नमः
२५ ॐ व्यक्ताव्यक्ताय नमः
२६ ॐ रसाधराय नमः
२७ ॐ पिङ्गकेशाय नमः
२८ ॐ पिङ्गरोम्णे नमः
२९ ॐ श्रुतिगम्याय नमः
३० ॐ सनातनाय नमः
३१ ॐ अनादये नमः
३२ ॐ भगवते नमः
३३ ॐ देवाय नमः
३४ ॐ विश्वहेतवे नमः
३५ ॐ निराश्रयाय नमः
३६ ॐ आरोग्यकर्त्रे नमः
३७ ॐ विश्वेशाय नमः
३८ ॐ विश्वनायकाय नमः
३९ ॐ हरीश्वराय नमः
४० ॐ भर्गाय नमः
४१ ॐ रामाय नमः
४२ ॐ रामभक्ताय नमः
४३ ॐ कल्याणाय नमः
४४ ॐ प्रकृतिस्थिराय नमः
४५ ॐ विश्वम्भराय नमः
४६ ॐ विश्वमूर्तये नमः
४७ ॐ विश्वाकाराय नमः
४८ ॐ विश्वदाय नमः
४९ ॐ विश्वात्मने नमः
५० ॐ विश्वसेव्याय नमः
५१ ॐ विश्वाय नमः

५२ ॐ विश्वहराय नमः
५३ ॐ रवये नमः
५४ ॐ विश्वचेष्टाय नमः
५५ ॐ विश्वगम्याय नमः
५६ ॐ विश्वध्येयाय नमः
५७ ॐ कलाधराय नमः
५८ ॐ प्लवङ्गमाय नमः
५९ ॐ कपिश्रेष्ठाय नमः
६० ॐ ज्येष्ठाय नमः
६१ ॐ विद्याय नमः
६२ ॐ वनेचराय नमः
६३ ॐ बालाय नमः
६४ ॐ वृद्धाय नमः
६५ ॐ यूने नमः
६६ ॐ तत्त्वाय नमः
६७ ॐ तत्त्वगम्याय नमः
६८ ॐ सख्ये नमः
६९ ॐ अजाय नमः
७० ॐ अञ्जनीसूनवे नमः
७१ ॐ अव्यग्राय नमः
७२ ॐ ग्रामस्वान्ताय नमः
७३ ॐ धराधराय नमः
७४ ॐ भूर्लोकाय नमः
७५ ॐ भुवर्लोकाय नमः
७६ ॐ स्वर्लोकाय नमः
७७ ॐ महर्लोकाय नमः
७८ ॐ जनलोकाय नमः
७९ ॐ तपसे नमः
८० ॐ अव्ययाय नमः
८१ ॐ सत्याय नमः
८२ ॐ ॐकारगम्याय नमः
८३ ॐ प्रणवाय नमः
८४ ॐ व्यापकाय नमः
८५ ॐ अमलाय नमः
८६ ॐ शिवाय नमः
८७ ॐ धर्मप्रतिष्ठात्रे नमः
८८ ॐ रामेष्टाय नमः
८९ ॐ फाल्गुनप्रियाय नमः
९० ॐ गोष्पदिने नमः
९१ ॐ कृतवारीशाय नमः
९२ ॐ पूर्णकामाय नमः
९३ ॐ धराधिपाय नमः
९४ ॐ रक्षोघ्नाय नमः
९५ ॐ पुण्डरीकाक्षाय नमः

९६ ॐ शरणागतवत्सलाय नमः
९७ ॐ जानकीप्राणदात्रे नमः
९८ ॐ रक्षःप्राणापहारकाय नमः
९९ ॐ पूर्णाय नमः
१०० ॐ सत्याय नमः
१०१ ॐ पीतवाससे नमः
१०२ ॐ दिवाकरसमप्रभाय नमः
१०३ ॐ द्रोणहर्त्रे नमः
१०४ ॐ शक्तिनेत्रे नमः
१०५ ॐ शक्तये नमः
१०६ ॐ राक्षसमारकाय नमः
१०७ ॐ रक्षोघ्नाय नमः
१०८ ॐ रामदूताय नमः
१०९ ॐ शाकिनीजीविकाहराय नमः
११० ॐ बुभुकारहतारातये नमः
१११ ॐ गर्वाय नमः
११२ ॐ पर्वतच्छेदनाय नमः
११३ ॐ हेतवे नमः
११४ ॐ अहेतवे नमः
११५ ॐ प्रांशवे नमः
११६ ॐ विश्वभर्त्रे नमः
११७ ॐ जगद्गुरवे नमः
११८ ॐ जगन्नेत्रे नमः
११९ ॐ जगन्नाथाय नमः
१२० ॐ जगदीशाय नमः
१२१ ॐ जनेश्वराय नमः
१२२ ॐ जगच्छ्रिताय नमः
१२३ ॐ हरये नमः
१२४ ॐ श्रीशाय नमः
१२५ ॐ गरुडस्मयभञ्जकाय नमः
१२६ ॐ पार्थध्वजाय नमः
१२७ ॐ वायुपुत्राय नमः
१२८ ॐ अमितपुच्छाय नमः
१२९ ॐ अमितप्रभाय नमः
१३० ॐ ब्रह्मपुच्छाय नमः
१३१ ॐ परब्रह्मणे नमः
१३२ ॐ पुच्छरोमेष्टाय नमः
१३३ ॐ सुग्रीवादियुताय नमः

१३४ ॐ ज्ञानिने नमः
१३५ ॐ वानराय नमः
१३६ ॐ वानरेश्वराय नमः
१३७ ॐ कल्पस्थायिने नमः
१३८ ॐ चिरंजीविने नमः
१३९ ॐ प्रसन्नाय नमः
१४० ॐ सदाशिवाय नमः
१४१ ॐ सन्नताय नमः
१४२ ॐ सद्गतये नमः
१४३ ॐ युक्तये नमः
१४४ ॐ मुक्तिदाय नमः
१४५ ॐ कीर्तिनायकाय नमः
१४६ ॐ कीर्तये नमः
१४७ ॐ कीर्तिप्रदाय नमः
१४८ ॐ समुद्राय नमः
१४९ ॐ श्रीप्रदाय नमः
१५० ॐ शिवाय नमः
१५१ ॐ उदधिक्रमणाय नमः
१५२ ॐ देवाय नमः
१५३ ॐ संसारभयनाशनाय नमः
१५४ ॐ वालिबन्धकृते नमः
१५५ ॐ विश्वजेत्रे नमः
१५६ ॐ विश्वप्रतिष्ठिताय नमः
१५७ ॐ लङ्कारये नमः
१५८ ॐ कालपुरुषाय नमः
१५९ ॐ लङ्केशगृहभञ्जनाय नमः
१६० ॐ भूतावासाय नमः
१६१ ॐ वासुदेवाय नमः
१६२ ॐ वसवे नमः
१६३ ॐ त्रिभुवनेश्वराय नमः
१६४ ॐ श्रीरामरूपाय नमः
१६५ ॐ कृष्णाय नमः
१६६ ॐ लङ्काप्रासादभञ्जकाय नमः
१६७ ॐ कृष्णाय नमः
१६८ ॐ कृष्णस्तुताय नमः
१६९ ॐ शान्ताय नमः
१७० ॐ शान्तिदाय नमः
१७१ ॐ विश्वपावनाय नमः
१७२ ॐ विश्वभोक्त्रे नमः
१७३ ॐ मारिघ्नाय नमः

१७४ ॐ ब्रह्मचारिणे नमः
१७५ ॐ जितेन्द्रियाय नमः
१७६ ॐ ऊर्ध्वगाय नमः
१७७ ॐ लाङ्गूलिने नमः
१७८ ॐ मालिने नमः
१७९ ॐ लाङ्गूलाहतराक्षसाय नमः
१८० ॐ समीरतनुजाय नमः
१८१ ॐ वीराय नमः
१८२ ॐ वीरमाराय नमः
१८३ ॐ जयप्रदाय नमः
१८४ ॐ जगन्मङ्गलदाय नमः
१८५ ॐ पुण्याय नमः
१८६ ॐ पुण्यश्रवणकीर्तनाय नमः
१८७ ॐ पुण्यकीर्तये नमः
१८८ ॐ पुण्यगीतये नमः
१८९ ॐ जगत्पावनपावनाय नमः
१९० ॐ देवेशाय नमः
१९१ ॐ मितमाराय नमः
१९२ ॐ रामभक्तिविधायकाय नमः
१९३ ॐ धात्रे नमः
१९४ ॐ ध्येयाय नमः
१९५ ॐ भगाय नमः
१९६ ॐ साक्षिणे नमः
९७ ॐ चेत्रे नमः
१९८ ॐ चैतन्यविग्रहाय नमः
१९९ ॐ ज्ञानदाय नमः
२०० ॐ प्राणदाय नमः
२०१ ॐ प्राणाय नमः
२०२ ॐ जगत्प्राणाय नमः
२०३ ॐ समीरणाय नमः
२०४ ॐ विभीषणप्रियाय नमः
२०५ ॐ शूराय नम
२०६ ॐ पिप्पलाश्रयाय नमः
२०७ ॐ सिद्धिदाय नमः
२०८ ॐ सिद्धाश्रयाय नमः
२०९ ॐ कालाय नमः
२१० ॐ कालभक्षकाय नमः
२११ ॐ भर्जिताय नमः
२१२ ॐ लङ्केशनिधनस्थायिने नमः
२१३ ॐ लङ्काविदाहकाय नमः

२१४ ॐ ईश्वराय नमः
२१५ ॐ चन्द्रसूर्याग्निनेत्राय नमः
२१६ ॐ कालाग्नये नमः
२१७ ॐ प्रलयान्तकाय नमः
२१८ ॐ कपीनायकाय नमः
२१९ ॐ कपीशाय नमः
२२० ॐ पुण्यराशये नमः
२२१ ॐ द्वादशराशिगाय नमः
२२२ ॐ सर्वाश्रयाय नमः
२२३ ॐ अप्रमेयात्मने नमः
२२४ ॐ रेवत्यादिनिवारकाय नमः
२२५ ॐ लक्ष्मणप्राणदात्रे नमः
२२६ ॐ सीताजीवनहेतुकाय नमः
२२७ ॐ रामध्येयाय नमः
२२८ ॐ हृषीकेशाय नमः
२२९ ॐ विष्णुभक्ताय नमः
२३० ॐ जटिने नमः
२३१ ॐ बलिने नमः
२३२ ॐ सिद्धाय नमः
२३३ ॐ देवादिदर्पघ्ने नमः
२३४ ॐ होत्रे नमः
२३५ ॐ धात्रे नमः
२३६ ॐ कर्त्रे नमः
२३७ ॐ जगत्प्रभवे नमः
२३८ ॐ नगरग्रामपालाय नमः
२३९ ॐ शुद्धाय नमः
२४० ॐ बुद्धाय नमः
२४१ ॐ निरन्तराय नमः
२४२ ॐ निरञ्जनाय नमः
२४३ ॐ निर्विकल्पाय नमः
२४४ ॐ गुणातीताय नमः
२४५ ॐ भयङ्कराय नमः
२४६ ॐ हनुमते नमः
२४७ ॐ दुराराध्याय नमः
२४८ ॐ तपस्साध्याय नमः
२४९ ॐ अमरेश्वराय नमः
२५० ॐ जानकीघनशोकोत्थतापहर्त्रे नमः
२५१ ॐ पराशराय नमः
२५२ ॐ वाङ्मयाय नमः

२५३ ॐ सदसद्रूपाय नमः
२५४ ॐ कारणाय नमः
२५५ ॐ प्रकृतेपराय नमः
२५६ ॐ भाग्यदाय नमः
२५७ ॐ निर्मलाय नमः
२५८ ॐ नेत्रे नमः
२५९ ॐ पुच्छलङ्काविदाहकाय नमः
२६० ॐ पुच्छबद्धाय नमः
२६१ ॐ यातुधानाय नमः
२६२ ॐ यातुधानरिपुप्रियाय नमः
२६३ ॐ छायापहारिणे नमः
२६४ ॐ भूतेशाय नमः
२६५ ॐ लोकेशाय नमः
२६६ ॐ सद्गतिप्रदाय नमः
२६७ ॐ प्लवङ्गेश्वराय नमः
२६८ ॐ क्रोधाय नमः
२६९ ॐ क्रोधसंरक्तलोचनाय नमः
२७० ॐ क्रोधहर्त्रे नमः
२७१ ॐ तापहर्त्रे नमः
२७२ ॐ भक्ताभयाय नमः
२७३ ॐ वरप्रदाय नमः
२७४ ॐ भक्तानुकम्पिने नमः
२७५ ॐ विश्वेशाय नमः
२७६ ॐ पुरुहूताय नमः
२७७ ॐ पुरन्दराय नमः
२७८ ॐ अग्नये नमः
२७९ ॐ विभावसवे नमः
२८० ॐ भास्वते नमः
२८१ ॐ यमाय नमः
२८२ ॐ निर्ऋतये नमः
२८३ ॐ वरुणाय नमः
२८४ ॐ वायुगतिमते नमः
२८५ ॐ वायवे नमः
२८६ ॐ कुबेराय नमः
२८७ ॐ ईश्वराय नमः
२८८ ॐ रवये नमः
२८९ ॐ चन्द्राय नमः
२९० ॐ कुजाय नमः
२९१ ॐ सौम्याय नमः
२९२ ॐ गुरवे नमः
२९३ ॐ काव्याय नमः

२९४ ॐ शनैश्चराय नमः
२९५ ॐ राहवे नमः
२९६ ॐ केतवे नमः
२९७ ॐ मरुते नमः
२९८ ॐ होत्रे नमः
२९९ ॐ धात्रे नमः
३०० ॐ हर्त्रे नमः
३०१ ॐ समीरजाय नमः
३०२ ॐ मशकीकृतदेवारये नमः
३०३ ॐ दैत्यारये नमः
३०४ ॐ मधुसूदनाय नमः
३०५ ॐ कामाय नमः
३०६ ॐ कपये नमः
३०७ ॐ कामपालाय नमः
३०८ ॐ कपिलाय नमः
३०९ ॐ विश्वजीवनाय नमः
३१० ॐ भागीरथीपदाम्भोजाय नमः
३११ ॐ सेतुबन्धविशारदाय नमः
३१२ ॐ स्वाहाकाराय नमः
३१३ ॐ स्वधाकाराय नमः
३१४ ॐ हविषे नमः
३१५ ॐ कव्याय नमः
३१६ ॐ हव्याय नमः
३१७ ॐ प्रकाशकाय नमः
३१८ ॐ स्वप्रकाशाय नमः
३१९ ॐ महावीराय नमः
३२० ॐ लघवे नमः
३२१ ॐ अमितविक्रमाय नमः
३२२ ॐ डण्डानोड्डीनगतिमते नमः
३२३ ॐ सद्गतये नमः
३२४ ॐ पुरुषोत्तमाय नमः
३२५ ॐ जगदात्मने नमः
३२६ ॐ जगद्योनये नमः
३२७ ॐ जगदन्ताय नमः
३२८ ॐ अनन्तकाय नमः
३२९ ॐ विपाप्मने नमः
३३० ॐ निष्कलङ्काय नमः
३३१ ॐ महते नमः
३३२ ॐ महदहङ्कृतये नमः
३३३ ॐ खाय नमः

३३४ ॐ वायवे नमः
३३५ ॐ पृथिव्यै नमः
३३६ ॐ आपाय नमः
३३७ ॐ वह्नये नमः
३३८ ॐ दिक्पालाय नमः
३३९ ॐ एकस्थाय नमः
३४० ॐ क्षेत्रज्ञाय नमः
३४१ ॐ क्षेत्रहन्त्रे नमः
३४२ ॐ पल्वलीकृतसागराय नमः
३४३ ॐ हिरण्मयाय नमः
३४४ ॐ पुराणाय नमः
३४५ ॐ खेचराय नमः
३४६ ॐ भूचराय नमः
३४७ ॐ मनसे नमः
३४८ ॐ हिरण्यगर्भाय नमः
३४९ ॐ सुत्राम्णे नमः
३५० ॐ राजराजाय नमः
३५१ ॐ विशाम्पतये नमः
३५२ ॐ वेदान्तवेद्याय नमः
३५३ ॐ उद्गीथाय नमः
३५४ ॐ वेदाय नमः
३५५ ॐ वेदाङ्गपारगाय नमः
३५६ ॐ प्रतिग्रामस्थितये नमः
३५७ ॐ सद्यःस्फूर्तिदात्रे नमः
३५८ ॐ गुणाकाराय नमः
३५९ ॐ नक्षत्रमालिने नमः
३६० ॐ भूतात्मने नमः
३६१ ॐ सुरभये नमः
३६२ ॐ कल्पपादाय नमः
३६३ ॐ चिन्तामणये नमः
३६४ ॐ गुणनिधये नमः
३६५ ॐ प्रजाद्वाराय नमः
३६६ ॐ अनुत्तमाय नमः
३६७ ॐ पुण्यश्लोकाय नमः
३६८ ॐ पुरारातये नमः
३६९ ॐ ज्योतिष्मते नमः
३७० ॐ शर्वरीपतये नमः
३७१ ॐ किलकिलिरावसंत्रस्त-भूत-प्रेत-पिशाचकाय नमः
३७२ ॐ ऋणत्रयहराय नमः
३७३ ॐ सूक्ष्माय नमः

३७४ ॐ स्थूलाय नमः
३७५ ॐ सर्वगतये नमः
३७६ ॐ पुंसे नमः
३७७ ॐ अपस्मारहाय नमः
३७८ ॐ स्मर्त्रे नमः
३७९ ॐ श्रुतये नमः
३८० ॐ गाथायै नमः
३८१ ॐ स्मृतये नमः
३८२ ॐ मनवे नमः
३८३ ॐ स्वर्गद्वाराय नमः
३८४ ॐ प्रजाद्वाराय नमः
३८५ ॐ मोक्षद्वाराय नमः
३८६ ॐ यतीश्वराय नमः
३८७ ॐ नादरूपाय नमः
३८८ ॐ परब्रह्मणे नमः
३८९ ॐ ब्रह्मणे नमः
३९० ॐ ब्रह्मपुरातनाय नमः
३९१ ॐ एकाय नमः
३९२ ॐ अनेकाय नमः
३९३ ॐ जनाय नमः
३९४ ॐ शुक्लाय नमः
३९५ ॐ स्वयज्योतिषे नमः
३९६ ॐ अनाकुलाय नमः
३९७ ॐ ज्योतिर्ज्योतिषे नमः
३९८ ॐ अनादये नमः
३९९ ॐ सात्त्विकाय नमः
४०० ॐ राजसाय नमः
४०१ ॐ तमसे नमः
४०२ ॐ तमोहर्त्रे नमः
४०३ ॐ निरालम्बाय नमः
४०४ ॐ निराकाराय नमः
४०५ ॐ गुणाकाराय नम
४०६ ॐ गुणाश्रयाय नमः
४०७ ॐ गुणमयाय नमः
४०८ ॐ बृहत्कायाय नमः
४०९ ॐ बृहद्यशसे नमः
४१० ॐ बृहद्धनुषे नमः
४११ ॐ बृहत्पादाय नमः
४१२ ॐ बृहन्मूर्ध्ने नमः
४१३ ॐ बृहत्स्वनाय नमः
४१४ ॐ बृहत्कायाय नमः
४१५ ॐ बृहन्नासाय नमः
४ ६ ॐ बृहद्बाहवे नमः
४१७ ॐ बृहत्तनवे नमः

४१८ ॐ बृहद्यत्नाय नमः
४१९ ॐ बृहत्कायाय नमः
४२० ॐ बृहत्पुच्छाय नमः
४२१ ॐ बृहत्कराय नमः
४२२ ॐ बृहद्गतये नमः
४२३ ॐ बृहत्सेव्याय नमः
४२४ ॐ बृहल्लोकाय नमः
४२५ ॐ फलप्रदाय नमः
४२६ ॐ बृहच्छक्तये नमः
४२७ ॐ बृहद्वाञ्छाफलदाय नमः
४२८ ॐ बृहदीश्वराय नमः
४२९ ॐ बृहल्लोकनुताय नमः
४३० ॐ द्रष्ट्रे नमः
४३१ ॐ विद्योद्गात्रे नमः
४३२ ॐ जगद्गुरवे नमः
४३३ ॐ देवाचार्याय नमः
४३४ ॐ सत्यवादिने नमः
४३५ ॐ ब्रह्मवादिने नमः
४३६ ॐ कलाधराय नमः
४३७ ॐ सप्तपातालगामिने नमः
४३८ ॐ मलयाचलसंश्रयाय नमः
४३९ ॐ उत्तराशास्थिताय नमः
४४० ॐ श्रीदाय नमः
४४१ ॐ दिव्यौषधीवशाय नमः
४४२ ॐ खगाय नमः
४४३ ॐ शाखामृगाय नमः
४४४ ॐ कपीन्द्राय नमः
४४५ ॐ पुराणाय नमः
४४६ ॐ प्राणचक्षुराय नमः
४४७ ॐ चतुराय नमः
४४८ ॐ ब्राह्मणाय नमः
४४९ ॐ योगिने नमः
४५० ॐ योगगम्याय नमः
४५१ ॐ परावराय नमः
४५२ ॐ अनादये नमः
४५३ ॐ निधनाय नमः
४५४ ॐ व्यासाय नमः
४५५ ॐ वैकुण्ठाय नमः
४५६ ॐ पृथिवीपतये नमः

४५७ ॐ अपराजितये नमः
४५८ ॐ जितरातये नमः
४५९ ॐ सदानन्ददाय नमः
४६० ॐ ईशित्रे नमः
४६१ ॐ गोपालाय नमः
४६२ ॐ गोपतये नमः
४६३ ॐ योध्रे नमः
४६४ ॐ कलये नमः
४६५ ॐ कालाय नमः
४६६ ॐ परात्पराय नमः
४६७ ॐ मनोवेगिने नमः
४६८ ॐ सदायोगिने नमः
४६९ ॐ संहारभयनाशनाय नमः
४७० ॐ तत्त्वदात्रे नमः
४७१ ॐ तत्त्वज्ञाय नमः
४७२ ॐ तत्त्वाय नमः
४७३ ॐ तत्त्वप्रकाशाय नमः
४७४ ॐ शुद्धाय नमः
४७५ ॐ बुधाय नमः
४७६ ॐ नित्ययुक्ताय नमः
४७७ ॐ भक्ताकाराय नमः
४७८ ॐ जगद्रथाय नमः
४७९ ॐ प्रलयाय नमः
४८० ॐ अमितमयाय नमः
४८१ ॐ मायातीताय नमः
४८२ ॐ विमत्सराय नमः
४८३ ॐ मायानिर्जितरक्षसे नमः
४८४ ॐ मायानिर्मितविष्टपाय नमः
४८५ ॐ मायाश्रयाय नमः
४८६ ॐ निर्लेपाय नमः
४८७ ॐ मायानिर्वर्त्तकाय नमः
४८८ ॐ सुखाय नमः
४८९ ॐ सुखाऽसुखप्रदाय नमः
४९० ॐ नागाय नमः
४९१ ॐ महेशकृतसंस्तवाय नमः
४९२ ॐ महेश्वराय नमः
४९३ ॐ सत्यसन्धाय नमः
४९४ ॐ शरभाय नमः
४९५ ॐ कलिपावनाय नमः
४९६ ॐ रसाय नमः
४९७ ॐ रसज्ञाय नमः
४९८ ॐ सन्मानाय नमः

४९९ ॐ रूपाय नमः
५०० ॐ चक्षुषे नमः
५०१ ॐ स्तुतये नमः
५०२ ॐ रवाय नमः
५०३ ॐ प्राणाय नमः
५०४ ॐ गन्धाय नमः
५०५ ॐ स्पर्शाय नमः
५०६ ॐ स्पर्शनाय नमः
५०७ ॐ अहङ्कारमानगाय नमः
५०८ ॐ नेतिनेतीतिगम्याय नमः
५०९ ॐ वैकुण्ठभजनप्रियाय नमः
५१० ॐ गिरिशाय नमः
५११ ॐ गिरिजाकान्ताय नमः
५१२ ॐ दुर्वाससे नमः
५१३ ॐ कवये नमः
५१४ ॐ अङ्गिरसे नमः
५१५ ॐ भृगवे नमः
५१६ ॐ वासिष्ठाय नमः
५१७ ॐ च्यवनाय नमः
५१८ ॐ नारदाय नमः
५१९ ॐ तुम्बराय नमः
५२० ॐ अमलाय नमः
५२१ ॐ विश्वक्षेत्राय नमः
५२२ ॐ विश्वबीजाय नमः
५२३ ॐ विश्वनेत्राय नमः
५२४ ॐ विश्वपाय नमः
५२५ ॐ याजकाय नमः
५२६ ॐ यजमानाय नमः
५२७ ॐ पावकाय नमः
५२८ ॐ पित्रे नमः
५२९ ॐ श्रद्धायै नमः
५३० ॐ बुद्ध्यै नमः
५३१ ॐ क्षमायै नमः
५३२ ॐ तन्द्रायै नमः
५३३ ॐ मन्त्राय नमः
५३४ ॐ मन्त्रयित्रे नमः
५३५ ॐ सुराय नमः
५३६ ॐ राजेन्द्राय नमः
५३७ ॐ भूपतये नमः
५३८ ॐ रुण्डमालिने नमः
५३९ ॐ संसारसारथये नमः
५४० ॐ नित्याय नमः
५४१ ॐ सम्पूर्णकामाय नमः

५४२ ॐ भक्तकामदुघे नमः
५४३ ॐ उत्तमाय नमः
५४४ ॐ गणपाय नमः
५४५ ॐ केशवाय नमः
५४६ ॐ भ्रात्रे नमः
५४७ ॐ पित्रे नमः
५४८ ॐ मात्रे नमः
५४९ ॐ मारुतये नमः
५५० ॐ सहस्रमूर्ध्ने नमः
५५१ ॐ सहस्रास्याय नमः
५५२ ॐ सहस्राक्षाय नमः
५५३ ॐ सहस्रपादाय नमः
५५४ ॐ कामजिते नमः
५५५ ॐ कामदहनाय नमः
५५६ ॐ कामाय नमः
५५७ ॐ काम्यफलप्रदाय नमः
५५८ ॐ मुद्रापहारिणे नमः
५५९ ॐ रक्षोघ्नाय नमः
५६० ॐ क्षितिभारहराय नमः
५६१ ॐ अकलाय नमः
५६२ ॐ नखदंष्ट्रायुधाय नमः
५६३ ॐ विष्णवे नमः
५६४ ॐ भक्ताभयवरप्रदाय नमः
५६५ ॐ दर्पघ्ने नमः
५६६ ॐ दर्पदाय नमः
५६७ ॐ इष्टाय नमः
५६८ ॐ शतमूर्त्तये नमः
५६९ ॐ अमूर्त्तिमते नमः
५७० ॐ महानिधये नमः
५७१ ॐ महाभागाय नमः
५७२ ॐ महागर्भाय नमः
५७३ ॐ महर्द्धिदाय नमः
५७४ ॐ महाकाराय नमः
५७५ ॐ महायोगिने नमः
५७६ ॐ महातेजसे नमः
५७७ ॐ महाद्युतये नमः
५७८ ॐ महाकर्मणे नमः
५७९ ॐ महानादाय नमः
५८० ॐ महामन्त्राय नमः
५८१ ॐ महामतये नमः
५८२ ॐ महाशयाय नमः
५८३ ॐ महोदराय नमः
५८४ ॐ महादेवात्मकाय नमः

५८५ ॐ विभवे नमः
५८६ ॐ रुद्रकर्मणे नमः
५८७ ॐ अकृतकर्मणे नमः
५८८ ॐ रत्ननाभाय नमः
५८९ ॐ कृतागमाय नमः
५९० ॐ अम्भोनिधिलङ्घनाय नमः
५९१ ॐ सिंहाय नमः
५९२ ॐ सत्यधर्माय नमः
५९३ ॐ प्रमोदनाय नमः
५९४ ॐ जितामित्राय नमः
५९५ ॐ जयाय नमः
५९६ ॐ सोमाय नमः
५९७ ॐ विजयाय नमः
५९८ ॐ वायुवाहनाय नमः
५९९ ॐ जीवाय नमः
६०० ॐ धात्रे नमः
६०१ ॐ सहस्रांशवे नमः
६०२ ॐ मुकुन्दाय नमः
६०३ ॐ भूरिदक्षिणाय नमः
६०४ ॐ सिद्धार्थाय नमः
६०५ ॐ सिद्धिदाय नमः
६०६ ॐ सिद्धसङ्कल्पाय नमः
६०७ ॐ सिद्धिहेतुकाय नमः
६०८ ॐ सप्तपातालचरणाय नमः
६०९ ॐ सप्तर्षिगणवन्दिताय नमः
६१० ॐ सप्ताब्धिलंघनाय नमः
६११ ॐ वीराय नमः
६१२ ॐ सप्तद्वीपोरुमण्डलाय नमः
६१३ ॐ सप्ताङ्गराज्यसुखदाय नमः
६१४ ॐ सप्तमातृनिवेशिताय नमः
६१५ ॐ सप्तस्वर्लोकमुकुटाय नमः
६१६ ॐ सप्तहोत्रे नमः
६१७ ॐ स्वराश्रयाय नमः
६१८ ॐ सप्तच्छन्दाय नमः
६१९ ॐ निधये नमः
६२० ॐ सप्तच्छन्दसे नमः
६२१ ॐ सप्तजनाश्रयाय नमः

६२२ ॐ सप्तसामाय नमः
६२३ ॐ उपगीताय नमः
६२४ ॐ सप्तपातालसंश्रयाय नमः
६२५ ॐ बलभीमाय नमः
६२६ ॐ पातालदेवताहन्त्रे नमः
६२७ ॐ शास्त्रे नमः
६२८ ॐ चातुर्यसागराय नमः
६२९ ॐ उद्यद्दक्षिणदोर्दण्डाय नमः
६३० ॐ चपलाङ्गाय नमः
६३१ ॐ प्रतोषकाय नमः
६३२ ॐ वैष्णवाय नमः
६३३ ॐ विश्वरूपात्मने नमः
६३४ ॐ वनारये नमः
६३५ ॐ कल्पभूरुहाय नमः
६३६ ॐ लोहिताङ्गाय नमः
६३७ ॐ गदापाणये नमः
६३८ ॐ धूर्त्ताय नमः
६३९ ॐ सिन्दूरलेपनाय नमः
६४० ॐ कोटिकन्दर्पसौन्दर्याय नमः
६४१ ॐ कपिवृन्दप्रपूजिताय नमः
६४२ ॐ रुद्रावताराय नमः
६४३ ॐ गम्भीराय नमः
६४४ ॐ गम्भीरध्वानसम्भवाय नमः
६४५ ॐ सामगैकशिरोरत्नाय नमः
६४६ ॐ गानविद्याप्रकाशकाय नमः
६४७ ॐ स्वर्णयज्ञोपवीतिने नमः
६४८ ॐ कुमाराय नमः
६४९ ॐ ब्रह्मदीक्षिताय नमः
६५० ॐ अश्रमाय नमः
६५१ ॐ परमोत्साहाय नमः
६५२ ॐ ऐश्वर्यौदार्यसागराय नमः
६५३ ॐ पञ्चाननाय नमः
६५४ ॐ विराडात्मने नमः
६५५ ॐ स्वराजे नमः
६५६ ॐ एकादशाननाय नमः

६५७ ॐ विधिस्तुयाय नमः
६५८ ॐ कृपामूर्तये नमः
६५९ ॐ रामहृदे नमः
६६० ॐ भक्तवत्सलाय नमः
६६१ ॐ अदाह्याय नमः
६६२ ॐ अच्छेद्याय नमः
६६३ ॐ आधाराय नमः
६६४ ॐ वज्राङ्गाय नमः
६६५ ॐ भुजविक्रमाय नमः
६६६ ॐ श्रीरामहृदयानन्दाय नमः
६६७ ॐ चिरायुषे नमः
६६८ ॐ पूर्णपिण्डजाय नमः
६६९ ॐ ध्यानशीलाय नमः
६७० ॐ प्रशान्तात्मने नमः
६७१ ॐ रामनामामृताशनाय नमः
६७२ ॐ मेघरूपाय नमः
६७३ ॐ मेघवृष्टिनिवारकाय नमः
६७४ ॐ मेघजीवनहेतवे नमः
६७५ ॐ मेघश्यामाय नमः
६७६ ॐ परात्मकाय नमः
६७७ ॐ समीरतनयाय नमः
६७८ ॐ बोध्दे नमः
६७९ ॐ तत्त्वविद्याविशारदाय नमः
६८० ॐ अमोघाय नमः
६८१ ॐ अमोघदृष्टये नमः
६८२ ॐ दिष्टदाय नमः
६८३ ॐ अनिष्टनाशाय नमः
६८४ ॐ अर्थाय नमः
६८५ ॐ अनर्थापहारिणे नमः
६८६ ॐ समर्थाय नमः
६८७ ॐ रामसेवकाय नमः
६८८ ॐ अर्थिने नमः
६८९ ॐ धन्याय नमः
६९० ॐ सुरारातये नमः
७९१ ॐ पुण्डरीकाक्षाय नमः
६९२ ॐ आत्मभुवे नमः
६९३ ॐ सङ्कर्षणाय नमः
६९४ ॐ विशुद्धात्मने नमः
६९५ ॐ विद्याराशये नमः
६९६ ॐ सुरेश्वराय नमः

६९७ ॐ अचलोद्धारकाय नमः
६९८ ॐ नित्याय नमः
६९९ ॐ सेतुकृते नमः
७०० ॐ रामसारथये नमः
७०१ ॐ आनन्दाय नमः
७०२ ॐ परमानन्दाय नमः
७०३ ॐ मत्स्याय नमः
७०४ ॐ कूर्माय नमः
७०५ ॐ निधये नमः
७०६ ॐ शूराय नमः
७०७ ॐ वराहाय नमः
७०८ ॐ नारसिंहाय नमः
७०९ ॐ वामनाय नमः
७१० ॐ जमदग्निजाय नमः
७११ ॐ रामाय नमः
७१२ ॐ कृष्णाय नमः
७१३ ॐ शिवाय नमः
७१४ ॐ बुद्धाय नमः
७१५ ॐ कल्किने नमः
७१६ ॐ रामाश्रयाय नमः
७१७ ॐ हराय नमः
७१८ ॐ नन्दिने नमः
७१९ ॐ भृङ्गिणे नमः
७२० ॐ चण्डिने नमः
७२१ ॐ गणेशाय नमः
७२२ ॐ गणसेविताय नमः
७२३ ॐ कर्माध्यक्षाय नमः
७२४ ॐ सुरारामाय नमः
७२५ ॐ विश्रामाय नमः
७२६ ॐ जगतीपतये नमः
७२७ ॐ जगन्नाथाय नमः
७२८ ॐ कपीशाय नमः
७२९ ॐ सर्वावासाय नमः
७३० ॐ सदाश्रयाय नमः
७३१ ॐ सुग्रीवादिस्तुताय नमः
७३२ ॐ दान्ताय नमः
७३३ ॐ सर्वकर्मणे नमः
७३४ ॐ प्लवङ्गमाय नमः
७३५ ॐ नखदारितरक्षसे नमः
७३६ ॐ नखयुद्धविशारदाय नमः
७३७ ॐ कुशलाय नमः
७३८ ॐ सुधनाय नमः
७३९ ॐ शेषाय नमः

७४० ॐ वासुकये नमः
७४१ ॐ तक्षकाय नमः
७४२ ॐ सुवर्णवर्णाय नमः
७४३ ॐ बलाढ्याय नमः
७४४ ॐ पुरजेत्रे नमः
७४५ ॐ अघनाशनाय नमः
७४६ ॐ कैवल्याय नमः
७४७ ॐ कैवल्यदीपाय नमः
७४८ ॐ गरुडाय नमः
७४९ ॐ पन्नगाय नमः
७५० ॐ गुरवे नमः
७५१ ॐ क्लिक्लिरावहतारातये नमः
७५२ ॐ गर्वाय नमः
७५३ ॐ पर्वतभेदनाय नमः
७५४ ॐ वज्राङ्गाय नमः
७५५ ॐ वज्रवज्राय नमः
७५६ ॐ भक्ताय नमः
७५७ ॐ भक्तवज्रनिवारणाय नमः
७५८ ॐ नखायुधाय नमः
७५९ ॐ मणिग्रीवाय नमः
७६० ॐ ज्वालिने नमः
७६१ ॐ मालिने नमः
७६२ ॐ भास्कराय नमः
७६३ ॐ प्रौढप्रतापाय नमः
७६४ ॐ स्तपनाय नमः
७६५ ॐ भक्ततापनिवारकाय नमः
७६६ ॐ शरणाय नमः
७६७ ॐ जीवाय नमः
७६८ ॐ भोक्त्रे नमः
७६९ ॐ नानाचेष्टाय नमः
७७० ॐ चञ्चलाय नमः
७७१ ॐ स्वस्थाय नमः
७७२ ॐ अस्वास्थ्यघ्ने नमः
७७३ ॐ दुःखशातनाय नमः
७७४ ॐ पवनात्मजाय नमः
७७५ ॐ पावनाय नमः
७७६ ॐ पवनाय नमः
७७७ ॐ कान्ताय नमः
७७८ ॐ भक्ताङ्गाय नमः
७७९ ॐ सहनाय नमः
७८० ॐ बलाय नमः

७८१ ॐ मेघनादरिपवे नमः
७८२ ॐ मेघनादसंहतराक्षसाय नमः
७८३ ॐ क्षराय नमः
७८४ ॐ अक्षराय नमः
७८५ ॐ विनीतात्मने नमः
७८६ ॐ वानरेशाय नमः
७८७ ॐ सताङ्गतये नमः
७८८ ॐ श्रीकण्ठाय नमः
७८९ ॐ शितिकण्ठाय नमः
७९० ॐ सहायाय नमः
७९१ ॐ असहनकाय नमः
७९२ ॐ अस्थूलाय नमः
७९३ ॐ अनणवे नमः
७९४ ॐ भर्गाय नमः
७९५ ॐ देवाय नमः
७९६ ॐ संसृतिनाशाय नमः
७९७ ॐ अध्यात्मविद्याय नमः
७९८ ॐ साराय नमः
७९९ ॐ अध्यात्मकुशलाय नमः
८०० ॐ सुधिये नमः
८०१ ॐ अकल्मषाय नमः
८०२ ॐ सत्यहेतवे नमः
८०३ ॐ सत्यदाय नमः
८०४ ॐ सत्यगोचराय नमः
८०५ ॐ सत्यगर्भाय नमः
८०६ ॐ सत्यरूपाय नमः
८०७ ॐ सत्याय नमः
८०८ ॐ सत्यपराक्रमाय नमः
८०९ ॐ अञ्जनीप्राणलिङ्गाय नमः
८१० ॐ वायुवंशोद्भहाय नमः
८११ ॐ अश्रुतये नमः
८१२ ॐ भद्ररूपाय नमः
८१३ ॐ सुरूपाय नमः
८१४ ॐ चित्ररूपधृषे नमः
८१५ ॐ मैनाकवन्दिताय नमः
८१६ ॐ सूक्ष्मदर्शनाय नमः
८१७ ॐ विजयाय नमः
८१८ ॐ जयाय नमः
८१९ ॐ क्रान्तदिङ्मण्डलाय नमः
८२० ॐ रुद्राय नमः

८२१ ॐ प्रकटीकृतविक्रमाय नमः
८२२ ॐ कम्बुकण्ठाय नमः
८२३ ॐ प्रसन्नात्मने नमः
८२४ ॐ ह्रस्वनासाय नमः
८२५ ॐ वृकोदराय नमः
८२६ ॐ लम्बोष्ठाय नमः
८२७ ॐ कुण्डलिने नमः
८२८ ॐ चित्रमालिने नमः
८२९ ॐ योगविदाम्बराय नमः
८३० ॐ विपश्चिते नमः
८३१ ॐ कवये नमः
८३२ ॐ आनन्दविग्रहाय नमः
८३३ ॐ अनन्वशासनाय नमः
८३४ ॐ फल्गुनीसूनवे नमः
८३५ ॐ अव्यग्राय नमः
८३६ ॐ योगात्मने नमः
८३७ ॐ योगतत्पराय नमः
८३८ ॐ योगविदे नमः
८३९ ॐ योगकर्त्रे नमः
८४० ॐ योगयोनये नमः
८४१ ॐ दिगम्बराय नमः
८४२ ॐ अकारादि-हकारान्ताय नमः
८४३ ॐ वर्णनिर्मिताय नमः
८४४ ॐ विग्रहाय नमः
८४५ ॐ उलूखलमुखाय नमः
८४६ ॐ सिद्धाय नमः
८४७ ॐ संस्तुताय नमः
८४८ ॐ प्रथमेश्वराय नमः
८४९ ॐ श्लिष्टजङ्घाय नमः
८५० ॐ श्लिष्टपाणये नमः
८५१ ॐ श्लिष्टजानवे नमः
८५२ ॐ शिखाधराय नमः
८५३ ॐ सुशर्मणे नमः
८५४ ॐ अमितशर्मिणे नमः
८५५ ॐ नारायणपरायणाय नमः
८५६ ॐ जिष्णवे नमः
८५७ ॐ भविष्णवे नमः
८५८ ॐ रोचिष्णवे नमः
८५९ ॐ ग्रसिष्णवे नमः
८६० ॐ स्थास्नवे नमः

८६१ ॐ हरये नमः
८६२ ॐ रुद्रानुकृते नमः
८६३ ॐ वृक्षकम्पनाय नमः
८६४ ॐ भूमिकम्पनाय नमः
८६५ ॐ गुणप्रवाहाय नमः
८६६ ॐ सूत्रात्मने नमः
८६७ ॐ वीतरागाय नमः
८६८ ॐ स्तुतिप्रियाय नमः
८६९ ॐ नागकन्याभयध्वंसिने नमः
८७० ॐ ऋतुपर्णाय नमः
८७१ ॐ कपालभृते नमः
८७२ ॐ अनाकुलाय नमः
८७३ ॐ भगाय नमः
८७४ ॐ अपायाय नमः
८७५ ॐ अनपायाय नमः
८७६ ॐ वेदपारगाय नमः
८७७ ॐ अक्षराय नमः
८७८ ॐ पुरुषाय नमः
८७९ ॐ लोकनाथाय नमः
८८० ॐ ऋक्षप्रभवे नमः
८८१ ॐ दृढाय नमः
८८२ ॐ अष्टाङ्गयोगाय नमः
८८३ ॐ फलभुवे नमः
८८४ ॐ सत्यसन्धाय नमः
८८५ ॐ पुरुष्टुताय नमः
८८६ ॐ श्मशानस्थाननिलयाय नमः
८८७ ॐ प्रेतविद्रावणाय नमः
८८८ ॐ श्रमाय नमः
८८९ ॐ पञ्चाक्षरपराय नमः
८९० ॐ पञ्चमातृकाय नमः
८९१ ॐ रञ्जनाय नमः
८९२ ॐ ध्वजाय नमः
८९३ ॐ योगिने नमः
८९४ ॐ वृन्दवन्द्याय नमः
८९५ ॐ श्रियाय नमः
८९६ ॐ शत्रुघ्नाय नमः
८९७ ॐ अनन्तविक्रमाय नमः
८९८ ॐ ब्रह्मचारिणे नमः
८९९ ॐ इन्द्रियरिपवे नमः
९०० ॐ धृतदण्डाय नमः
९०१ ॐ दशात्मकाय नमः
९०२ ॐ अप्रपञ्चाय नमः

९०३ ॐ सदाकाराय नमः
९०४ ॐ शूरसेनाविदारकाय नमः
९०५ ॐ वृद्धाय नमः
९०६ ॐ प्रमोदाय नमः
९०७ ॐ आनन्दाय नमः
९०८ ॐ सप्तजिह्वपतये नमः
९०९ ॐ धराय नमः
९१० ॐ नवद्वारपुराधाराय नमः
९११ ॐ प्रत्यग्राय नमः
९१२ ॐ सामागायकाय नमः
९१३ ॐ षट्चक्रधाम्ने नमः
९१४ ॐ स्वर्लोकाय नमः
९१५ ॐ भयहृते नमः
९१६ ॐ नामदाय नमः
९१७ ॐ अमदाय नमः
९१८ ॐ सर्ववश्यकराय नमः
९१९ ॐ शक्तये नमः
९२० ॐ अनन्ताय नमः
९२१ ॐ अनन्तमङ्गलाय नमः
९२२ ॐ अष्टमूर्तिधराय नमः
९२३ ॐ नेत्रे नमः
९२४ ॐ विरूपाय नमः
९२५ ॐ स्वरसुन्दराय नमः
९२६ ॐ धूम्रकेतवे नमः
९२७ ॐ महाकेतवे नमः
९२८ ॐ सत्यकेतवे नमः
९२९ ॐ महारथाय नमः
९३० ॐ नन्दीप्रियाय नमः
९३१ ॐ स्वतन्त्राय नमः
९३२ ॐ मेखलिने नमः
९३३ ॐ डमरुप्रियाय नमः
९३४ ॐ लोहाङ्गाय नमः
९३५ ॐ सर्वविदे नमः
९३६ ॐ धन्विने नमः
९३७ ॐ खड्गदाय नमः
९३८ ॐ शर्वाय नमः
९३९ ॐ ईश्वराय नमः
९४० ॐ फलभुजे नमः
९४१ ॐ फलहस्ताय नमः
९४२ ॐ सर्वकर्मफलप्रदाय नमः
९४३ ॐ धर्माध्यक्षाय नमः
९४४ ॐ धर्मफलाय नमः

९४५ ॐ धर्माय नमः
९४६ ॐ धर्मप्रदाय नमः
९४७ ॐ अर्थदाय नमः
९४८ ॐ पञ्चविंशतितत्त्वज्ञाय नमः
९४९ ॐ तारकब्रह्मतत्पतये नमः
९५० ॐ त्रिमार्गवसतिने नमः
९५१ ॐ भीमाय नमः
९५२ ॐ सर्वदुष्टनिर्वहणाय नमः
९५३ ॐ ऊर्जस्वते नमः
९५४ ॐ निष्कलाय नमः
९५५ ॐ शूलिने नमः
९५६ ॐ मालिने नमः
९५७ ॐ गर्जाय नमः
९५८ ॐ निशाचराय नमः
९५९ ॐ रक्ताम्बरधराय नमः
९६० ॐ रक्ताय नमः
९६१ ॐ रक्तमालाविभूषणाय नमः
९६२ ॐ वनमालिने नमः
९६३ ॐ शुभाङ्गाय नमः
९६४ ॐ श्वेताय नमः
९६५ ॐ श्वेताम्बराय नमः
९६६ ॐ यूने नमः
९६७ ॐ जयाय नमः
९६८ ॐ अजेयाय नमः
९६९ ॐ परीवादाय नमः
९७० ॐ सहस्रवदनाय नमः
९७१ ॐ कवये नमः
९७२ ॐ शाकिनी-डाकिनी-यक्ष-रक्षोभूतप्रभञ्जकाय नमः
९७३ ॐ सद्योजाताय नमः
९७४ ॐ कायगतये नमः
९७५ ॐ ज्ञानमूर्त्तये नमः
९७६ ॐ यशस्कराय नमः
९७७ ॐ शम्भुतेजसे नमः
९७८ ॐ सार्वभौमाय नमः
९७९ ॐ विष्णुभक्ताय नमः
९८० ॐ प्लवङ्गमाय नमः
९८१ ॐ चतुर्नवतिमन्त्रज्ञाय नमः
९८२ ॐ पौलस्त्यबलदर्पघ्ने नमः

९८३ ॐ सर्वलक्ष्मीप्रदाय नमः
९८४ ॐ श्रीमते नमः
९८५ ॐ अङ्गदप्रियाय नमः
९८६ ॐ ईतिनुदे नमः
९८७ ॐ स्मृतये नमः
९८८ ॐ बीजाय नमः
९८९ ॐ सुरेशाय नमः
९९० ॐ संसारभयनाशनाय नमः
९९१ ॐ उत्तमाय नमः

९९२ ॐ श्रीपरिवाराय नमः
९९३ ॐ श्रीभुवे नमः
९९४ ॐ उग्राय नमः
९९५ ॐ कामदुघे नमः
९९६ ॐ तारकाय नमः
९९७ ॐ भगवते नमः
९९८ ॐ त्रात्रे नमः
९९९ ॐ स्वस्तिदात्रे नमः
१००० ॐ सुमङ्गलाय नमः

अनेन सहस्रनाम्ना-ऽमुकद्रव्य-समर्पणेन श्रीहनुमद्देवता प्रीयताम् ।

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-रचिते हनुमद्-

रहस्ये हनुमत्सहस्रनामावली समाप्ता ।

०

लांगूलास्त्र-शत्रुञ्जय-हनुमत्स्तोत्रम्

ॐ हनुमन्तं महावीरं वायुतुल्यपराक्रमम् ।
मम कार्यार्थमागच्छ प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥ १ ॥

विनियोग:— ॐ अस्य श्रीहनुमच्छत्रुञ्जयस्तोत्रमालामन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषिः, नानाच्छन्दांसि, श्रीमन्महावीरो हनुमान् देवता, मारुतात्मज इति ह्सौं बीजम्, अञ्जनीसूनुरिति ह्स्फ्रें शक्तिः, ॐ हाहाहा इति कीलकम्, श्रीरामभक्त इति ह्रां प्राणः, श्रीराम-लक्ष्मणानन्दकर इति ह्रां ह्रीं ह्रूं जीवः, ममाऽरातिपराजयनिमित्त-शत्रुञ्जयस्तोत्र-मालामन्त्रजपे विनियोगः ।

करन्यासः—ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं रामदूताय तर्जनीभ्यां नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं लक्ष्मणप्राणदात्रे

वायु के समान पराक्रमी, महाबली, हनुमान्‌जी को मैं बार-बार प्रणाम करता हूँ, और प्रार्थना करता हूँ कि मेरे कार्य के लिए आप आइए ॥ १ ॥

विनियोग दाहिने हाथ में जल लेकर, 'ॐ अस्य श्रीहनुमच्छत्रुञ्जय-स्तोत्र-मालामन्त्रस्य' से आरम्भ कर, 'मालामन्त्रजपे विनियोगः' तक मन्त्र पढ़कर जल छोड़ना चाहिए।

करन्यास–'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं... अंगुष्ठाभ्यां नमः' मन्त्र पढ़कर दोनों हाथ की तर्जनी अंगुलियों से दोनों अँगूठों को स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं... तर्जनीभ्यां नमः' से दोनों हाथ के अंगूठे से दोनों तर्जनी

मध्यमाभ्यां नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्ख्फ्रें ह्स्रौं अञ्जनीसूनवे अनामिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं सीताशोकविनाशनाय कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं लङ्काप्रासादभञ्जनाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । इति करन्यासः ।

हृदयादिन्यासः— ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते हृदयाय नमः । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं रामदूताय शिरसे स्वाहा । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं लक्ष्मणप्राणदात्रे शिखायै वषट् । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्ख्फ्रें ह्सौं अञ्जनीसूनवे कवचाय हुम् । ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं सीताशोकविनाशनाय नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ऐं

अंगुलियों का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ......मध्यमाभ्यां नमः' मन्त्र से दोनों हाथ के अँगूठों से मध्यमा अंगुलियों को छुए। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं.......अनामिकाभ्यां नमः' इस मन्त्रसे दोनों हाथ की अनामिका अंगुलियों का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं.......कनिष्ठिकाभ्यां नमः' पढ़कर दोनों हाथ के कानी अँगुलियों को छुए। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं...करतल-करपृष्ठाभ्यां नमः' मन्त्र पढ़कर दोनों हथेलियों और उनके पृष्ठभागों का स्पर्श करे।

हृदयादिन्यास—'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं.........हृदयाय नमः' इस मन्त्र से दाहिने हाथ की पाँचों अँगुलियों से हृदय का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं........शिरसे स्वाहा' से शिर का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं......शिखायै वषट्' से शिखा का स्पर्श करे। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं...कवचाय हुम्' से दाहिने हाथ से बायें कन्धे और बायें हाथ से दाहिने कन्धे का स्पर्श

श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं लङ्काप्रासाद-भञ्जनाय अस्त्राय फट् । इति हृदयादिन्यासः ।

ध्यानम् — ध्यायेद् बाल-दिवाकरद्युतिनिभं देवारि-दर्पापहं
देवेन्द्र-प्रमुखैः प्रशस्तयशसं देदीप्यमानं रुचा ।
सुग्रीवादि-समस्त-वानरयुतं सुव्यक्त-तत्त्वप्रियं
संरक्ताऽरुण-लोचनं पवनजं पीताम्बरालंकृतम् ॥ १ ॥

मनोजवं मारुत-तुल्य-वेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥ २ ॥

वज्राङ्गं पिङ्गकेशाढ्यं स्वर्ण-कुण्डल-मण्डितम् ।
नियुद्धमुपसङ्कल्प - परावार - पराक्रमम् ॥ ३ ॥

गदायुक्तं वामहस्तं पाशहस्तं कमण्डलुम् ।
उद्यद्-दक्षिण-दोर्दण्डं हनुमन्तं विचिन्तयेत् ॥ ४ ॥

इति ध्यात्वा, 'अरे मल्ल चटख' इत्युच्चारणेऽथवा 'तोडरमल्ल चटख' इत्युच्चारणे कपिमुद्रां[1] प्रदर्शयेत् ।

करना चाहिए। 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं...नेत्र-त्रयाय वौषट्' से दाहिने हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग से दोनों नेत्रों का स्पर्श करे और 'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं...अस्त्राय फट्' इस मन्त्र से दोनों हाथ के अँगूठों को चिटका देना चाहिए।

ध्यान—'ध्यायेद् बाल-दिवाकर०' से लेकर 'हनुमन्तं विचिन्तयेत्' तक ध्यान के चार श्लोक पढ़कर श्री हनुमान्जी का ध्यान करे।

इस प्रकार हनुमान्जी का ध्यान कर, 'अरे मल्ल चटख' ऐसा

---

१. वानरी (कपि) मुद्रा —
वानरी चाऽस्ति मुद्रेयं तां शृणुष्व वदाम्यहम् ।
करौ सम्पुटितौ कृत्वा समश्लिष्टाङ्गुली स्फुटा ॥

मालामन्त्रः— ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते त्रैलोक्याक्रमण-पराक्रम-श्रीरामभक्त ! मम परस्य च सर्वशत्रून् चतुर्वर्णसम्भवान् पुं-स्त्री-नपुंसकान् भूत-भविष्यद्-वर्तमानान् नानादूरस्थ-समीपस्थान् नाना-नामधेयान् नानासङ्करजातिजान् कलत्र-पुत्र-मित्र - भृत्य-बन्धु-सुहृत्-समेतान् प्रभुशक्ति-सहितान् धन-धान्यादि-सम्पत्तियुतान् राज्ञो राजपुत्र-सेवकान् मन्त्रि-सचिव-सखीन् आत्यन्तिकक्षणेन त्वरया एत-द्दिनावधि नानोपायैर्मारय मारय शस्त्रैश्छेदय छेदय अग्निना ज्वालय ज्वालय दाहय दाहय अक्षयकुमारवत् पादतलाक्रम-णेनाऽनेन शिलातले आत्रोटय आत्रोटय घातय घातय वध वध भूतसङ्घैः सह भक्षय भक्षय क्रुद्धचेतसा नखैर्विदारय विदारय देशादस्मादुच्चाटय उच्चाटय पिशाचवत् भ्रंशय भ्रंशय भ्रामय भ्रामय भयातुरान् विसंज्ञान् सद्यः कुरु कुरु भस्मीभूतान् उद्धूलय

पढ़कर अथवा 'तोडरमल्ल चटख' इसका उच्चारण कर श्रीहनुमान्‌जी को कपिमुद्रा दिखावे।

मालामन्त्र—'ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं' से लेकर 'उच्चाटय उच्चाटय

तर्जन्यश्चाऽङ्गुलीमूले कृत्वा द्व्यङ्गुष्ठयोरपि।
अङ्गुल्यः पाणयोः सर्वा अन्तर्गर्भस्थिराः कुरु॥
हृदयोपरि स्थितास्तास्तु मुकुलाकृतिसंयुतः।
स्वामिपादे स्थिरा दृष्टिर्मुद्रा स्याच्च स्थिराऽपि तु॥
(ज्ञेयं वानरी मुद्रा चैका मन्त्रपथे ध्रुवा।)

—ह० पं०, श्लोक १४२-१४५, पृष्ठ १४८

उद्धूलय भक्तजनवत्सल ! सीताशोकापहारक ! सर्वत्र माम् एनं च रक्ष रक्ष हाहाहा हुं हुं हुं घे घे घे हुं फट् स्वाहा ॥१॥

ॐ नमो भगवते हनुमते महाबलपराक्रमाय महाविपत्ति-निवारकाय भक्तजनमनःकामना-कल्पद्रुमाय दुष्टजन-मनोरथ-स्तम्भनाय प्रभञ्जनप्राणप्रियाय स्वाहा, ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः मम शत्रून् शूलेन छेदय छेदय अग्निना ज्वालय ज्वालय दाहय दाहय उच्चाटय उच्चाटय हुं फट् स्वाहा ॥ २ ॥ इति मालामन्त्रः।

शत्रुञ्जयहनुमत्स्तोत्रम्

श्रीमन्तं हनुमन्त-मार्तरिपुभिद्-भूभृत्तरुभ्राजितं
चाल्यद्-बालधि-बन्धवैरिनिचयं चामीकराद्रिप्रभम् ।
अष्टौ रक्त-पिशङ्ग-नेत्र-नलिनं भ्रूभङ्गमङ्ग-स्फुरत्
प्रोद्यच्चण्ड-मयूख-मण्डल-मुखं दुःखापहं दुःखिनाम् ॥१॥

कौपीनं कटिसूत्र-मौञ्ज्यजिनयुग्देहं विदेहात्मजा
प्राणाधीश-पदारविन्दनिरतं स्वान्तं कृतान्तं द्विषाम् ।
ध्यात्वैवं समराङ्गणस्थितमथानीय स्व-हृत्पङ्कजे
सम्पूज्या-ऽखिल-पूजनोक्त-विधिना-सम्प्रार्थयेत् प्रार्थितम् ॥२॥

हुं फट् स्वाहा' तक माला मन्त्र है।

पश्चात् एकाग्र चित्त होकर 'श्रीमन्तं हनुमन्तमार्तरिपुभिद्०' (श्लोक १) से लेकर 'प्रमोदते मारुतजप्रसादात्' (श्लोक २५) तक शत्रुंजयहनुमत्स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

हनुमन्नञ्जनीसूनो ! महाबलपराक्रम ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ३ ॥
मर्कटाधिप ! मार्तण्ड-मण्डल-ग्रास-कारक ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ४ ॥
अक्षयन्नपि पिङ्गाक्ष ! क्षितिशोकक्षयङ्कर ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ५ ॥
रुद्रावतार ! संसार-दुःख-भारापहारक ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ६ ॥
श्रीराम-चरणाम्भोज-मधुपायत-मानस ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ७ ॥
बालि-कोदरद-क्लान्त-सुग्रीवोन्मोचनप्रभो ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ८ ॥
सीता-विरह-वारीश-मग्न-सीतेशतारक ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ९ ॥
रक्षोराज-प्रतापाग्नि-दह्यमान-जगद्वन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १० ॥
ग्रस्ताऽशेष-जगत्-स्वास्थ्य-राक्षसाम्भोधिमन्दर ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ ११ ॥
पुच्छ-गुच्छ-स्फुरद्-भूमि-जगद्-दग्धारिपत्तन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १२ ॥
जगन्मनो-दुरुल्लंघ्य-पारावार-विलङ्घन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १३ ॥

स्मृतमात्र-समस्तेष्ट-पूरक ! प्रणतप्रिय ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १४ ॥
रात्रिञ्चर-चमूराशि-कर्तनैक-विकर्तन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १५ ॥
जानकी-जानकीज्यानि-प्रेमपात्र ! परन्तप ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १६ ॥
भीमादिक-महावीर-वीरावेशावतारक ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १७ ॥
वैदेही-विरहक्लान्त-रामरोषैक-विग्रह ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १८ ॥
वज्राङ्ग-नख-दंष्ट्रेश ! वज्रिवज्रावगुण्ठन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ १९ ॥
अखर्व-गर्व-गन्धर्व-पर्वतोद्भेदन-स्वर ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ २० ॥
लक्ष्मणप्राण-सन्त्राण-त्राता तीक्ष्णकरान्वय ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ २१ ॥
रामाधिविप्रयोगार्त ! भरताद्यार्तिनाशन ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ २२ ॥
द्रोणाचल-समुत्क्षेप-समुत्क्षिप्तारि-वैभव ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ २३ ॥
सीताशीर्वाद-सम्पन्न ! समस्तावयवाक्षत ! ।
लोलल्लाङ्गूलपातेन ममाऽरातीन् निपातय ॥ २४ ॥

इत्येवमश्वत्थ-तलोपविष्टः शत्रुञ्जयं नाम पठेत् स्वयं यः ।
स शीघ्रमेवास्त-समस्तशत्रुः प्रमोदते मारुतज-प्रसादात् ॥३५॥

इति आचार्य-पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-हनुमद्-रहस्ये
'शिवदत्ती' हिन्दी-व्याख्यासहितं लाङ्गूलास्त्र-
शत्रुञ्जय-हनुमत्स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

*

हनुमदष्टकस्तोत्रम्

श्रीरघुराज-पदाब्ज-निकेतन ! पङ्कजलोचन ! मङ्गलराशे !
चण्डमहाभुज-दण्डसुरारि-विखण्डन-पण्डित ! पाहि दयालो ।
पातकिनं च समुद्धर मां महतां हि सतामपि मानमुदारं
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ॥१॥
संसृतिताप-महानलदग्ध-तनूरुहमर्म-तनोरतिवेलं
पुत्र-धन-स्वजनात्म-गृहादिषु सक्तमतेरतिकिल्विषमूर्तेः ।
केनचिदप्यमलेन पुराकृत-पुण्य-सुपुञ्जलवेन विभो वै
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ॥२॥
संसृतिकूप-मनल्पमघोरनिदाघ-निदानमजस्रमशेषं
प्राप्य सुदुःख-सहस्रभुजङ्ग-विषैक-समाकुल-सर्वतनोर्मे !
घोरमहाकृपणापदमेव गतस्य हरे पतितस्य भवाब्धौ
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ॥३॥

संसृतिसिन्धु-विशाल-कराल-महाबलकाल-झषग्रसनार्तं
व्यग्र-समग्रधियं कृपणं च महामद-नक्र-सुचक्र-हतासुम् ।
काल-महारसनोर्मि-निपीडितमुद्धर दीनमनन्यगतिं मां
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ।४।
संसृतिघोर-महागहनेचरतो मणिरञ्जित-पुण्य-सुमूर्तेः
मन्मथभीकर-घोरमहोग्र-मृगप्रवरार्दित-गात्रसुसन्धेः ।
मत्सरताप-विशेष-निपीडित बाह्यमतेश्च कथञ्चिदमेयं
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ।५।
संसृतिवृक्ष-मनेकशताघ-निदानमनन्त-विकर्म-सुशाखं
दुःखफलं करणादिपताशमनङ्ग-सुपुष्पमचिन्त्य-सुमूलम् ।
तं ह्यधिरुह्य हरे पतितं शरणागतमेव विमोचय मूढं
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ।६।
संसृतिपन्नग-वक्रभयङ्कर-दंष्ट्र-महाविषदग्ध-शरीरं
प्राणविनिर्गम-भीतिसमाकुल-मन्धमनाथमतीव विषण्णम् ।
मोहमहाकुहरे पतितं दययोद्धर मामजितेन्द्रियकामं
त्वां भजतो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ।७।
इन्द्रिय-नामक-चौरगणैर्हृत-तत्त्वविवेक-महाधनराशिं
संसृतजाल-निपातितमेव महाबलिभिश्च विखण्डितकायम् ।
त्वत्पदपद्म-मनुत्तममाश्रितमाशु कपीश्वर ! पाहि कृपालो !
त्वां भजनो मम देहि दयाघन ! हे हनुमत् ! स्वपदाम्बुजदास्यम् ।८।
ब्रह्म-मरुद्गण-रुद्र-महेन्द्र-किरीट-सुकोटि-लसत्पदपीठं
दाशरथिं जपति क्षितिमण्डल एष निधाय सदैव हृदब्जे ।

तस्य हनूमत एव शिवङ्करमष्टकमेतदनिष्टहरं वै
यः सततं हि पठेत् स नरो लभतेऽच्युत-रामपदाब्ज-निवासम् ।९।

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते हनुमद्-
रहस्ये हनुमदष्टकं सम्पूर्णम् ।

*

हनुमत्पञ्चरत्नस्तोत्रम्

शंशंशंसिद्धिनाथं प्रणमति चरणं वायुपुत्रं च रौद्रं
वंवंवंविश्वरूपं हहहहहसितं गर्जितं मेघछत्रम् ।
तंतंत्रैलोक्यनाथं तपति दिमरं तं त्रिनेत्रस्वरूपं
कंकंकन्दर्पवश्यं कमलमनहरं शाकिनीकालरूपम् ॥१॥

रंरंरंरामदूतं रणगजदमितं रावणच्छेददक्षं
बंबंबंबालरूपं नतगिरिचरणं कम्पितं सूर्यबिम्बम् ।
मंमंमंमन्त्रसिद्धिं कपिकुलतिलकं मर्दनं शाकिनीनां
हुंहुंहुंकारबीजं हनति हनुमतं हन्यते शत्रुसैन्यम् ॥२॥

दंदंदंदीर्घरूपं धरकरशिखरं पातितं मेघनादं
ऊंऊंउच्चाटितं वै सकलभुवतलं योगिनीवृन्दरूपम् ।
क्षंक्षंक्षंक्षिप्रवेगं क्रमति च जलधिं ज्वालितं रक्षदुर्गं
क्षेंक्षेंक्षेंक्षेमतत्त्वं दनुरुहकुलकं मुच्यते बिम्बकारम् ॥३॥

कंकंकंकालदुष्टं जलनिधितरणं राक्षसानां विनाशे
दक्षं श्रेष्ठ कवीनां त्रिभुवनचरतां प्राणिनां प्राणरूपम् ।
ह्रांह्रांह्रांह्रासतत्त्वं त्रिभुवनरचितं दैवतं सर्वभूते
देवानां च त्रयाणां फणिभुवनधरं व्यापकं वायुरूपम् ॥४॥

त्वंत्वंत्वंवेदतत्त्वं बहुऋचयजुषां साम चाऽथर्वरूपं
कंकंकंकन्दने त्वं ननु कमलतले राक्षसान् रौद्ररूपान् ।
खंखंखखड्गहस्तं झटिति भुवतले त्रोटितं नागपाशं
ॐ ॐ ॐकाररूपं त्रिभुवनपठितं वेदमन्त्राधिमन्त्रम् ॥५॥
संग्रामे शत्रुमध्ये जलनिधितरणे व्याघ्रसिंहे च सर्पे
राजद्वारे च मार्गे गिरिगुहविवरे चोषरे कन्दरे वा ।
भूत-प्रेतादि-युक्ते ग्रहगणविषये शाकिनी-डाकिनीनां
देशे विस्फोटकानां ज्वर-वमन-शिरःपीडने नाशकस्त्वम् ॥६॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते हनुमद्-
रहस्ये हनुमत्पञ्चरत्नस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

*

सङ्कष्टमोचनस्तोत्रम्

सिन्दूर-पूर-रुचिरो बलवीर्यसिन्धु-
बुद्धिप्रभावनिधिरद्भुत-वैभवश्रीः ।
दीनार्तिदाव-दहनो वरदो वरेण्यः
सङ्कष्टमोचनविभुस्तनुतां शुभं नः ॥ १ ॥
सोत्साह-लङ्घित-महार्णव-पौरुषश्री-
र्लङ्कापुरी-प्रदहन-प्रथितप्रभावः ।
घोराहव - प्रमथितारि - चमूप्रवीरः
प्राभञ्जनिर्जयति मर्कटसार्वभौमः ॥ २ ॥

द्रोणाचलानयन - वर्णित - भव्यभूतिः
श्रीराम - लक्ष्मण - सहायक - चक्रवर्ती ।
काशीस्थ-दक्षिण-विराजित - सौधमल्लः
श्रीमारुतिर्विजयते भगवान् महेशः ॥ ३ ॥

नूनं स्मृतोऽपि दयते भजतां कपीन्द्रः
सम्पूजितो दिशति वाञ्छित-सिद्धि-वृद्धिम् ।
सम्मोदकप्रिय उपैति परं प्रहर्षं
रामायण - श्रवणतः पठतां शरण्यः ॥ ४ ॥

श्रीभारत - प्रवर - युद्धरथोद्धत - श्रीः
पार्थैक - केतन - कराल - विशालमूर्त्तिः ।
उच्चैर्घनाघन - घटा - विकटाऽट्टहासः
श्रीकृष्णपक्षभरणः शरणं ममाऽस्तु ॥ ५ ॥

जङ्घालजङ्क उपमातिविदूरवेगो
मुष्टि - प्रहार - परिमूर्च्छित-राक्षसेन्द्रः ।
श्रीरामकीर्तित - पराक्रमणोद्भव - श्रीः
प्राकम्पनिर्विभुरुदञ्चतु भूतये नः ॥ ६ ॥

सीतार्त्ति-दारणपटुः प्रबलः प्रतापी
श्रीराघवेन्द्र - परिरम्भवर - प्रसादः ।
वर्णीश्वरः सविधि-शिक्षित - कालनेमिः
पञ्चाननोऽपनयतां विपदोऽधिदेशम् ॥ ७ ॥

उद्यद्-भानुसहस्र-सन्निभतनुः पीताम्बरालङ्कृतः
प्रोज्ज्वालानल-दीप्यमान-नयनो निष्पिष्ट-रक्षोगणः ।

संवर्तोद्यत-वारिदोद्धत-रवः प्रोच्चैर्गदाविभ्रमः
श्रीमान् मारुतनन्दनः प्रतिदिनं ध्येयो विपद्-भञ्जनः ॥८॥

रक्षःपिशाचभय - नाशनमामयाधि-
प्रोच्चैर्ज्वरापहरणं दमनं रिपूणाम् ।
सम्पत्ति - पुत्रकरणं विजयप्रदानं
सङ्कष्टमोचनविभोः स्तवनं नराणाम् ॥ ९ ॥

दारिद्र्य-दुःख-दहनं विजयं विवादे
कल्याण - साधनममङ्गलवारणं च ।
दाम्पत्य - दीर्घसुख - सर्वमनोरथाप्तिं
श्रीमारुतेः स्तवशतावृतिरातनोति ॥१०॥

स्तोत्रं य एतदनुवासरमस्तकामः
श्रीमारुतिं समनुचिन्त्य पठेत् सुधीरः ।
तस्मै प्रसादसुमुखो वरवानरेन्द्रः
साक्षात्कृतो भवति शाश्वतिकः सहायः ॥११॥

सङ्कष्टमोचनस्तोत्रं शङ्कराचार्यभिक्षुणा ।
महेश्वरेण रचितं मारुतेश्चरणेऽर्पितम् ॥ १२ ॥

इति हनुमद्-रहस्ये काशीपीठाधीश्वर-जगद्गुरु-शङ्कराचार्य-स्वामि-श्रीमहेश्वरानन्दसरस्वती-विरचितं सङ्कष्टमोचनस्तोत्रं समाप्तम् ।

*

हनुमदुपनिषद्

आथर्वणवेदे त्रिपञ्चाशत्तमम् -

ॐ सनकादियोगीन्द्रा अन्ये च ऋषयस्तथा ।
प्रह्लादाद्या विष्णुभक्ता हनुमन्तमिदं जगुः ॥ १ ॥
वायुपुत्र ! महाबाहो ! किं तत्त्वं ब्रह्मवादिनाम् ।
पुराणेष्वष्टादशसु स्मृतिष्वष्टादशस्वपि ॥ २ ॥
चतुर्वेदेषु शास्त्रेषु विद्यास्वाध्यात्मिकेषु च ।
सर्वेषु विबुधाद्येषु विघ्नसूर्येषु शक्तिषु ॥ ३ ॥
एतेषु मध्ये किं तत्त्वं कथयस्व महाबल ! ।

हनुमानुवाच

भो भो योगीन्द्रा ऋषयो विष्णुभक्तास्तथैव च ॥ ४ ॥
शृणुध्वं मामकीं वाचं भव बन्धविनाशिनीम् ।
एतेषु चैव सर्वेषु तत्त्वं च ब्रह्मतारकम् ॥ ५ ॥
राम एव परं ब्रह्म राम एव परं तपः ।
राम एव परं तत्त्वं श्रीरामो ब्रह्मतारकम् ॥ ६ ॥

वायुपुत्रेणोक्ता योगीन्द्रा ऋषयो विष्णुभक्ताः पुनः पप्रच्छुः- हनुमन्तं रामस्याऽङ्गानि तानि नो ब्रूहीति हनुमान् स होवाच । वायुपुत्रो विघ्न-शक्ति-दुर्गाक्षेत्रपाल-सूर्य-रुद्र-नारायण-नारसिंह-वासुदेव-वाराहमन्त्राननन्यान् कांश्चित् सर्वान् मन्त्रान् श्रीसीता-लक्ष्मण-हनुमद्-भरत-शत्रुघ्न-विभीषण-सुग्रीवा-ऽङ्गद-जाम्बवत्प्रणव-मन्त्रारामस्याऽङ्गाभिजनितास्तान् विना रामो विघ्नकरो भवति ।

पुनर्वायुपुत्रेणोक्तास्ते पुनर्हनुमन्तं पप्रच्छुराञ्जनेय ! महाबलविप्राणां गृहस्थानां प्रणवाधिकारः कथं स्यादिति पुनरुवाच हनुमान्। अयोध्यानगरे रम्ये समासीनो रामो मया पृष्टः सीतापते ! योगीन्द्रमानसहंस ! विप्र-गृहस्थानां प्रणवाधिकारः कथं स्यादिति सहोवाच रामो येषां मे षडक्षराधिकारा वर्तन्ते तेषां प्रणवाधिकारः स्यान्नाऽन्येषां प्रणवस्य केवलमकारोकार-मकारार्द्ध-मात्रासहितस्य साद्येन यो राममन्त्रं जपति तस्याऽभय-करोऽहं स्याम्। तस्मात्प्रणवस्याकारस्योकारस्य च मकारस्य चाऽर्द्धमात्रासहितस्य ऋषिछन्दोदेवतातत्त्ववर्णावस्थान-स्वरवेदाग्नीनुच्चार्य न्यास कृत्वा, प्रणवं मन्मन्त्राद् द्विगुणं जप्त्वा, पश्चाद् राममन्त्रमाद्यतः प्रणवं यो जपेत् स रामो भवेदिति रामेणोक्तं तस्माद् रामाङ्गं प्रणवः कथित इति वायुपुत्रेणोक्ताः पुनर्हनुमन्तं पप्रच्छुः। रामभक्तविभीषणकृतां रामपरिचर्यां श्रोतुमिच्छामः। स होवाच हनुमान् विभीषणोक्तरामचर्यायां सप्तसहस्राणि संस्कृतवाक्यानि सप्तसहस्राणि गद्यानि पञ्चशतान्यार्या अष्टौ सहस्राणि श्लोकाश्चतुर्विंशतिसहस्राणि पद्यानि दशसहस्राणि दण्डका इत्येवमनुक्रमं ज्ञात्वा कृतकृत्यो भवेदिति।

इति हनुमद्-रहस्ये हनुमदुपनिषत्समाप्ता।

*

हनुमत्कल्पम्

देव्युवाच

शैवानि गाणपत्यानि शाक्तानि वैष्णवानि च।
साधनानि च सौराणि चाऽन्यानि यानि कानि च? ॥ १ ॥

एतानि देवदेवेश ! त्वदुक्तानि श्रुतानि च ।
किञ्चिदन्यच्च देवानां साधनं यदि कथ्यताम् ? ॥ २ ॥

शङ्कर उवाच

श्रृणु देवि ! प्रवक्ष्यामि सावधानाऽवधारय ।
हनुमत्साधनं पुण्यं महापातकनाशनम् ॥ ३ ॥
एतद् गुह्यतमं लोके शीघ्रं सिद्धिकरं परम् ।
जयो यस्य प्रसादेन लोकत्रयजितो भवेत् ॥ ४ ॥
तत्साधनविधिं वक्ष्ये नृणां सिद्धिकरं द्रुतम् ।
(वियत्समकरं हनुमते तदनन्तरम्) ॥
रुद्रात्मकाय कवचं फडिति द्वादशाक्षरम् ॥ ५ ॥
अयं यन्त्रः समाख्यातः गोपनीयः प्रयत्नतः ।
तव स्नेहेन भक्त्या च दासोऽस्मि तव सुन्दरि ! ॥ ६ ॥
अयं मन्त्रो ह्यर्जुनाय पुरा दत्तस्तु शौरिणा ।
यो जपेत् साधनं कृत्या जितं सर्वचराऽचरम् ॥ ७ ॥
नदीकूले विष्णुगेहे निर्जने पर्वते वने ।
एकाग्रचित्तमाधाय साधयेत् साधनं महत् ॥ ८ ॥
महाशैलं समुत्पाट्य धावन्तं रावणं प्रति ।
तिष्ठ तिष्ठ रणे दुष्ट ! मम जीवन् विमोक्ष्यसे ॥ ९ ॥
इति ब्रुवन्तं कोपेन क्रोधरक्तमुखाम्बुजम् ।
भोगीन्द्राभं स्वलाङ्गूलमुत्क्षिपन्तं मुहुर्मुहुः ॥१०॥
लाक्षारक्तारुणं रौद्रं कालान्तक-यमोपमम् ।
ज्वलदग्निसमं नेत्रे सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥११॥

अङ्गदाद्यैर्महावीरैर्वेष्टितं रुद्ररूपिणम् ।
एवं रूपं हनूमन्तं ध्यात्वा यः पूजयेन्मनुम् ॥ १२ ॥
लक्षजापात् प्रसन्नः स्यात् सत्यं ते कथितं मया ।
ध्यानैकमाश्रितः पुंसां सिद्धिरेव न संशयः ॥ १३ ॥
प्रातः स्नात्वा नदीतीरे उपविश्य कुशासने ।
प्राणायामं षडङ्गं च मूलेन सकलं चरेत् ॥ १४ ॥
पुष्पाञ्जल्यष्टकं दत्त्वा ध्यात्वा रामं स-सीतकम् ।
ताम्रपात्रे ततः पद्ममष्टपत्रं स-केसरम् ॥ १५ ॥
रक्त - चन्दन - घृष्टेन लिखेत्तस्य शलाकया ।
कर्णिकायां लिखेन्मन्त्रं तत्राऽऽवाह्य कपिप्रभुम् ॥ १६ ॥
कर्णिकायां यजेद्देवं दत्त्वा पाद्यादिकं ततः ।
गन्ध-पुष्पादिकं चैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः ॥ १७ ॥
सुग्रीवं च हनूमन्तमङ्गदं नलनीलकम् ।
जाम्बवन्तं च कुमुदं केसरिणं दले दले ॥ १८ ॥
पूर्वादिक्रमतो देवि ! पूजयेद् गन्ध-चन्दनैः ।
पवनं चाऽञ्जनीं चैव पूजयेद्दक्षवामतः ॥ १९ ॥
दलाग्रेषु क्रमात् पूज्या लोकपालास्ततः परम् ।
ध्यात्वा जपेन्मन्त्रराजं लक्षं यावत्तु साधकः ॥ २० ॥
लक्षान्ते दिवसं प्राप्य कुर्याच्च पूजनं महत् ।
एकाग्रमनसा धीमांस्तस्मिन् पवननन्दने ॥ २१ ॥
दिवा-रात्रौ जपं कुर्याद् यावत् सन्दर्शनं भवेत् ।
सुदृढं साधकं मत्वा निशीथे पवनात्मजः ॥ २२ ॥

सुप्रसन्नस्ततो भूत्वा प्रयाति साधकाग्रतः ।
यथेप्सितं वरं दत्त्वा साधकाय कपिप्रभुः ॥२३॥
सर्वसौख्यमवाप्नोति विहरेदात्मनः सुखैः ।
एतच्च साधनं पुण्यं देवानामपि दुर्लभम् ॥२४॥
तव स्नेहात् समाख्यातं भक्ताऽसि यदि पार्वति ! ॥२५॥

इति गरुडतन्त्रे देवीश्वर-संवादे द्वादशाक्षरसाधनं समाप्तम् ।

हनुमतो विशुद्धं च लिख्यते वीरसाधनम् ।
ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय कृतनित्यक्रियो द्विजः ॥ १ ॥
गत्वा नदीं ततः स्नात्वा तीर्थमावाह्य चाऽष्टधा ।
मूलमन्त्रं ततो जप्त्वा सिञ्चेदोमित्यसंख्यया ॥ २ ॥
ततो वासः परीधाय गङ्गातीरेऽथवा गृहे ।

उपविश्य, आं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । आं हृदयाय नमः । इत्यादिना च कराङ्ग-न्यासौ कुर्यात् । ततः प्राणायामः । आकारादि-वर्णमुच्चरन् वामनासापुटेन रेचयेत् । एवं वारत्रयं कृत्वा, मन्त्रवर्णानुच्चरन्नङ्गन्यासं कुर्यात् । ततो ध्यानम्–

ध्यायेद्रणे हनूमन्तं कपिकोटि - समन्वितम् ।
धावन्तं रावणं जेतुं दृष्ट्वा सत्वर-शाश्वतम् ॥ १ ॥
लक्ष्मणं च महावीरं पतितं रणभूतले ।
गुरुं च क्रोधमुत्पाद्य गृहीत्वा गुरुपर्वतम् ॥ २ ॥
हाहाकारैः सदन्तैश्च कम्पयन्तं जगत्त्रयम् ।
आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं कृत्वा भीमं कलेवरम् ॥ ३ ॥

इति ध्यात्वाऽष्टसहस्रं जपेत् । अस्य मन्त्रः-

श्रीबीजं पूर्वमुच्चार्य पवनं च ततो वदेत् ।
नन्दन च ततो देयं ङेऽवसानेऽनलप्रिया ॥ ४ ॥
[1]दशार्णोऽयं मनुः प्रोक्तो नराणां सुरपादपः ।

यः सप्तदिवसं महाभयं दत्त्वा, त्रिभागशेषासु निशासु नियमागच्छति यदि साधको मायां तरति, ईप्सितं वरं प्राप्नोति ।

विद्यां वाऽपि धनं वाऽपि राज्यं वा शत्रुनिग्रहम् ।
तत्क्षणादेव चाऽऽप्नोति सत्यं सत्यं सुनिश्चितम् ॥ ५ ॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिविरचिते हनुमद्-रहस्ये
हनुमत्कल्पं समाप्तम् ।

*

हनुमद्व्रत-पूजा-पद्धतिः

तत्राऽऽदौ हनुमद्व्रतं कर्त्तुमारभमाण आचाराऽनुसारेण विशिष्टाचार-परम्पराप्राप्तां यथाशक्तिद्रव्यैः पम्पापूजां करिष्ये, इति सङ्कल्प्य, मार्गशीर्षमासे शुक्लत्रयोदश्यां व्रतं करिष्यमाणः द्वादश्यामेव नियतो ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः सम्यग्-रात्रिं यापयित्वा ब्राह्मे मुहूर्ते उत्थाय कर्तव्यं सर्वमालोकयति ।

मार्गशीर्ष-शुक्ल त्रयोदशी को हनुमद्व्रत आरम्भ करने वाले व्यक्ति को चाहिए कि वह सर्वप्रथम अपने कुलपरम्परानुसार यथाशक्ति सामग्री से 'पम्पापूजां करिष्ये' इस प्रकार संकल्प कर, मार्गशीर्ष शुक्ल द्वादशी के दिन जितेन्द्रिय एवं ब्रह्मचर्य पालन करता हुआ, उस रात्रि के बाद ब्राह्म मुहूर्त में उठकर इस हनुमद्व्रत को करे ।

---

१. 'श्रीं पवननन्दनाय स्वाहा' इत्ययं हनुमतो दशाक्षरो मन्त्रो ज्ञेयः ।

शौनकाद्या ऊचुः

हनुमद्व्रतसङ्कल्पं कर्त्तुकामोऽब्रवीज्जनः ।
कस्मिन् देशे व्रतं सम्यक् कर्त्तव्यं वद सूतज ! ॥ १ ॥
किं च व्रतं पूर्वतरैः कुत्राऽऽचरितमद्भुतम् ।
सन्ति स्थलानि बहुधा गोष्ठ-वृन्दावनादयः ॥ २ ॥
वापी-कूप-तडागाद्याः कुल्याः कृत्रिम-विस्तृताः ।
नद्यो नदाः सागराद्याः पर्वताः सरितो द्रुमाः ॥ ३ ॥
विचार्य बहुधा तच्च वद नो वदतां वर ! ।

सूत उवाच

साधु पृष्टं महाभागाः सम्यगेवोच्यते मया ॥ ४ ॥
बहवः सन्ति देशाश्च पुण्याः पुण्यविवर्धनाः ।
तथाऽपि वक्ष्ये यद्गुह्यं तच्छृण्वन्तु मुनीश्वराः ॥ ५ ॥

शौनकादि ऋषियों ने व्यास जी से कहा—इस हनुमद्-व्रत करने वाले प्राणी को किस देश में इस व्रत को करना चाहिए, यह बताने की कृपा करें ? ॥ १ ॥ पूर्व में इस व्रत को किसने और किस स्थान पर किया ? । कारण कि, यों तो गोशाला, वृन्दावन आदि पुनीत तीर्थ, वापी (बावली), कूप, छोटे-बड़े तालाब, नदी, नद, समुद्र, पर्वत, नदियाँ, पुनीत वृक्ष आदि किन स्थानों में इस व्रत को करना चाहिए ? हे मुनिश्रेष्ठ ! यह बताने की कृपा करें ॥ २-३½ ॥

सूत जी ने कहा—हे मुनीश्वरो ! आपने बहुत सुन्दर प्रश्न किया । यद्यपि पुण्यवर्धक अनेक पवित्र देश एवं अनेक स्थान हैं, तथापि मैं अति गोपनीय रहस्य का निरूपण करता हूँ, आप सभी सावधान होकर श्रवण करें ॥ ३½-५ ॥

पूर्वं हनुमतः पूजा कृता पम्पासरित्तटे ।
तस्मात् पम्पासरित्तीरे हनुमद्व्रतमुत्तमम् ॥ ६ ॥
नानादेशेषु कर्तव्या पम्पापूजा प्रयत्नतः ।
ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय शौचादिभिरतन्द्रितः ॥ ७ ॥
नित्यकर्म-समाप्याऽऽशु योग-क्षेमं समाविशेत् ।
ततश्च पञ्चभिर्वाद्यैरुपेतो बन्धुभिर्वृतः ॥ ८ ॥
तत्रत्यां च नदीं काञ्चिद् गत्वा स्नात्वा च वाग्यतः ।
अघमर्षणमन्त्रैश्च शुचिः प्रयतमानसः ॥ ९ ॥
सन्ध्यावन्दनपूर्वं च नित्यकर्म समाप्य च ।
पितॄन् सन्तर्प्य यत्नेन ललाटे तिलकोज्ज्वलः ॥१०॥
षोडशाऽप्युपचारांश्च पम्पायाः सर्वतो व्रती ॥११॥

सर्व-प्रथम महर्षियों ने पम्पासरोवरके तट पर हनुमान्‌जी का पूजन किया। अतएव इस उत्तम हनुमद्-व्रत को पम्पा सरोवर के तट पर ही करना चाहिए ॥ ६ ॥ इस हनुमद्-व्रत के पूजन के पूर्व सर्व-प्रथम सर्वत्र पम्पासरोवर का पूजन करे। साधक को चाहिए कि वह आलस्य रहित होता हुआ ब्राह्म मुहूर्त में उठकर नित्य-नैमित्तिक कर्म समाप्त कर, हनुमान्‌जी के व्रत को इस प्रकार आरम्भ करे। पश्चात् अपने बन्धु-बान्धवों के साथ बैण्ड, शहनाई आदि बाजा बजवाता हुआ अपने स्थान के समीप किसी नदी में स्नान एवं अघमर्षण मन्त्र से अपने को शुद्ध कर, तथा सन्ध्या-वन्दनादि नित्यकर्म समाप्त कर, पितृतर्पण के बाद मस्तक पर सुन्दर तिलक लगाकर, षोडशोपचार पूजन सामग्री से उस नदी में ही पम्पा की भावना कर पूजन करे ॥ ७-११ ॥

पम्पापूजा

आवाहनम्—हेमकूट-गिरिप्रान्त जनानां गिरि-सानुगाम् ।
पम्पामावाहयाम्यस्यां नद्यां हृद्यां प्रयत्नतः ॥१॥

आसनम्—तरङ्गशत-कल्लोलैरिङ्गत्तामरसोज्ज्वले ।
पम्पानदि ! नमस्तुभ्यं गृहाणासनमुत्तमम् ॥२॥

पाद्यम्—हृद्यं सुगन्धसम्पन्नं शुद्धं शुद्धाम्बुसत्कृतम् ।
पाद्यं गृहाण पम्पाख्ये महानदि ! नमोऽस्तु ते ॥३॥

अर्घ्यम्—भागीरथि ! नमस्तुभ्यं सलिलेन सुशोभने ।
अनर्घ्यमर्घ्यमनघे ! गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥४॥

आचमनी—पम्पानदि ! महापुण्ये ! सम्पादित-सुशोभने ।
यम्— गोदावरि ! जलेनाऽद्य गृहाणाऽऽचमनीयकम् ॥५॥

पञ्चामृत—दुग्धाऽऽज्येक्षुरसैः पुण्यैर्दध्ना च मधुना तथा ।
स्नानम्— पञ्चामृतैः स्नापयिष्ये पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते ॥६॥

शुद्धोदक—शुद्धनीलैः शुद्धजलैर्नारिकेलाम्बुभिस्तथा ।
स्नानम्—पुण्यैः कृष्णानदीतोयैः सिञ्चामि त्वां सरिद्वरे ॥७॥

वस्त्रम्—महामूल्यं च कार्पासं दिव्यवस्त्रमनुत्तमम् ।
पम्पानदि ! महापुण्ये पम्पाशोभाऽतिशोभने ॥८॥

पम्पापूजा—'हेमकूट०' से लेकर 'हृद्यां प्रयत्नतः' श्लोक पढ़कर पम्पा का आवाहन करे। 'तरङ्गशत०' श्लोक पढ़कर आसन, 'हृद्यं सुगन्धसम्पन्नं०' से पाद्य (जल), 'भागीरथि ! नमस्तुभ्यं०' से अर्घ्य, 'पम्पानदि ! महापुण्ये०' से आचमनीय जल प्रदान करे ॥ १-५ ॥

'दुग्धा-ऽऽज्येक्षुरसैः०' से पंचामृतस्नान, 'शुद्धनीलैः शुद्धजलैः०' से शुद्धोदक स्नान कराकर, 'महामूल्यं च कार्पासं' से वस्त्र, 'श्रौत-

यज्ञोपवी-श्रौत-स्मार्त्तादि-सत्कर्मफलदं पावनं शुभम् ।
तम्— यज्ञोपवीतमधुना कल्पये सरिदुत्तमे ।।९।।

गन्धम्—कर्पूरगुटिकामिश्रं कस्तूर्या च विमर्दितम् ।
यत्नेन कल्पितं गन्धं लेपयेऽङ्गं सरिद्वरे ।।१०।।

अक्षतान्-लक्षणोक्तान् हरिद्राक्तानक्षतांश्चोत्तमाञ्छुभान् ।
पम्पानदि ! गृहाणेमाञ्छुभशोभातिवृद्धये ।।११।।

कुङ्कुमम्—अतसीकुसुमोपेतं पङ्केरुहदलोज्ज्वलम् ।
कुङ्कुमं शङ्करजटासम्भूते सरिदर्पये ।।१२।।

नेत्राञ्जनम्—कज्जलं त्रिजगद्वन्द्ये महापुण्यतरङ्गिणि ।
नेत्रयोः पादमनघं गृह्यतां सरितांवरे ।।१३।।

पुष्पाणि—शतपत्रैश्च कल्हारैः कुमुदैर्बकुलैरपि ।
मल्लिका-जाति-पुन्नागैः केवलैश्चाऽपि चम्पकैः ।।१४।।
तुलसीदाममिश्चाऽपि तथा बिल्वदलैरपि ।
पूजयामि महापुण्ये पम्पानदि नमोऽस्तु ते ।।१५।।

अङ्गपूजा

गोदावर्य्यै नमः, पादौ पूजयामि । कृष्णायै नमः, गुल्फौ

स्मार्त्तादि-सत्कर्म' से यज्ञोपवीत चढ़ावे। तत्पश्चात् 'कर्पूरगुटिकामिश्रं०' से गन्ध, 'लक्षणोक्तान् हरिद्राक्तान्०' से अक्षत, 'अतसी-कुसुमोपेतं०' से कुंकुम (रोरी), 'कज्जलं त्रिजगद्वन्द्ये०' से अंजन, 'शतपत्रैश्च कल्हारैः०' से लेकर 'पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते' पर्यन्त श्लोक पढ़कर अनेक प्रकार के सुगन्धित पुष्प आदि चढ़ावे ।। ६-१५ ।।

जयाभिपापहारिण्यै नमः, जङ्घे पूजयामि। सुभ्रुवे नमः, जानुनी पूजयामि। ऊरुतरङ्गिण्यै नमः, ऊरू पूजयामि। तडिदुज्ज्वलजवायै नमः, कटिं पूजयामि। अम्बुशोभिन्यै नमः, नितम्बं पूजयामि। अणुमध्यायै नमः, मध्यं पूजयामि। सुस्तनायै नमः, स्तनौ पूजयामि। कम्बुकण्ठायै नमः, कण्ठं पूजयामि। ललितबाहुतरङ्गायै नमः, बाहू पूजयामि। दीर्घवेण्यै नमः, वेणीं पूजयामि। सुवक्त्रायै नमः, वक्त्रं पूजयामि। दुर्वारवारिपूरायै नमः, शिरः पूजयामि। सहस्रमुखायै नमः, सर्वाङ्गं पूजयामि ॥१६॥

धूपम्—स-दशाङ्गं शुभं दिव्य स-गुग्गुलमनुत्तमम्।
साज्यं परिमलोद्भूतं धूपं स्वीकुरु पावने ॥१७॥

दीपम्—साज्यमग्नि-प्रकाशोद्यत् - कोटिसूर्य - समद्युतिम्।
पश्य दीपं प्रसन्नाङ्गे पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते ॥१८॥

नैवेद्यम्—शाल्यन्नं स्वर्णपात्रस्थं शाका-ऽपूप-समन्वितम्।
साज्यं दधि-पायसं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥१९॥

ताम्बूलम्—पूगैः सुशोभनैश्चाऽपि नागवल्लीदलैर्युतम्।
ताम्बूलं गृह्यतां देवि ! पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते ॥२०॥

सुवर्णपुष्पम्-व्रतपूर्ति-महाकीर्ति - दीव्यस्फूर्ति - प्रकीर्तिदम्।
कर्तुकामो व्रतमिदं सौवर्णं पुष्पमर्पये ॥२१॥

अंगपूजा—तत्पश्चात् 'गोदावर्य्यै नमः' से लेकर, 'सहस्रमुखायै नमः, सर्वाङ्गं पूजयामि' तक पढ़ कर, प्रत्येक अंगों में पुष्प चढ़ावे ॥१६॥

'स-दशाङ्गं शुभं०' इस श्लोक से धूप, 'साज्यमग्नि०' से दीप, 'शाल्मन्नं स्वर्णपात्रस्थं०' से नाना प्रकार के नैवेद्य का भोग लगाकर, 'पूगैः सुशोभनैश्चाऽपि०' से ताम्बूल प्रदान करे ॥१७-२०॥

प्रदक्षिणाम्—प्रदक्षिणत्रयं देवि ! प्रयत्नेन प्रकल्पितम् ।
पश्याऽद्य पावने देवि ! पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते ॥२२॥
नमस्कारम्—नमस्ते नमस्ते विशालोज्ज्वलाङ्गे
नमस्ते नमस्ते लसत्सत्तरङ्गे ।
नमस्ते नमस्ते गिरिप्रान्तरङ्गे
नमस्ते नमस्ते कलद्बर्हिरङ्गे ॥२३॥
क्षमापनम्—अपराधशतं देवि ! मत्कृतं च दिने दिने ।
क्षम्यतां पावने देवि ! पम्पानदि ! नमोऽस्तु ते ॥२४॥
फलश्रुतिः—पम्पानदि ! महापुण्य-तरङ्गिणि ! नमोऽस्तु ते ।
त्वत्तीरे हनुमत्पूजा कृता रामेण धीमता ॥२५॥
मनोरथफलाऽवाप्तिस्तस्याऽभीष्टं न संशयः ।
सुग्रीवेण च तीरेऽस्मिन् कपिवर्यपतेर्व्रतम् ॥२६॥
सत्कृतं च मनोवाञ्छा सद्यस्तस्य बभूव सा ।
अतस्त्वन्नीरपुलिने कृते हनुमतो व्रते ।२७॥

तत्पश्चात् 'व्रतपूर्ति-महाकीर्ति०' से सुवर्ण-पुष्प (कटसरैया) समर्पित कर, 'प्रदक्षिणत्रयं देवि !०' से प्रदक्षिणा एवं 'नमस्ते नमस्ते विशालोज्ज्वलाङ्गे०' श्लोक पढ़कर नमस्कार करता हुआ 'अपराधशतं देवि० !' श्लोक से क्षमा-याचना करे ॥ २१-२४ ॥

फलश्रुति—सूतजी ने ऋषियों से कहा—मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् राम ने पम्पा तीर पर स्वयं हनुमान्जी का पूजन महापुण्य तरंगों वाले पम्पा सरोवर को नमस्कार करते हुए किया॥ २५ ॥ इस सरोवर का पूजन करने वालों के समस्त मनोरथ निश्चित ही पूर्ण होते हैं, कपिश्रेष्ठ हनुमान्जी का व्रत सुग्रीव ने भी पम्पा तट पर किया ॥ २६ ॥ जिससे

श्रेयांसि मम सर्वाणि न विघ्नानि भवन्त्विह ।
इति सम्प्रार्थ्य पम्पाख्यां नदीं शुभतरङ्गिणीम् ॥२८॥
कलशोदकपाणिश्च गच्छेत् स्वगृहमादरात् ॥२९॥

इति पम्पा-पूजा समाप्ता ।

हनुमत्पूजा

पूर्वोच्चरितैवं गुणेति देशकालौ स्मृत्वा, मयाऽऽचरितस्य व्रतस्य आचीर्यमाणस्य च व्रतस्य सम्पूर्णफलावाप्त्यर्थं भार्यया सह हनुमत्पूजां करिष्ये । तदङ्गत्वेन प्रणवपूर्वकं गणेशपूजनं कृत्वा भुशुद्धिं भूतशुद्धिं च कृत्वा, कलशाऽऽशोधनं कृत्वा, पीठपूजां कुर्यात् ।

उनका भी समस्त मनोरथ तत्क्षण पूर्ण हुआ। अतः साधक को चाहिए कि वह भी हनुमद्-व्रत करने के पूर्व इसी प्रकार पम्पा सरोवर के तट पर हमारे व्रत में किसी प्रकार का भी विघ्न न हो तथा समस्त कार्य शुभकारी हो, इस प्रकार शुभ तरंगवाली पम्पा नदी से प्रार्थना करता हुआ तथा कलश में श्रद्धापूर्वक पम्पा का जल लेकर व्रती अपने घर आवे ॥ २७-२९ ॥

इस प्रकार पम्पा-पूजा समाप्त ।

हनुमत्पूजा—साधक को चाहिए कि वह आचमन, प्राणायाम, शान्ति पाठादि कर, हाथ में जल, अक्षत, द्रव्य और पुष्प लेकर, पूर्वोच्चरितैवं' से लेकर 'हनुमत्पूजां करिष्ये' तक वाक्य पढ़कर, जल छोड़ दे। तत्पश्चात् प्रणवपूर्वक गणेश-पूजन, भूशुद्धि, भूतशुद्धि तथा कलश पूजन कर इस प्रकार पीठ-पूजा करे।

पीठस्याऽधोभागे—अतलाय नमः। वितलाय नमः। सुतलाय नमः। रसातलाय नमः। तलाऽतलाय नमः। महातलाय नमः। सप्तपातालाय नमः। तत्राऽगाध-सर्वतो शब्दात्मने नमः। तत्र कमले-कमठाय नमः। तदुपरि-सहस्रमणि-फणाप्रकाशमान-शेषाय नमः। अष्टदिग्गजेभ्यो नमः। तदुपरि-भूमण्डलाय नमः। तदुपरि-भूर्लोकाय नमः। भुवर्लोकाय नमः। स्वर्लोकाय नमः। जनलोकाय नमः। तपोलोकाय नमः। महर्लोकाय नमः। सत्यलोकाय नमः। अष्टदिक्पालकेभ्यो नमः। तन्मध्ये-मेरवे नमः। मेरोर्दक्षिणदिग्भागे-कस्मैचिद्द्रोणशैलाय नमः। तन्मध्ये-सुतरवे नमः। तन्मूले-सुवर्णवेदिकायै नमः। वेद्यां वृक्षस्य पूर्वभागे-नवरत्न-खचित-चारु-रत्नपीठाय नमः। एवं सम्भावयित्वा, पञ्चरङ्गैः स्वस्तिक-शङ्ख-पद्मैश्च रङ्गवल्लि विलिख्य, तन्मध्ये त्रयोदशपद्मं विलिख्य, तदुपरि-शुभ्रतन्दुलान् विनिक्षिप्य, नूतनकलशं स्थापयित्वा, शुद्धोदकेन कलशं पूरयित्वा तदुपरि पीताम्बरं संस्थाप्य, त्रयोदशकमलमालिख्य, मणिकायाम्। 'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाय नमः' इति वर्णबीजानि पूर्वादिदलेषु

तत्पश्चात् उस हनुमत्-पीठ पर 'अतलाय नमः' से लेकर 'नवरत्नखचित-चारुरत्नपीठाय नमः' पर्यन्त पढ़कर अक्षत छिड़के। पश्चात् पंचरंग तथा स्वस्तिक, शंख, पद्म आदि से रंगवल्ली का निर्माण कर मध्य में तेरह पद्म (कमल) निर्मित कर, उस कमल पर चावल की ढेरी रख, उसपर नवीन कलश रखकर तथा शुद्ध जल से उस कलश को भरकर, उसके ऊपर पीताम्बर रखकर पुनः तेरह कमल निर्मित कर, उसके पत्र में पूर्वादि क्रम से 'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाय नमः'

क्रमेण विलिख्य, त्रयोदशग्रन्थियुक्तं हरिद्रादि-नवदोरकं प्रतिष्ठाप्य, प्राणायामपूर्वकं शुद्धान्तःकरण-उत्तराभिमुख उपविश्य, सीता-समेतं श्रीरामचन्द्रध्यानादि-मानसं कृत्वा, श्रीहनुमन्तमावाहयेत् ।

श्रीहनुमतः प्राणा इह प्राणाः, हनुमतः जीव इह स्थितः, सर्वेन्द्रियाणि वाङ्-मनस्त्वक्-चक्षु-जिह्वा-घ्राण-पाणि-पाद-पायूपस्थानि हनुमत इहागत्य, सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

आवाहनम्—श्रीरामचरणाम्भोज - युगलस्थिरमानसम् ।
आवाहयामि वरदं हनुमन्तमभीष्टदम् ॥ १ ॥

ध्यानम्— कर्णिकार-सुवर्णाभं वर्णनीयं गुणोत्तमम् ।
अर्णवोल्लङ्घनोद्युक्तं तूर्णं ध्यायामि मारुतिम् ॥ २ ॥

आसनम्—नवरत्नमयं दिव्यं चतुरस्रमनूत्तमम् ।
सौवर्णमासनं तुभ्यं कल्पये कपिनायक ! ॥ ३ ॥

पाद्यम्— सुवर्णकलशानीतं सुष्ठु वासितमादरात् ।
पादयोः पाद्यमनघं प्रतिगृह्ण प्रसीद मे ॥ ४ ॥

के प्रत्येक वर्ण लिखकर, हल्दी आदि मांगलिक द्रव्य से युक्त तेरह ग्रन्थि (गाँठ) वाले नवीन डोरे को, उस कलश पर प्रतिष्ठिन करे । तत्पश्चात् आचमन, प्राणायाम कर, उत्तराभिमुख बैठकर, सीता समेत श्री रामचन्द्र का मानसिक ध्यान करता हुआ पवनपुत्र श्रीहनुमान्‌जी का आवाहन करे ।

हाथ में अक्षत लेकर 'श्रीहनुमतः प्राणा इह०' से 'चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा' पर्यन्त पढ़कर प्राण,प्रतिष्ठा करता हुआ 'श्रीरामचरणाम्भोज०' इस श्लोक से आवाहन करे ॥ १ ॥ तत्पश्चात् 'कर्णिकारसुवर्णाभं०' से ध्यान, 'नवरत्नमयं०' से आसन, 'स्वर्णकलशानीतं०' श्लोक से

अर्घ्यम्— कुसुमाऽक्षत-सम्मिश्रं गृह्यतां कपिपुङ्गव ! ।
दास्यामि तेऽञ्जनीपुत्र ! स्वमर्घ्यं रत्नसंयुतम् ॥ ५ ॥

आचमनम्—महाराक्षस-दर्पघ्न ! सुराधिप-सुपूजित ! ।
विमलं शमलघ्न ! त्वं गृहाणाऽऽचमनीयकम् ॥६॥

पञ्चामृतस्नानम्—मध्वाज्य-क्षीर-दधिभिः स-गुडैर्मन्त्रसंयुतैः ।
पञ्चामृतैः पृथक् स्नानैः सिञ्चामि त्वां कपीश्वर ! ॥ ७ ॥

शुद्धोदकस्नानम्—सुवर्णकलशानीतैर्गङ्गादि-सरिदुद्भवैः ।
शुद्धोदकैः कपीश ! त्वामभिषिञ्चामि मारुते ॥ ८ ॥

कटिसूत्रम्—ग्रथितां नवभी रत्नैर्मेखलां त्रिगुणीकृताम् ।
मौञ्जीं मुञ्जमयीं पीतां गृहाण पवनात्मज ! ॥ ९ ॥

कौपीनम्— कटिसूत्रं गृहाणेदं कौपीनं ब्रह्मचारिणः ।
कौशेयं कपिशार्दूल ! हरिद्राक्तं सुमङ्गलम् ॥१०॥

उत्तरीयम्— पीताम्बर-सुवर्णाभमुत्तरीयार्थमेव च ।
दास्यामि जानकीप्राण-त्राणकरण गृह्यताम् ॥११॥

यज्ञोपवीतम्-श्रौतस्मार्त्तादिकर्तॄणां साङ्गोपाङ्गफलप्रदम् ।
यज्ञोपवीतमनघं धारयानिलनन्दन ! ॥१२॥

पाद्य, 'कुसुमाक्षत-सम्मिश्रं०'से अर्घ्य, 'महाराक्षस-दर्पघ्न० 'से आचमन, तथा 'मध्वाज्य-क्षीर-दधिभिः०' से पंचामृत स्नान कराता हुआ 'सुवर्णकलशानीतैः०' से शुद्धोदक स्नान करावे ॥२-८॥

तत्पश्चात् 'ग्रथितां नवभी रत्नैर्मेखलां०' से करधनी, 'कटिसूत्रं गृहाणेदं०' से कौपीन एवं 'पीताम्बर-सुवर्णाभं०' से उत्तरीय वस्त्र, 'श्रौतस्मार्त्तादिकर्तॄणां०' से यज्ञोपवीत धारण करावे ॥९-१२॥

गन्धम्– दिव्यकर्पूर-संयुक्तं मृगनाभि-समन्वितम् ।
स-कुङ्कुमं पीतगन्धं ललाटे धारय प्रभो ! ॥१३॥
अक्षतान्–हरिद्राक्तानक्षतांस्त्वं कुङ्कुमद्रव्यमिश्रितान् ।
धारय श्रीगन्धमध्ये शुभशोभनवृद्धये ॥१४॥
पुष्पाणि – नीलोत्पलैः कोकनदैः कह्लारैः कमलैरपि ।
कुमुदैः पुण्डरीकैस्त्वां पूजयामि कपीश्वर ! ॥१५॥
मल्लिका-जातिपुष्पैश्च पाटलैः कुटजैरपि ।
केतकी - बकुलैश्चूतैः पुन्नागैर्नागकेसरैः ॥१६॥
चम्पकैः शतपत्रैश्च करवीरैर्मनोहरैः ।
पूजये त्वां कपिश्रेष्ठ ! स-बिल्वैस्तुलसीदलैः ॥१७॥

ग्रन्थिपूजा

अञ्जनीसूनवे नमः, प्रथमग्रन्थिं पूजयामि । हनुमते नमः, द्वितीयग्रन्थिं पूजयामि । वायुपुत्राय नमः, तृतीयग्रन्थिं पूजयामि । महाबलाय नमः, चतुर्थग्रन्थिं पूजयामि । रामेष्टाय नमः, पञ्चमग्रन्थिं पूजयामि । फाल्गुनसखाय नमः, षष्ठग्रन्थिं पूजयामि । पिङ्गाक्षाय नमः, सप्तमग्रन्थिं पूजयामि । अमितविक्रमाय नमः, अष्टमग्रन्थिं पूजयामि । कपीश्वराय नमः, नवमग्रन्थिं पूजयामि । सीताशोकविनाशनाय नमः, दशमग्रन्थिं पूजयामि । लक्ष्मणप्राण-

---

तदनन्तर 'दिव्यकर्पूरसंयुक्तं०' से गन्ध, 'हरिद्राक्तानक्षतां०' से अक्षत, 'नीलोत्पलैः०' से लेकर 'स-बिल्वैस्तुलसीदलैः' तक श्लोक पढ़कर, अनेक प्रकार के सुगन्धित पुष्प समर्पित करे ॥१३-१७॥

तत्पश्चात् नवीन डोरे की तेरह ग्रन्थियों का क्रमशः, 'अञ्जनीसूनवे

दात्रे नमः, एकादशग्रन्थिं पूजयामि । दशग्रीवदर्पघ्नाय नमः, द्वादशग्रन्थिं पूजयामि । भविष्यद्-ब्रह्मणे नमः, त्रयोदशग्रन्थिं पूजयामि ।

इति ग्रन्थिपूजा समाप्ता ।

अङ्गपूजा

हनुमते नमः, पादौ पूजयामि । सुग्रीवसखाय नमः, गुल्फौ पूजयामि । अङ्गदमित्राय नमः, जङ्घे पूजयामि । रामदासाय नमः, ऊरू पूजयामि । अक्षघ्नाय नमः, कटिं पूजयामि । लङ्कादहनाय नमः, वालं पूजयामि । राममणिदाय नमः, नाभिं पूजयामि । सागरोल्लङ्घनाय नमः, मध्यं पूजयामि । लङ्कामर्दनाय नमः, केशावलिं पूजयामि । सञ्जीवनीहर्त्रे नमः, स्तनौ पूजयामि । सौमित्रिप्राणदाय नमः, वक्षः पूजयामि । कुण्ठितदशकण्ठाय नमः, कण्ठं पूजयामि । रामाभिषेककारिणे नमः, हस्तौ पूजयामि । मन्त्ररचितरामायणाय नमः, वक्त्रं पूजयामि । प्रसन्नवदनाय नमः, वदनं पूजयामि । पिङ्गनेत्राय नमः, नेत्रे पूजयामि । श्रुति-पारगाय नमः, श्रुतिं पूजयामि । ऊर्ध्वपुण्ड्रधारिणे नमः, कपोलं पूजयामि । मणिकण्ठमालिने नमः, शिरः पूजयामि । सर्वाभीष्ट-प्रदाय नमः, सर्वाङ्गं पूजयामि ।

नमः' से लेकर 'भविष्यद्-ब्रह्मणे नमः' पर्यन्त पढ़कर पूजन करे ।

तदनन्तर 'हनुमते नमः, पादौ पूजयामि' से लेकर, 'सर्वाभीष्टप्रदाय नमः, सर्वाङ्गं पूजयामि' तक पढ़कर, श्रीहनुमान्‌जी के समस्त अंगों का

दिव्यं सुगुग्गुलं साज्यं स-दशाङ्गं स-वह्निकम् ।
गृहाण मारुते ! धूपं सुप्रियं घ्राणतर्पणम् ॥ १८ ॥
इति श्रीहनुमते धूपं समर्पयामि ।
घृतपूरितमुज्ज्वालं सितसूर्यसमप्रभम् ।
अतुलं तव दास्यामि व्रतपूर्त्यै सुदीपकम् ॥ १९ ॥
इति श्रीहनुमते दीपं समर्पयामि ।
स-शाका-ऽपूप-सूपाढ्य-पायसानि च यत्नतः ।
स-क्षीर-दधि-साज्यं च सापूपं घृतपाचितम् ॥ २० ॥
इति श्रीहनुमते नैवेद्यं समर्पयामि ।
गोदावरीजलं शुद्धं स्वर्णपात्राऽऽहृतं प्रियम् ।
पानीयं पावनोद्भूतं स्वीकुरु त्वं दयानिधे ! ॥ २१ ॥
इति श्रीहनुमते पानीयं समर्पयामि ।
आपोशनं नमस्तेऽस्तु पापराशितृणानलम् ।
कृष्णावेणीजलेनैव कुरुष्व पवनात्मज ! ॥ २२ ॥
इति श्रीहनुमते उत्तरापोशनं समर्पयामि ।
दिवाकर-सुतानीत-जलेन स्पर्शगन्धिना ।
हस्तप्रक्षालनार्थाय स्वीकुरुष्व दयानिधे ! ॥ २३ ॥
इति श्रीहनुमते हस्तप्रक्षालनं समर्पयामि ।

पूजन करता हुआ 'दिव्यं सुगुग्गुलं०' इस श्लोक से धूप जलावे ॥१८॥ तत्पश्चात् 'घृतपूरित०' से दीप, 'सशाकाऽपूप०'से नैवेद्य, 'गोदावरीजलं शुद्धं' से लज, 'आपोशनं नमस्तेऽस्तु०' से उत्तरापोशन, 'दिवाकर-

रघुवीर - पदन्यास - स्थिरमानस - मारुते ! ।
कावेरीजलपूर्णेन स्वीकुर्वाचमनीयकम् ॥ २४ ॥
इति श्रीहनुमते शुद्धाचमनीयं समर्पयामि ।
वायुपुत्र ! नमस्तुभ्यं पुष्पं सौवर्णकं प्रियम् ।
पूजयिष्यामि ते मूर्ध्नि नवरत्न-समुज्ज्वलम् ॥ २५ ॥
इति श्रीहनुमते सुवर्णपुष्पं समर्पयामि ।
ताम्बूलमनघ स्वामिन् ! प्रयत्नेन प्रकल्पितम् ।
अवलोकय नित्यं त्वं पुरतो रचितं मया ॥ २६ ॥
इति श्रीहनुमते ताम्बूलं समर्पयामि ।
शतकोटि - महारत्न - दिव्य - सद्रत्नपात्रके ।
नीराजनमिदं दृष्टेरतिथीकुरु मारुते ! ॥ २७ ॥
इति श्रीहनुमते नीराजनं समर्पयामि ।
मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानर अमृत आ जातमग्निम् ।
कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयन्त देवाः ॥ २८ ॥
इति मन्त्रेण श्रीहनुमते पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ।
पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसम्भवः ।
त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष ! त्वमेव शरणं मम ॥ २९ ॥
इति श्रीहनुमते प्रदक्षिणां समर्पयामि ।

सुता०' से हस्त प्रक्षालन, 'रघुवीरपदन्यास०' से शुद्ध आचमनीय जल प्रदान करता हुआ, 'वायुपुत्र नमस्तुभ्यं०' से हनुमान्जी को सुवर्णपुष्प (कटसरैया) चढ़ावे ॥१९-२५॥

उसी प्रकार 'ताम्बूलमनघ०' से ताम्बूल तथा 'शतकोटि-महारत्न०' से आरती कर 'मूर्धानं दिवः०' इस मन्त्र से पुष्पांजलि, 'पापोऽहं०'

नमस्तेऽस्तु महावीर ! नमस्ते वायुनन्दन ! ।
विलोक्य कृपया नित्यं त्राहि मां भक्तवत्सल ! ॥३०॥
इति श्रीहनुमते नमस्कारं समर्पयामि ।

ये पुत्र-पौत्रादि-समस्तभाग्यं, वाञ्छन्ति वायोस्तनयं प्रपूज्य ।
त्रयोदशग्रन्थियुत तदङ्गं बध्नन्ति हस्ते वरदोरसूत्रम् ॥३१॥

दोरग्रहणम्—अञ्जनीगर्भसम्भूत ! रामकार्यार्थसम्भव ।
वरदोरकृताभासा रक्ष मां प्रतिवत्सरम् ॥३२॥

पूर्वदोरकोत्तारणम्—अनेन भगवन् कार्यं प्रतिपादकविग्रहम् ।
हनूमान् प्रीणयित्वा च प्रार्थितो हृदि तिष्ठतु ॥३३॥

प्रार्थना—यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो-यज्ञ-क्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो याति पराङ्गतिम् ॥३४॥

वायनदानम्— तदङ्गत्वेन ब्राह्मणपूजनम् ।
ददाति प्रतिगृह्णाति हनूमानेव न स्वयम् ।
व्रतस्याऽस्य च पूर्त्यर्थं प्रतिगृह्णातु वायनम् ॥३५॥

इति वायनमन्त्रः ।

इति हनुमद्-रहस्ये हनुमद्-व्रत-पूजापद्धतिः समाप्ता ।

*

से प्रदक्षिणा, 'नमस्तेऽस्तु महावीर०' इससे नमस्कार करे ॥२६-३०॥

तत्पश्चात् 'ये पुत्र-पौत्रादि०' से तेरह ग्रन्थिवाला नवीन डोरा धारण कर, 'अञ्जनीगर्भसम्भूत०' से पुराना डोरा उतार दे। तदनन्तर 'अनेन भगवन् कार्य०' से नमस्कार पूर्वक 'यस्य स्मृत्या०' से ग्यारह बार 'विष्णवे नमः' का उच्चारण कर, 'ददाति प्रतिगृह्णाति०' से ब्राह्मण को वायन प्रदान करे ॥३१-३५॥

इस प्रकार हनुमद्-रहस्य में हनुमद्-व्रतपूजा-पद्धति समाप्त ।

हनुमद्-व्रतोद्यापन-विधिः

यजमानो महानद्यां माध्याह्निकस्नानं कृत्वा, नित्यकर्म विधायाऽऽचार्य-ब्रह्म-ऋत्विग्भिः सहोपविश्य, प्राणानायम्य, एवं गुणेत्यादि शुभतिथौ धर्मपत्नीसमेतस्य मम हनुमद्-व्रतकल्पोक्त-सम्पूर्णफलाऽवाप्तये धर्माऽर्थ-काम-मोक्ष-चतुर्विध-पुरुषार्थसिद्ध्यर्थं श्रीमदाञ्जनेयप्रीत्यर्थं च हनुमद्-व्रतोद्यापनाख्यं कर्म करिष्ये ।

अस्मिन् कर्मणि आचार्यत्वं भवन्तः कुर्वन्त्विति वेदवेत्तारं कुटुम्बिनं वित्तहीनं शान्तमाचारवन्तं ब्राह्मणमाचार्यत्वे नियोज्य, एवं लक्षणसंयुक्तमपरं ब्राह्मणं ब्रह्मत्वे नियोज्य, ततः त्रयोदशकलशावाहनार्थं त्रयोदशब्राह्मणानृत्विग्विधौ नियोज्य, एवमावरणं कृत्वा, ततो निष्कमात्रसुवर्णेन, तदर्धेन यथा-शक्त्या हनुमत्प्रतिमां कृत्वा, प्राणानायम्य, हनुमद्-व्रतो-द्यापनाङ्गत्वेन पम्पापूजां कृत्वा, पुनः प्राणानायम्य, शुभतिथौ धर्मपत्नीसमेतस्य मम मनोवाञ्छाफलसिद्ध्यर्थं श्रीमदाञ्जनेय-प्रीत्यर्थमाञ्जनेयप्रतिमापूजां करिष्ये । इति सङ्कल्प्य, तत्प्रतिमा-

---

उद्यापन—यजमान को चाहिए कि वह नदी में माध्याह्निक स्नान एवं नित्य कर्म कर, आचार्य, ब्रह्मा एव होताओं के साथ मण्डप में बैठकर आचमन, प्राणायाम कर हाथ में जल लेकर, 'एवं गुणेत्यादि०' से 'उद्यापनाख्यं कर्म करिष्ये' पर्यन्त पढ़कर भूमि पर जल छोड़ दे।

तत्पश्चात्—आचार्य, ब्रह्मा तथा तेरह कलशों के आवाहन के लिए तेरह ऋषियों का वरण कर, एक तोला अथवा आधा तोला सुवर्ण की हनुमान्जी की प्रतिमा बनाकर, आचमन, प्राणायाम करता हुआ, हाथ में जल, पुष्प, अक्षत, द्रव्य आदि लेकर, 'अद्येत्यादि शुभतिथौ' से

शुद्ध्यर्थं पञ्चामृतस्नपनं कृत्वा, मूलमन्त्रेण शुद्धोदकस्नपनं कृत्वा, पञ्चप्रस्थपरिमित-श्वेत-तन्दुलोपरि अलङ्कृत-पूर्णकलशं संस्थाप्य, तदुपरि वस्त्रं निधाय, तदुपरि प्रतिमामाधाय, प्राण-प्रतिष्ठां कृत्वा, ततस्त्रयोदशकलशान् प्रतिमावेष्टितांस्तन्दुलेषु निधाय, कलशपूजनं कृत्वा, तेषु कलशेषु वस्त्राण्यावेष्ट्य, तेषु नानाविधफलानि दत्त्वा, सुवर्णानि कृत्वा-ऽऽञ्जनेयपूजार्थं कलश-पूजां कृत्वा, ततः पीठार्चनं कुर्यात् ।

पीठस्याऽधस्तलाधस्तलाय नमः । वितलाय नमः । सुतलाय नमः । रसातलाय नमः । तलाऽतलाय नमः । महातलाय नमः । पातालाय नमः । तत्राऽगाध-सर्वतोमुख-सुधाधिभ्यां नमः । तत्र कस्मैचित्कमठाय नमः । तदुपरि-सहस्रफणिफणामण्डित-मणि-प्रकाशिता-ऽशेषलोकशेषाय नमः । अष्टदिग्गजेभ्यो नमः । तदुपरि-भूमण्डलाय नमः । दिक्पालेभ्यो नमः । तन्मध्ये-मेरवे नमः । मेरोर्दक्षिणदिग्भागे कस्मैचिद्रत्नसानवे नमः । तन्मध्ये-सुरतरवे नमः । तन्मूले—सुवर्णवेदिकायै नमः । वेद्यां-वृक्षस्य पूर्व-भागे-नवरत्नखचित-नूतनपीठाय नमः । एवं सम्पूज्य,

---

आञ्जनेयप्रतिमापूजां करिष्ये' पर्यन्त पढ़कर, भूमि पर जल छोड़ दे। तदनन्तर उस सुवर्ण-प्रतिमा की शुद्धि के लिए पंचामृत स्नान कराकर, मूल मन्त्र द्वारा शुद्ध जल से स्नान कराता हुआ पाँच पसर चावल की ढेरी पर पूर्णपात्र सहित कलश स्थापित कर, उस कलश पर वस्त्र चढ़ाकर उस पर स्थापित सुवर्ण-प्रतिमा का प्राण-प्रतिष्ठा कर, पश्चात् चावल की तेरह ढेरी पर, तेरह कलश स्थापित कर उन-उन कलशों पर वस्त्र चढ़ाता हुआ अनेक प्रकार के फल आदि चढाकर, भलीभाँति पूजन करे।

स्वामिन् ! सर्वजगन्नाथ ! यावत् पूजावसानकम् ।
तावत् त्वं प्रीतिभावेन प्रतिमायां स्थिरो भव ॥

ततस्त्रयोदश-ग्रन्थियुक्त-दोरकं प्रतिष्ठाप्य,

ध्यानम्

वन्दे विद्युद्-वलयलसितं ब्रह्मसूत्रं दधानं
कर्णद्वन्द्वे कनकवलये कुण्डले धारयन्तम् ।
सत्कौपीनं कटिपरिहतं कामरूपं कपीन्द्रं
नित्यं ध्यायेदनिलतनयं वज्रदेहं वरिष्ठम् ॥ १ ॥

प्रतप्त - जाम्बूनद - दिव्यभासं
देदीप्यमाना - ऽग्नि - विभासुराक्षम् ।
प्रफुल्ल-पङ्केरुह - शोभनास्यं
ध्याये हृदिस्थं पवमानसूनुम् ॥ २ ॥

अथ कल्पोक्तप्रकारेण आवाहनादि-षोडशोपचारान् कृत्वा,

नमः सर्वहितार्थाय जगदाराध्यकर्मणे ।
अमेयायाऽञ्जनेयाय पुनरर्घ्यं पुरोऽर्पयेत् ॥ ३ ॥

तदनन्तर अंजनीनन्दन की पूजा के लिए कलश-पूजन कर पीठ पूजा करे ।

'तलाय नमः' से लेकर 'प्रतिमायां स्थिरो भव' पर्यन्त पढ़कर, तत्तत्स्थानों में अक्षत, पुष्प, चढ़ाकर 'स्वामिन् सर्वजगन्नाथ०' श्लोक पढ़कर तेरह ग्रन्थि वाले डोरे को प्रतिमा के साथ रख दे ।

उसके बाद 'वन्दे विद्युद्वलयलसितं०' से 'ध्याये हृदिस्थं पवमानसूनुम्' तक दो श्लोक पढ़कर ध्यान करे। उसके बाद आवाहन से लेकर षोडशोपचार से प्रतिमा एवं डोरे का पूजन कर 'नमः सर्वहितार्थाय०'

इति प्रसन्नाऽर्घ्यं समर्पयामि नमः ।

भक्त्या प्रकल्पितैरेतैरुपचारैश्च षोडशैः ।
भगवन् हनुमानीश ! प्रीयतां मे प्रियोक्तिभिः ॥ ४ ॥

उपचारसमर्पणम् ।

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपो-यज्ञ-क्रियादिषु ।
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ५ ॥

एवं रात्रौ प्रथम-यामपूजां कृत्वा, तस्यां रात्र्यां प्रतियाम-पूजां कुर्वन्, गीत-वादित्रादिभिर्मङ्गलध्वनिभिर्भागवत-पठनादि-पुराण-श्रवणादिभिर्जागरणं कृत्वा, परेद्युः प्रभाते महानद्यां ब्राह्मणैः सह स्नानं कृत्वा, नित्यकर्म विधाय, गन्धादिभिरलङ्कृत्य, गृह-मागत्य, पूर्ववत्पूजां कृत्वा, हनुमद्व्रतोद्यापनाङ्गहोमं कुर्यात् । क्षीरान्नेनाऽऽज्येन पिप्पलसमिद्भिः कल्पोक्तद्रव्येण मूलमन्त्रेणा-ऽष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा होमं कुर्यात् । पूर्णाहुतिं च दत्त्वा,

---

श्लोक पढ़कर, एक आचमनी जल छोड़कर, 'भक्त्या प्रकल्पितैः०' इस श्लोक से षोडशोपचार पूजन श्री हनुमान् जी को समर्पित करता हुआ 'यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या० पढ़कर जल छोड़ दे ॥ १-५ ॥

इस प्रकार रात्रि के चारों प्रहर का पूजन करता हुआ, गाना-बजाना आदि मंगलध्वनि तथा भागवत-पारायण एवं पुराण-श्रवणआदि से रात भर जागरण कर दूसरे दिन प्रातःकाल वृणीत ब्राह्मणोंके साथ नदी में स्नान एवं नित्य कर्म कर, गन्धादि से उन ब्राह्मणों का सत्कार कर, पश्चात् सभी ब्राह्मण-मण्डली के साथ घर आकर, पूर्व की भाँति हनुमान्जी का षोडशोपचार से भली-भाँति पूजन कर, हनुमद्-व्रत-उद्यापन निमित्त हवन करे । खीर, घृत, पीपल की समिधा तथा अन्य हवनीय सामग्री द्वारा मूल मन्त्र से एक हजार आठ अथवा एक सौ आठ

ब्रह्मणे दक्षिणां दत्त्वा, तत आचार्यं पूजयित्वा, प्रतिमां स-वस्त्रां सालङ्कारां स-तन्दुलां च दत्त्वा, तद्दान-साद्गुण्यार्थं दक्षिणां दत्त्वा, आचार्याय स-वत्सां सालङ्कारां पयस्विनीं गां दद्यात् ।

तत ऋत्विग्भ्यः स-वस्त्रान् कलशान् दत्त्वा, दक्षिणां च दत्त्वा, विशिष्ट-पङ्गु-दीनान्ध-कृपणजनान् ब्राह्मणान् सन्तर्प्य, ऋत्विगादिब्राह्मणाञ्छतं, पञ्चाशत्, पञ्चविंशतिं त्रयोदश वा ब्राह्मणान् मिष्टान्न-भोजनेन सन्तर्प्य, भूरिदानं विभवानुसारेण कुर्यात् । एवं कुर्वन् यजमानः कृतार्थो भवति । हनुमान् सुप्रीतो वरदो भूत्वा, पुत्र-पौत्रादि-सर्वकामान् प्रयच्छति । इति शौनकादिकान् प्रति सूतः प्रोवाच ।

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचिते हनुमद्-रहस्ये हनुमद्-व्रतोद्यापनविधिः समाप्तः ।

बार हवन एवं पूर्णाहुतिकर, ब्राह्मणों को दक्षिणा प्रदान करे। तत्पश्चात आचार्य का भली-भाँति पूजन करे, वस्त्र, अलकार, तन्दुल सहित सुवर्ण - प्रतिमा प्रदान कर उसकी सांगता दक्षिणा देकर, बछड़ा सहित अलंकृत दूध वाली गौ प्रदान करे।

तत्पश्चात् उन वृणीत तेरह ऋत्विजों को भी वस्त्र एवं कलश तथा दक्षिणा देकर, पगु (अपाहिज), दीन, अन्ध, कृपण तथा ब्राह्मणों को भली-भाँति मिष्टान्न आदि से अपने वैभव के अनुसार कम से कम सौ, पचास, पचीस अथवा तेरह ब्राह्मणों को भोजन करावे। इस प्रकार यदि यजमान विधि-विधान से हनुमान्जी का व्रत करता है तो वह कृतकृत्य होता है अर्थात् वह हनुमान्जी के द्वारा वर एवं उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर, पुत्र-पौत्र आदि समस्त अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त करता है। इस प्रकार सूतजी ने शौनकादि ऋषियों से कहा।

इस प्रकार पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित हनुमद्-रहस्य में हनुमद्-व्रतोद्यापन-विधि समाप्त।

हनुमद्-व्रत-कथा

मुनयो जाह्नवीतीरे शौनकाद्या द्विजोत्तमाः ।
प्रणम्य जगतां नाथं रमानाथं मुहुर्मुहुः ॥ १ ॥
सूतं पुराणवक्तारं महाभागवतोत्तमम् ।
दृष्ट्वा प्राञ्जलयः सर्वे प्रोचुर्व्रतपरायणाः ॥ २ ॥

ऋषय ऊचुः

वासुदेवकथाप्रश्ने व्रतानि बहुशस्त्वया ।
प्रोक्तानि कृपयाऽस्माकं व्रतमन्यत् वदस्व नः ॥ ३ ॥

सूत उवाच

शृणुध्वमृषयः सर्वे मत्तः परतरं व्रतम् ।
चतुर्णामपि वर्णानां कर्तव्यं पावनोत्तमम् ॥ ४ ॥
गुह्याद् गुह्यतमं लोके मङ्गलानां च मङ्गलम् ।
आयुरारोग्यफलदं पुत्र - पौत्र - फलप्रदम् ॥ ५ ॥

कथा—एक समय परम पुनीत गंगा तट पर श्रेष्ठ शौनकादि ऋषियों ने संसार के स्वामी रमानाथ को बारम्बार प्रणाम करते हुए, परम भगवद्भक्त पुराणप्रवक्ता सूतजी को देखकर, व्रत में तत्पर समस्त ऋषिगणोंने हाथ जोड़कर सूतजी से इस प्रकार कहा—॥१-२॥

हे सूतजी ! आपने वासुदेव-कथा के प्रसंग में अनेक व्रत विधि-विधान से बताया। अब हम सभी पर कृपापूर्ण दृष्टि रखते हुए किसी अन्य व्रत का विधान बताइए ? ॥ ३ ॥

सूतजी ने कहा—मैं अब सर्वश्रेष्ठ, अतिपवित्र, चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) के करने योग्य व्रत का विधान बताता हूँ, जिसे आप लोग अत्यन्त सावधान पूर्वक श्रवण करें॥४॥ यह व्रत परम मांगलिक एवं इस संसार में अति गुप्त, आयु,'आरोग्य, ऐश्वर्यादि तथा पुत्र-पौत्रादि को

सम्पत्करं प्रतिदिनं विद्याप्रदमनुत्तमम् ।
कदाचिद् भगवान् व्यासः सह शिष्यैर्दयानिधिः ॥ ६ ॥
युधिष्ठिरं द्वैतवने द्रष्टुमभ्यागतो हठात् ।
निर्वैरं मृगसङ्कीर्णं सुपुष्पफलवृक्षकम् ॥ ७ ॥
स-पञ्चमपि काकीण - स-षड्जशिखि-सङ्कुलम् ।
श्रुता - ऽध्ययन - सम्पन्नैर्यज्वभिर्बहुवेदिभिः ॥ ८ ॥
पुत्र - पौत्रैः परिवृतैः कलितं ललितं ततम् ।
शस्त्रव्याख्यान - चतुरैर्वेदघोषोपशोभितम् ॥ ९ ॥
महाभागवतोद्गीतं लीलाहरिकथाश्रयम् ।
नित्यान्नदाननिलयं स्तुत्यं सर्वाश्रमेषु च ॥१०॥

भी प्रदान करने वाला,प्रतिदिन समस्त सम्पत्तिप्रदायक तथा उत्तम विद्यादायक है। किसी समय अपने शिष्यों के साथ दयासागर भगवान् व्यासजी द्वैतवन में एकाएकी युधिष्ठिरको देखने के लिए आ पहुँचे ॥ ५-६½ ॥ उस वन में परस्परविरोधी पशु, पक्षी आदि भी आपसी विरोध का परित्याग कर दिये थे तथा मृगों से व्याप्त सुन्दर पुष्प फल युक्त वृक्ष एवं कोयल के सुमधुर शब्द तथा नृत्य और षड्ज स्वर में अत्यन्त प्रसन्नता से शब्द करते हुए मयूरगणों को तथा अनेक वेदियों में हवन करते हुए. वेदशास्त्रज्ञ ऋषिगणों को व्यासजी ने देखा ॥ ६½-८ ॥ कहीं-कहीं पुत्र-पौत्रादि से घिरे हुए भली-भाँति शास्त्रचर्चा, वेदघोष, महाभागवतोक्त हरिलीलाएँ, तो कहीं-कहीं निरन्तर अन्नदान करते हुए देखा। जो कि चारों आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यस्त) के लिए अत्यन्त स्तुत्य है ॥ ९-१० ॥

सानुजं स-कलत्रं च तत्राऽपश्यद् युधिष्ठिरम् ।
कृष्णद्वैपायनं सोऽपि श्रुत्वाभ्यागतमादरात् ॥११॥
अतिदूरं च निष्क्रम्य पुरस्कृत्य सहाऽनुजैः ।
एकान्तसदनं नीत्वा निविष्टं पर्यपूजयत् ॥१२॥
द्रौपदी-रचितां पूजामुररीकृत्य स द्विजैः ।
सादरं कुशलं धर्मं पप्रच्छेन्द्रं यथा गुरुः ॥१३॥

वेदव्यास उवाच

भद्रं खलु महाराज ! कुशलं खलु पार्थिव ! ।
आस्ते खलु महावीरः सुखमेव वृकोदरः ॥१४॥
धनञ्जयः सुखी चैव यमौ च सुखिनावुभौ ।
सम्पादितं पाशुपतं दिव्यमस्त्रं किरीटिना ॥१५॥

उस समय कृष्णद्वैपायन युधिष्ठिर को अपने भाई एवं पत्नीसहित व्यासजीने देखा। जिस समय युधिष्ठिरने भगवान् वेदव्यास का आगमन सुना, उस समय, उस स्थानसे दूर जाकर अपने भाइयोंके साथ एकान्त, गृह में व्यासजी को ले जाकर अत्यन्त आदरपूर्वक सिंहासन पर बैठाते हुए पूजन किया ॥११-१२॥ उस समय भगवान् वेदव्यासजी ने द्रौपदी द्वारा पूजा को स्वीकार कर, जिस प्रकार इन्द्र से सादर कुशलता का समाचार बृहस्पतिने पूछा था, उसी प्रकार ब्राह्मणोंसे घिरे हुए,धर्मराज युधिष्ठिर का कुशल-समाचार अत्यन्त आदर के साथ पूछा ॥१३॥

व्यासजीने कहा—हे महाराज पृथुपुत्र युधिष्ठिर जी ! आप तथा महाबली वृकोदर (भीम) एवं धनंजय (अर्जुन) और दोनों जुड़वाँ भाई (नकुल, सहदेव) कुशल पूर्वक तो हैं ? और क्या अर्जुनने दिव्य पाशुपतास्त्र प्राप्त किया ? ॥ १४-१५ ॥ हे महाराज ! सम्पत्ति का

अन्यद् गुह्याद् गुह्यतमं वदतः शृणु तन्मम ।
अस्ति व्रतं महाराज ! केवलं सम्पदालयम् ।
कृते चाऽस्मिन् व्रते शीघ्रं भवद्-राज्यागमो भवेत् ॥१६॥

धर्मपुत्र उवाच

किं नाम व्रतमाहात्म्यमैश्वर्यं तस्य कीदृशम् ? ।
देवता तत्र का प्रोक्ता को विधिः पूजनं कथम् ? ॥१७॥
कस्मिन् मासे च कैः पूर्वं व्रतमाचरितं प्रभो ! ? ।
इदानीमेव तत्कुर्यां यदि शीघ्रफलप्रदम् ॥१८॥
इत्थं त्वयाऽतिदुःखार्ते कृपा चेन्मयि सानुजे ।
भवादृशानां महतां बान्धवो नाऽपरः क्वचित् ॥१९॥
युधिष्ठिरेण स मुनिः स्व-विश्वासमुदीरितः ।
प्रत्युवाच स्मरंश्चित्ते हनुमन्तं मुहुर्मुहुः ॥२०॥

निधिस्वरूप अत्यन्त गुप्त एक व्रत का मैं निरूपण करता हूँ, जिसे आप सावधान-पुरस्सर सुनिए। इस व्रत को करने पर निश्चित ही नष्ट राज्य शीघ्र प्राप्त होता है ॥१६॥

युधिष्ठिरने कहा कि हे प्रभो ! इस व्रतका नाम, माहात्म्य, ऐश्वर्य, देवता एव विधि तथा पूजन किस प्रकार किया जाता है तथा किस मास में यह व्रत करना चाहिए, यह बताने की कृपा कीजिए, साथ-ही-साथ यह भी निरूपण कीजिए कि इस व्रत को पूर्व में किसने किया था ? यदि आपके कथनानुसार यह व्रत शीघ्र फलदायक है, तो क्या मैं इसी समय इस व्रत को करूँ ? कारण कि भाई सहित मैं अत्यन्त दुःखी हूँ, अतः आपकी मुझ पर विशेष अनुकम्पा है, और आप-जैसा हितचिन्तक मेरा और कोई नहीं है। इस प्रकार युधिष्ठिरने अत्यन्त विश्वासपूर्वक भगवान् वेदव्यासजी से कहा। तत्पश्चात् अपने चित्त में श्री हनुमान्जी

व्यास उवाच

शृणु राजेन्द्र ! तन्नाम हनुमद्-व्रतमद्भुतम् ।
उच्चारणादेव तस्य कार्यसिद्धिर्न संशयः ॥२१॥
दुष्टग्रहोच्चाटनं च महाज्वरनिवारणम् ।
अलं हि बहुभिर्वाक्यैरभीष्टदमिति स्मृतम् ॥२२॥
पुरा हि भगवान् कृष्णः पाञ्चाल्या प्रार्थितो भृशम् ।
आचचक्षे व्रतमिदं सविशेषं हनूमतः ॥२३॥
तत्प्रभावादेव लब्धास्त्वया परमसम्पदः ।
कदाचिदपि पाञ्चाल्याः कण्ठस्थं व्रतदोरकम् ॥२४॥
दृष्ट्वा धनञ्जयः प्राह किमेतद्-व्रतमित्यलम् ।
साऽऽचचक्षे सुमधुरं व्रतागमनमुत्तमम् ॥२५॥

का बारम्बार स्मरण करते हुए व्यासजी ने इस प्रकार कहा-॥१७-२०॥
हे राजेन्द्र युधिष्ठिर ! अत्यन्तप्रभावशाली यह हनुमद्-व्रत है, जिसका नाम-स्मरण से हो निःसन्देह समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। तथा दुष्ट ग्रह विनाशक एवं ज्वरादि को नष्ट करने वाला यह व्रत है। इसके विषय में बहुत कुछ कहना तो व्यर्थ ही है। आप इतना ही समझ लीजिए कि यह व्रत समस्त अभीष्ट कार्य को सिद्ध करने वाला है॥२१-२२॥ पूर्व समय में पांचाली द्रौपदी द्वारा अत्यन्त प्रार्थना करने पर इस हनुमद्-व्रत का निरूपण भगवान् कृष्ण ने किया था ॥२३॥ उसी व्रत के प्रभाव से तुमने समस्त सम्पत्तियाँ प्राप्त की थीं। किसी समय हनुमद्-व्रत के डोरे को द्रौपदी के कण्ठ में देखकर धनंजय ने कहा कि व्यर्थ (बेकार) को डोरा गले में क्यों बाँध रखा है? तत्पश्चात् द्रौपदी ने मधुर बचनों से हनुमद्-व्रत का यह उत्तम डोरा मैंने बाँध रखा है, इस प्रकार कहा ॥२४-२५॥

श्रुत्वैतद् दैववशगः पार्थः क्रोधसमागतः ।
प्राह वै परुषं वाक्यं सोच्चैश्वर्यातिगर्वितः ॥२६॥
ध्वजे मम निबद्धोऽयं वानरो नियतं मया ।
किं दास्यति मम ब्रूहि वटुर्वन्याशनो मृगः ॥२७॥
तिर्यग्-जन्मपराधीनो योषितो बुद्धिरीदृशी ।
एतादृशैर्व्रतैरस्मान्न वञ्चयितुमर्हसि ॥२८॥
इत्युक्ता साऽतिदुःखार्ता प्राह तथ्यं धनञ्जयम् ।
भो राजन् ! सुकुमारेण आख्यातं मम सुप्रियम् ॥२९॥
जगन्नाथेन कृष्णेन तथा तस्मान् मया धृतम् ।

अर्जुन उवाच

दुःशीले छद्मना तुभ्यं तेन हास्यात् समीरितम् ॥३०॥

इस प्रकार द्रौपदी के वाक्य को सुनकर दैववशात् अपने ऐश्वर्याभिमान में चूर, अत्यन्त क्रुद्ध होते हुए अर्जुनने अति कठोर वाक्य द्रौपदी से श्री हनुमान्जी के विषय में कहा कि अरे ! यह बन्दर तो निरन्तर हमारे रथ की ध्वजा पर लटका हुआ है। यह तुम्हीं बतओ कि शाखामृग, जंगली फलों को खानेवाला, वानर समस्त सम्पत्ति प्रदान करा सकता है ? कारण कि स्त्रियों की बुद्धि तो वानर आदि तिर्यग्योनियों के अधीन है। अतः तुम इस प्रकार के व्रतों से मुझे ठग नहीं सकती। इस प्रकार अर्जुन के कहने पर अत्यन्त दुःखी होती हुई द्रौपदी ने पुनः अर्जुन से सच्ची बातें इस प्रकार कही कि हे राजन् ! इस व्रत का विधान मुझसे जगन्नाथ भगवान् कृष्ण ने बताया था। उनके कथनानुसार ही मैंने इस डोरे को धारण किया। इस प्रकार द्रौपदी के वाक्य को सुनकर अर्जुन ने कहा— अरी दुष्टे ! उस कपटी कृष्ण ने तुमको ठग लिया और हँसी-मजाक में तुमसे इस प्रकार व्रत एवं डोरा बाँधने के लिए कहा ॥२६-३०॥ मेरे

मन्निबद्धस्य तस्यैव मदधीनस्य दासवत् ।
पूजा तेन कथं प्रोक्ता दुष्टचित्तेन विष्णुना ॥३१॥
पतिव्रता न च त्वं वै पतिवाक्यपरायणा ।
त्याज्यं तद्दोरकं ते तु व्रताङ्गव्रतमप्युत ॥३२॥
इतीरितेयं सन्त्रस्ता पतित्वात् पतिदेवता ।
त्यक्त्वा तु दोरकं तत्र न्यस्तं चोद्यानमध्यमे ॥३३॥
ततः सकलसम्पत्तिर्यथागतमगात्तदा ।
भवद्भिरीदृशं प्राप्तमायासाद् वनसेवनम् ॥३४॥
त्रयोदशग्रन्थियुक्त-दोरस्योल्लङ्घनेन वै ।
भोक्तव्यं तत्फलं सौख्यं वत्सरैश्च त्रयोदशैः ।

द्वारा ही अधीन वह कृष्ण सेवक के समान है, तो भला अत्यन्त दुष्ट कृष्ण ने हनुमान्‌जी की पूजा करने के लिए तुमसे किस प्रकार कहा ? तुम तो अति पतिव्रता, सतीसाध्वी हो, अतः तुम्हारे लिए पति के वाक्य का परित्याग करना उचित नहीं, एतदर्थ इस हनुमद्-व्रत के अंगभूत धारण किये हुए इस डोरे का तुम अति शीघ्र परित्याग कर दो। इस प्रकार पतिदेव अर्जुन के कहने पर भयभीत होती हुई द्रौपदी ने उस डोरे को कण्ठ से उतार कर फेंक तो नहीं दिया, अपितु बगीचे के मध्य सुरक्षित रख दिया ॥ ३१-३३ ॥

हे युधिष्ठिर ! इस प्रकार अर्जुन द्वारा आज्ञा प्राप्त होने से उस डोरे को अपने कण्ठ से निकाल देने के कारण ही आपने अनायास वनवास प्राप्त किया और आपकी समस्त सम्पत्ति जिस प्रकार एकाएकी प्राप्त हुई थी उसी प्रकार सहसा नष्ट हुई ॥३४॥ तेरह ग्रन्थियुक्त इस डोरे का अपमान करने से ही तेरह वर्ष पर्यन्त वनवास भुगतना पड़ा। यदि इसे

इत्येतन्न् सकलं श्रुत्वा कृष्णा सस्मार तद्व्रतम् ॥३५॥
सत्यमित्याह सर्वेषां पतीनां पुरतस्तदा ।

व्यास उवाच

अपरं श्रोतुमिच्छामि चेतिहासं वदामि ते ।
पुरा हि राघवः सीतां द्रष्टुकामः स-लक्ष्मणः ॥३६॥
ऋष्यमूकमुपागम्य हनुमन्तं ददर्श ह ।
स-सुग्रीवेण तेनाऽसौ रामः सख्यं चकार ह ॥३७॥

हनुमान् उवाच

राम राम महाबाहो ! यद् वक्ष्ये शृणु तद्वचः ।
भक्तस्य तत्र मे राम कार्यातुरवशेरितः ॥३८॥
अहं पुरा मघवता वज्रेण हनुताडितः ।

धारण किये होते तो तेरह वर्ष पर्यन्त अवश्यमेव सुख का उपभोग करते। इस प्रकार व्यास जी की बात सुनकर द्रौपदी को उस व्रत का स्मरण हो आया और उस समय अपने पाँचों पतियों के आगे द्रौपदी ने कहा कि भगवान् व्यासजी ने उक्त बात सत्य ही कही ॥३५½। पुनः व्यासजी ने कहा—हे युधिष्ठिर ! इस हनुमद्-व्रत-विषयक कथा श्रवण करने की तुम्हारी इच्छा हो तो मैं और भी एक इतिहास कहता हूँ उसे सावधान पूर्वक श्रवण करो। एक समय लक्ष्मण के साथ मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् रामचन्द्र सीता की खोज करते हुए जिस समय ऋष्यमूक पर्वत पर आये, उस समय वानरराज सुग्रीव के साथ हनुमान् को देखा। और राम के साथ हनुमान् ने मित्रता की ॥३५½-३७।

हनुमानजी ने कहा—हे महाबाहु राम ! मैं जो बात कहूँगा उसे आप सावधान पूर्वक श्रवण करें, क्योंकि वास्तविक में तो मैं आपके कार्य करने में अत्यन्त आतुर एवं परम भक्त हूँ। किसी समय देवराज इन्द्र ने मेरी

तदाप्रभृति हनुमानिति ख्यातोऽस्मि भूतले।
तदा मां मूर्च्छितं दृष्ट्वा पिता मे वायुरब्रवीत् ॥३९॥
यतो निपातितः पुत्र इति क्रुद्धस्तिरोदधे।
तदा ब्रह्मादयो देवा साक्षाद् भूत्वा वदन्ति ह।
आञ्जनेय ! चिरञ्जीव त्वममेय-पराक्रमः ॥४०॥
अशेष - रामकार्याणि साधय त्वं कपीश्वर !।
वायुपुत्र ! प्लवङ्गेश ! हनुमद्व्रत-नायकम् ॥४१॥
तद्यश्चकार विमलं भृशं प्रियतमोऽद्भुतम्।
तस्य सर्वाणि कार्याणि सिध्यन्तीति वरं ददुः ॥ ४२ ॥
कार्यार्थिना राघवेण कृतमित्यब्रवीच्च माम्।
स्मृतं तद् वै राम-वाक्यं कुरु स्वामिन् मयेरितम् ॥४३॥

हनु (दाढ़ी) पर वज्र-प्रहार किया, तभी से तो लोक में मैं 'हनुमान्' इस नाम से प्रसिद्ध हुआ। जिस समय मैं इन्द्र के वज्र-प्रहार से मूर्च्छित हुआ था, उस समय मेरे पिता वायु मुझे मूर्च्छित देखकर इस प्रकार कहने लगे कि, 'जिसने मेरे पुत्र को मारा है, उसे मैं भी अवश्य नष्ट करूँगा।' इस प्रकार क्रुद्ध होते हुए अन्तर्ध्यान हो गये। उस समय समस्त ब्रह्मादि देवगण उस स्थान पर प्रकट होकर इस प्रकार कहने लगे कि हे अंजनिनन्दन ! तुम अमित पराक्रमी बनो और इस वज्र का प्रहार व्यर्थ हो, तथा चिरंजीव हो और हे कपीश्वर वानरराज ! वायुपुत्र ! तुम अपने व्रत के आज से नायक होते हुए राम के समस्त कार्य को सिद्ध करो ॥३८-४१॥ और उन समस्त देवगणों ने इस प्रकार वरदान भी दिया कि तुम्हारे इस पुनीत व्रत को जो करेगा उसके समस्त मनोरथ निश्चय ही सिद्ध होंगे। और भी कहा कि इस व्रत को कार्यार्थी राघव ने भी

न मन्तव्यं वृथा नाथ ! सत्यं मन्तव्यमीश्वर ! ।
रोचते यदि त्वच्चित्ते तत्कुरुष्वार्थसिद्धये ॥४४॥
इत्युक्त्वा संस्थिते तस्मिन् तदा सङ्क्रमते हठात् ।
आकाशवाणी तत्रोच्चैर्यदुक्तं सत्यमेव तत् ॥४५॥
इति रामः प्रसन्नश्च श्रुत्वा गगनभाषितम् ।
चिकीर्षया व्रतस्याऽस्य हनुमन्तमथाऽब्रवीत् ।४६॥
हनुमन् ! को विधिस्तस्य कदा कर्तव्यमेव तत् ? ।
ब्रूहीति वचनं श्रुत्वा प्रत्युवाच मरुत्सुतः ॥४७॥
मार्गशीर्षे सिते पक्षे त्रयोदश्यां जयप्रदे ।
अभिजिन्निकटे काले त्रयोदशघटीयुते ।४८॥
त्रयोदशग्रन्थियुतं दोरकं कलशे स्थितम् ।
हरिद्राभं ततस्तत्र मामावाह्य प्रपूजयेत् ॥४९॥

किया था। अतः हे स्वामी ! देवताओं ने मुझसे ही कहा है कि तुम राम के समस्त कार्य सिद्ध करो। हे नाथ ! इस व्रत को आप व्यर्थ न समझें, अपितु सत्य ही मानें। हे प्रभु ! यदि आपके मनमें अपनी कार्य-सिद्धि अभीष्ट हो तो आप इस व्रत को अवश्य कीजिए। हनुमान्‌जीके इस प्रकार कहने के पश्चात् उच्च स्वर से आकाशवाणी हुई कि 'हनुमान् जी ने जो भी कहा वह सत्य है।' ऐसी आकाशवाणी सुन भगवान् राम ने अत्यन्त प्रसन्न हो इस व्रत को करने की इच्छा से पुनः हनुमान् जी से इस प्रकारकहा ॥४२-४६॥ हे हनूमान् ! इस व्रत का विधान तथा किस समय इस व्रतको करना चाहिए इसे बताने की कृपा करें। भगवान् राम के उपर्युक्त वचन को सुनकर मारुतिनन्दन हनुमान् ने इस प्रकार कहा ॥४७॥ मार्गशीर्ष (अगहन) शुक्लपक्ष त्रयोदशी यदि तेरह घड़ी युक्त हो तथा शुभकारी अभिजित् नक्षत्र भी हो, तो उस दिन तेरह गाँठ

पीतगन्धं पीतपुष्पं पीतद्रव्यं विशेषतः ।
'नमो भगवते वायुनन्दनाये'ति मन्त्रतः ॥ ५० ॥
ॐकारेणाऽनेन पूजां कुर्यात् षोडशयत्नतः ।
सोपचारं ब्राह्मणाय दद्याद् वायनमुत्तमम् ॥ ५१ ॥
त्रयोदशाऽपूपमात्रं गोधूमान्नं प्रदापयेत् ।
स-दक्षिणं स-ताम्बूलं ब्राह्मणान् भोजयेत् तदा ॥ ५२ ॥
प्रारम्भे त्वस्य कार्याणि सिद्धयन्त्येव न संशयः ।
तावत् कर्तव्यमेतद् वै यत्नतश्च त्रयोदश ॥ ५३ ॥
उद्यापनं यथान्यायं कुर्यात् कलशवस्त्रकैः ।
सम्पूर्णमपि चेत्युक्तमित्युक्त्वा विरराम ह ॥ ५४ ॥
रामोऽपि सह सुग्रीवः सानुजस्तच्चकार ह ।
कार्यसिद्धिरभूत्तस्य सुग्रीवश्च विभीषणः ॥ ५५ ॥

युक्त पीले डोरे को कलश में रखकर 'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाय' इस मन्त्रसे आवाहन कर, पीले गन्ध, पुष्प एवं अन्यान्य पूजन सामग्री से मेरा पूजन करे ॥४८-५०॥

साधक को चाहिए कि ॐकार पूर्वक मन्त्र द्वारा षोडशोपचार से पूजन करे। गेहूँ के आटे का तथा तेरह मालपूआ, ताम्बूल और दक्षिणा सहित वायन (छितनी) में रखकर ब्राह्मण को दे, एवं यथेष्ट भोजन भी करावे ॥५१-५२॥ हनुमद्-व्रत के आरम्भ में इस प्रकार करने से निःसन्देह साधक के समस्त कार्य सिद्ध होते हैं। जब तक तेरह वर्ष पूर्ण न हो तबतक इस व्रतको प्रयत्नपूर्वक करे। तेरह वर्ष के बाद कलश, वस्त्रआदि द्वारा विधि-विधान से इस व्रत के उद्यापन करने से यह व्रत पूर्ण होता है। इस प्रकार हनुमान् जी ने भगवान् रामचन्द्र से कहा ॥५३-५४॥ लक्ष्मण, विभीषण एवं सुग्रीव के साथ राम ने भी इस

विभीषणादि-रामोक्तं व्रतं कृत्वा यथोदितम् ।
तदाप्रभृति लोकेऽस्मिन् विश्रुतं हनुमद्व्रतम् ॥ ५६ ॥
भवेत् सहायो हनुमान् कृते तस्य व्रते शुभे ।
तस्मात् त्वयाऽपि कर्त्तव्यं व्रतमेतन्नृपोत्तम ! ॥ ५७ ॥
मासानां मार्गशीर्षोऽहमित्युक्तं स्वामिना स्वयम् ।
तस्मात्त्वमपि तत्कृत्वा लब्धराज्यो भविष्यसि ॥ ५८ ॥
इत्याकर्ण्य वचस्तस्य सर्वेऽपि मुदमाययुः ।
अथ सायमभूत्तत्र सूर्ये [1]वाराशिमागते ॥ ५९ ॥
नीत्वा रात्रिं ततः प्रात उत्थाय तपसः सुतः ।
व्यासस्य पुरतश्चक्रे व्रतमेतत् सुविस्तरम् ॥ ६० ॥

व्रतको किया, जिससे उनसभी की कार्य-सिद्धि हुई॥५५॥ जबसे विभीषण और राम आदिने इस व्रत को किया तभी से इस लोक में इस व्रत का प्रचार हुआ ॥५६॥ हे युधिष्ठिर ! इस व्रत के करने वाले प्राणी की सहायता हनुमान्‌जी स्वयं करते हैं। अतः यह व्रत तुम्हें भी अवश्य करना चाहिए ॥५७॥ भगवान् ने गीता में 'मासानां मार्गशीर्षोऽहं' कहकर इस मासकी विशिष्टता स्वयं प्रकट की है, अतः इसी मास में यदि तुम भी व्रत को करो तो निश्चित ही नष्ट राज्य तुम्हें पुनः प्राप्त हो जायेगा॥५८॥
इस प्रकार व्यासजी के वाक्य को सुनकर युधिष्ठिर आदि समस्त ऋषिगण अतीव हर्षित हुए। तत्पश्चात् सभी लोगों ने समुद्र तट पर सायं-काल में पहुँचकर वहाँ रात्रि व्यतीत की। उसके बाद प्रातःकाल उठकर धर्मराजपुत्र युधिष्ठिरने व्यासजी के समक्ष यह व्रत तथा पायस, घृतयुक्त

१. वाराशि = जलराशि, समुद्रमित्यर्थः ।

उद्यापनं तथा होमः स-घृतं पायसैः शुभैः ।
मूलमन्त्रोक्तसूक्तेन व्रताङ्गमकरोत्ततः ॥ ६१ ॥
साक्षाद्धनुमतः पूजा पाञ्चाल्या सह कल्पिता ।
अथ संवत्सरेऽतीते पाण्डवो राज्यमाययौ ॥ ६२ ॥
तस्मात् कुरुध्वं मुनयो व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
इति कृत्वा भवन्तश्च प्राप्ताभीष्टमनोरथाः ॥ ६३ ॥
तेऽपि चक्रुर्यथान्यायं व्रतमेतत् सुमङ्गलम् ।
इति श्रीहनुमत्कल्पं लिखितं यस्य वेश्मनि ॥ ६४ ॥
कृते व्रते च यत्पुण्यं तत्पुण्यं फलमश्नुते ।
पठते यो हनुमतः कल्पं यः शृणुयान्नरः ॥ ६५ ॥
वाचयेद् यस्तु सद्भक्त्या स सम्पूर्णमनोरथः ।

हवि आदि से होम करते हुए मूलमन्त्र 'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाय' द्वारा व्रत के अंगभूत हनुमान्‌जी का पूजन एवं उद्यापन, द्रौपदी के साथ किया। इस प्रकार इस व्रत के करने से वर्ष के भीतर ही युधिष्ठिर ने अपना राज्य पुनः प्राप्त किया ॥५९-६२॥ हे ऋषिगण! आपसभी इस उत्तमव्रतको करें। जिस व्रत को करने से आप सभी के अभीष्ट-मनोरथ सिद्ध होंगे। पश्चात् उन महर्षियों ने भी विधि-विधान से परम मांगलिक इस हनुमद्व्रत को किया।

हे ऋषिगण! जिसके घर में यह हनुमत्कल्प ग्रन्थ रहता है, उसको वही समस्त पुण्य फल प्राप्त होता है, जो कि इस व्रत को करने वाले पुण्यफल प्राप्त करते हैं। जो इस हनुमत्कल्प का पाठ करता है तथा श्रवण करता है या अत्यन्त श्रद्धा-भक्ति पूर्वक सुनाता है, उन सभी के समस्त मनोरथ पूर्ण होते हैं ॥ ६३–६५½ ॥

फलश्रुतिः

वेदविद् ब्राह्मणः श्रीमान् क्षत्रियोऽमितविक्रमः ॥ ६६ ॥
वैश्योऽपि च धनाध्यक्षः शूद्रः कृषिमहाधनः ।
रोगार्तो मुच्यते रोगात् सुतार्थी लभते सुतान् ॥ ६७ ॥
मोक्षार्थी लभते मोक्षं धनार्थी लभते धनम् ।
इदं व्रतं नरः कृत्वा साङ्गोपाङ्गं हनूमतः ॥ ६८ ॥
'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाये'ति मन्त्रतः ॥ ६९ ॥
अभिमन्त्र्य त्रिवारं यो गन्धं हस्तन लेपयेत् ।
ललाटे धारयेद् यस्तु तस्य लोको वशी भवेत् ॥ ७० ॥
धृत्वा ललाटे तिलकं यो राजगृहमन्वगात् ।
नृपतिस्तस्य वशगः प्रत्यहं जायते ध्रुवम् ॥ ७१ ॥
हनूमन्तं स्मरन् नाम प्रयाणं यदि गच्छति ।

फलश्रुति - इस व्रत को करने वाले ब्राह्मण वेदज्ञ, क्षत्रिय श्रीमान् तथा अतुल पराक्रमी, वैश्य कुबेर के समान धनवान् एवं शूद्र बहुत बड़ा धनी एवं खेती वाला होता है। उसी प्रकार रोग पीड़ित प्राणी रोग से मुक्त होता है, तथा पुत्रार्थी पुत्र प्राप्त करता है और मोक्षार्थी मोक्ष एवं धनार्थी धन को प्राप्त करता है। सांगोपांग हनुमान् का पूजन कर, 'ॐ नमो भगवते वायुनन्दनाय' इस मन्त्र से तीन बार अभिमन्त्रित गन्ध को हाथसे जो मनुष्य अपने मस्तकपर लगाता है उस मनुष्य के वश में सभी लोग हो जाते हैं ॥६५½-७०॥

जो मनुष्य इस प्रकार अपने ललाट में तिलक लगाकर राजगृह में जाता है उसको देखकर राजा उसके वशमें अवश्य हो जाता है ॥७१॥ इसी प्रकार जो व्यक्ति घरसे निकलते समय हनुमान्‌जी का स्मरण कर

सर्वत्र विजयी भूत्वा पुनरागच्छति ध्रुवम् ॥७२॥
हनुमत्-कल्पमेतत् तु भक्तियुक्तः करोति यः ।
राजद्वारे च युद्धे च सभायां व्यावहारिके ॥७३॥
हुताशने च पवने व्याघ्र-सिंह-भयेषु च ।
समस्तकार्योद्योगे च सर्वत्र विजयी भवेत् ॥७४॥
त्रयोदशग्रन्थियुक्तं व्रतदोरं हनूमतः ।
धारयेद् यः कण्ठमूले दक्षिणेऽप्यथवा करे ।७५॥
तस्य सर्वाऽभीष्टसिद्धिर्भवत्येव न संशयः ।
ब्राह्मण-क्षत्रिय-विशां शूद्रादीनां च सर्वशः ॥७६॥
व्रतं सम्पत्करं शीघ्रं स्त्रीणां चैव विशेषतः ।
सत्यं सत्यं पुनः सत्य व्रतमेतद् विधानतः ॥७७॥

नमस्ते नमस्ते महावायुसूनो !
नमस्ते नमस्ते भविष्यद् विधातः ।

जाता है वह निश्चय ही विजय प्राप्त कर पुनः लौट आता है ॥७२॥ जो इस हनुमत्-कल्प का श्रद्धा-भक्ति से पाठ करता है वह राजद्वार, युद्ध, सभा, व्यवहार, अग्नि, आँधी, व्याघ्र तथा सिंह आदि के भय एवं समस्त कार्य और उद्योग में विजयी होता है ॥७३-७४॥ तेरह गाँठ वाले हनुमद्व्रत के डोरे को कण्ठ अथवा दाहिने हाथ में जो मनुष्य धारण करता है, उसकी निःसन्देह समस्त अभीष्ट सिद्धि प्राप्त होती है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा विशेषकर स्त्रियों के लिए यह हनुमद्व्रत समस्त सम्पत्ति को तत्क्षण देने वाला है। इस व्रत को जो भी विधि-विधान पूर्वक करता है। उसके समस्त कार्य सत्य (निश्चित) ही सिद्ध होते

नमस्ते नमस्ते सदाऽभीष्टदात-
र्नमस्ते नमस्तेऽनिशं रामभक्त ! ॥७८॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत-हनुमद् - रहस्ये भविष्योत्तरपुराणे व्यासप्रोक्त-हनुमद्-व्रतकथा समाप्ता ।

*

हनुमल्लक्ष-प्रदक्षिणा-विधानम्

युधिष्ठिर उवाच

भगवन् ! ज्ञानिनां श्रेष्ठ ! सर्वविद्याविशारद ! ।
किञ्चिद् विज्ञप्तुमिच्छामि वक्तुमर्हस्यशेषतः ॥ १ ॥
अज्ञानादथवा ज्ञानात् प्रमादाद् वा कृतानि हि ।
पापानि सुबहून्यत्र विलयं यान्ति तद् वद ! ॥ २ ॥

व्यास उवाच

लक्षप्रदक्षिणा कार्या गोऽग्नि-द्विज-हनूमताम् ।
पृच्छते नारदायेति प्राह ब्रह्मा शृणुष्व तत् ॥ ३ ॥

हैं ॥७५-७७॥ हे वायुपुत्र ! भविष्य के निर्माण करने वाले, अपने भक्तों को अभीष्ट वर प्रदान करने वाले तथा निरन्तर राम की सेवा में तत्पर ऐसे आपको बारम्बार नमस्कार है ॥७८॥

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रिकृत 'शिवदत्ती' हिन्दी व्याख्या सहित हनुमद्-रहस्य में भविष्योत्तरपुराणस्थित व्यासविरचित हनुमद्-व्रत-कथा समाप्त ।

नारद उवाच

ये च पापरता नित्यं धर्माऽधर्म-विवर्जिताः ।
व्रतहीना दुराचारा ज्ञानहीनाश्च जन्तवः ॥ ४ ॥
तेषां पापविनाशार्थं प्रायश्चित्तं कथं भवेत् ? ।

ब्रह्मोवाच

किं वर्णयामि साधूनां माहात्म्यं च भवादृशाम् ॥ ५ ॥
साधु साधु च विप्रेन्द्र ! वच्मि ते व्रतमुत्तमम् ।
ब्रह्महत्यादिपापेषु सङ्कलीकरणेषु च ॥ ६ ॥
जातिभ्रंशकरे वाऽपि अभक्ष्य-भक्षणे तथा ।
विष्णुना निर्मितं पूर्वं व्रतं लक्षप्रदक्षिणम् ॥ ७ ॥
सर्वेषामपि पापानां नाशकं परमं शुभम् ।
आषाढे शुक्लपक्षे तु एकादश्यां विशेषतः ॥ ८ ॥
द्वादश्यां पौर्णमास्यां वा प्रारभेद् व्रतमुत्तमम् ।
देशकालौ तु सङ्कीर्त्य नत्वा गुरु-विनायकौ ॥ ९ ॥
लक्षप्रदक्षिणाः कार्या त्रीनग्नींश्च शुचिव्रत ।
जितेन्द्रियो जितप्राणो मुखेन मनुमुच्चरेत् ॥१०॥
नमस्ते गार्हपत्याय नमस्ते दक्षिणाग्नये ।
नम आहवनीयाय महावेद्यै नमो नमः ॥११॥
गवां प्रदक्षिणाः कार्या लक्षसंख्या यथाविधि ।
पूर्वं पूज्य च गामेकां दत्वा नैवेद्यमुत्तमम् ॥१२॥
पश्चात् प्रदक्षिणाः कार्या नत्वा तां च पुनः पुनः ।
गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश ॥१३॥

यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिह लोके परत्र च।
एवं प्रदक्षिणाः कृत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥१४॥
कर्मनिष्ठं शुचिं विप्रं पूजयेद् विधिवत् बुधः।
ततः प्रदक्षिणाः कार्या यावल्लक्षं भवेद् व्रती ॥१५॥
भूमिदेव ! नमस्तुभ्यं नमस्ते ब्रह्मरूपिणे।
पूजितो देवदैत्यैस्त्वमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥१६॥
एवं हनुमते कार्या भूत-प्रेतविनाशिने।
षोडशैरुपचारैश्च पूजयेद् वायुनन्दनम् ॥१७॥
ततः प्रदक्षिणाः कुर्यादात्मकार्यार्थसिद्धये ॥१८॥
मनोजवं मारुत-तुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥१९॥
एवं प्रदक्षिणावर्तं कुर्याद् देवं प्रयत्नतः।
भूत-प्रेत-पिशाचाद्या विनश्यन्ति न संशयः ॥२०॥
आदित्यादिग्रहाः सर्वे शान्तिं यान्ति शिवाज्ञया।
उद्यापनं च सर्वासां कुर्यात् पूर्णफलाप्तये ॥२१॥
उद्यापन-विधानादौ पुण्याहं वाचयेत्ततः।
आचार्यं वरयित्वा च प्रतिमाः स्वर्णसम्भवाः ॥२२॥
अव्रणं कलशं पूर्णं स्थापयेन्मण्डले शुभे।
विरच्य लिङ्गतोभद्रं पूजयेद् देवमञ्जसा ॥२३॥
पायसं जुहुयात्तत्र तत्तन्मन्त्रैर्विचक्षणः।
अष्टोत्तरसहस्रं तु प्रायश्चित्तं चरेच्छुभम् ॥२४॥

मण्डलं दक्षिणायुक्तमाचार्याय निवेदयेत् ।
ब्राह्मणान् भोजयेच्छक्त्या वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥२५॥
ये कुर्वन्ति व्रतमिदं पापमुक्ता भवन्ति ते ।
भुक्त्वा यथेप्सितान् भोगानन्ते सायुज्यमाप्नुयुः ॥२६॥

अथ प्रयोगः

'देशकालौ स्मृत्वा, मम भूत-प्रेत-पिशाचादि-बाधा-परिहार-द्वारा आदित्यादि-नवग्रहशान्ति-द्वारा वा श्रीमन्महारुद्र-हनुमत्प्रीत्यर्थममुकसंख्याप्रदक्षिणां करिष्ये', इति संकल्प्य, षोडशोपचारैर्हनुमन्तं पूजयित्वा प्रदक्षिणाः कार्याः ।

तत्र मन्त्रः

मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥

इति मन्त्रं पठन्, प्रदक्षिणाः प्रतिदिनं नियमानुसारं कृत्वा, उत्तरपूजां कृत्वा प्रार्थयेत् ।

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष मां परमेश्वर ! ॥ १ ॥
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर ! ।
यत्पूजितं मया देव ! परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ २ ॥

इति क्षमाप्य, अनेनाऽमुकसंख्याप्रदक्षिणाख्येन कर्मणा श्रीहनुमद्देवता प्रीयताम् ।

इति हनुमद्-रहस्ये बृहज्ज्योतिषार्णवस्थ-हनुमदुपासनाध्याये लक्षप्रदक्षिणाविधानं समाप्तम् ।

*

हनुमद्-दीपदान-विधिः

उक्तं च सुदर्शनसंहितायाम्—

अथाऽतः संप्रवक्ष्यामि दीपदानं हनूमतः ।
येन विज्ञानमात्रेण सिद्धो भवति साधकः ॥ १ ॥
दीपदानप्रमाणं तु सावधानादिदं शृणु ।
प्रमाणं तं तु वक्ष्यामि पञ्चमानमनुक्रमात् ॥ २ ॥
स्थानं भेदं च मन्त्रं च दीपदाने मनुं पृथक् ।
पुष्पवासिततैलं च सर्वकामफलप्रदम् ॥ ३ ॥
तिलतैलं श्रियो हेतुः पृथिकागमनाय च ।
अतसीतैलमुद्दिष्टं यशःकर्मणि निश्चितम् ॥ ४ ॥
सार्षपं रोगनाशाय सर्वव्याधिविनाशकम् ।
मारणे राजिकाजातं तथा वैभीतकादिकम् ॥ ५ ॥
उच्चाटे च करञ्जोत्थं विद्वेषे मधुवृक्षजम् ।
अलाभे सर्वतैलं च तिलतैलमनुत्तमम् ॥ ६ ॥
गोधूमं च तिलं माषं मुद्गं वै तण्डुलं क्रमात् ।
पञ्चधान्यमिदं प्रोक्तं नित्य दीप उदाहृतम् ॥ ७ ॥
पञ्चधान्यसमुद्भूत-पिष्टपात्रं सुशोभनम् ।
सर्वकाममिदं प्रोक्तं सर्वदा दीपदापने ॥ ८ ॥
वश्ये तण्डुलपिष्टं च मारणे माषपिष्टकम् ।
उच्चाटने तिलं कृष्णं यवपिष्टं प्रकीर्तितम् ॥ ९ ॥
पान्थस्यागमने प्रोक्तं गोधूमोत्थं स-तण्डुलम् ।
मोहने तण्डुलं पिष्टमाकर्षे मुद्गपिष्टकम् ॥१०॥

संग्रामे केवलं माषं कृत्वा दीपं च पात्रके ।
सन्धौ त्रिपलजं प्रोक्तं लक्ष्मीः कस्तूरिका मता ॥११॥
एला- लवङ्ग - कर्पूर - मृगनाभि-सुसंयुता ।
कन्यकावरणे राजवश्ये सर्वं तथैव च ॥१२॥
अलाभे सर्ववस्तूनां पञ्चधान्यं परं मतम् ।
अष्टमुष्टि भवेत् किञ्चित् किञ्चित् पिष्टं तु पुष्कलम् ॥१३॥
पञ्च सप्त तथा रौद्रं प्रमाणं च यथाक्रमम् ।
सुगन्धं नैव मानं स्याद्यथारुचि समं मतम् ॥१४॥
नित्यदीपः प्रकर्त्तव्यस्ताम्रपात्रे हनूमतः ।
सोमवारे तथा ध्यात्वा जलाप्लावं च कारयेत् ॥१५॥
पश्चात् प्रमाणतो ग्राह्यं क्रमशो हस्तमानकम् ।
तत् पिष्टं शुद्धपात्रे तु नदीतोयेन शोधितम् ॥१६॥
दीपपात्रं ततः कुर्याच्छुद्धो नियतमानसः ।
दीपे पात्रे योज्यमाने मारुतेः कवचं पठेत् ॥१७॥

इति पात्रविधिः ।

मालानूनाश्च ये वर्णाः साध्यनामसमन्विताः ।
वर्तिकायाः प्रकर्तव्यास्तन्तवस्तत्प्रमाणतः ॥१८॥
त्रिंशांशेनैव सा रम्या गुरुकार्येऽखिले मता ।
कूटतुल्या स्मृता नित्या सामान्याऽथ विशेषतः ॥१९॥
रुद्रकूटगुणा प्रोक्ता न पात्रं च विचालयेत् ।
एकविंशति-संख्याकास्तन्तवो निर्मला मताः ॥२०॥

रक्तसूत्रं हनुमतो दीपदाने प्रकीर्तितम् ।
कृष्णमुच्चाटने प्रोक्तं द्वेषमारणकर्मणि ॥२१॥
कट्टतुल्यपलं तैलं गुरुकार्येऽष्टसंगुणम् ।
नित्ये पञ्चपलं प्रोक्तमथवा मनसो रुचिः ॥२२॥
हनुमत्प्रतिमायास्तु सन्निधौ दीपदापनम् ।
प्रतिमा दीपसहिता ग्रह-भूतग्रहेषु च ॥२३॥
चतुष्पथे तथा प्रोक्तं दीपदानमनन्तरम् ।
सन्निधौ स्फाटिके लिङ्गे शालग्रामस्य सन्निधौ ॥२४॥
नानाभोगाश्रयं प्रोक्तं दीपदानं हनूमतः ।
गणेशसन्निधौ विष्णोर्महासङ्कटनाशनम् ॥२५॥
विष-व्याधि-महाघोरे हनुमत्-सन्निधौ कुरु ।
दुर्गायाः सन्निधौ प्रोक्तं संग्रामे घोरसङ्कटे ॥२६॥
द्यूते वृष्टिस्थले चैव विशेषान् मारणे तथा ।
व्याधिनाशे तुण्डबन्धे दुष्टदृष्टौ तथैव च ॥२७॥
राजद्वारे बन्धमुक्तौ गुरुकार्ये प्रयत्नतः ।
गजस्य मस्तके चैव राज्यलक्ष्मीसमृद्धये ॥२८॥
स्त्रीवशीकरणे दीपो वापीतीरे सरोवरे ।
विप्र-क्षत्रिय-विट्-शूद्रवश्ये विप्रालये शुभम् ॥२९॥
जपे पूर्वमुखः कार्य उच्चाटे वायवः स्मृतः ।
सर्ववश्ये च कर्त्तव्यो दीपो याम्यादिशामुखः ॥३०॥
मारणे भेदकार्ये च कर्तव्यो राक्षसीमुखः ।
शान्तिके पौष्टिके सन्धौ कन्यापुत्राप्तये तथा ॥३१॥

अभिचारार्थसिद्ध्यर्थे दीपः कार्यो जलाश्रितः ।
स्तम्भने भूतदमने शाकिनीनां च विग्रहे ॥३२॥
व्यन्तराणां च यक्षाणां पवनाभिमुखं कुरु ।
धानेशो धन-धान्यादि राज्यलक्ष्मीसमृद्धये ॥३३॥
दीपः कार्यो महायोगे पान्थस्यागमनाय च ।
ईशानाभिमुखः कार्यः सर्वऋद्धिविवृद्धये ॥३४॥
सर्वेषु गुरुकार्येषु राजपत्नीवशे तथा ।
वृष्टेः समागमार्थाय देशस्योत्सादनाय च ॥३५॥
देवतासम्मुखः कार्यो दीपः शून्ये प्रकल्पयेत् ।
वृष्टि-वृक्षादि-निष्पत्तौ दुर्गे तोयप्रशोषणे ॥३६॥
विवरादि-प्रवेशेषु भूमिस्थ-धनकर्षणे ।
गण्डभेदेषु सर्वेषु शृङ्खलाबन्धमोचने ॥३७॥
खातं कृत्वा करोन्मानं चतुरस्रं सुशोभनम् ।
तन्मध्ये स्थापयेद् दीपं दक्षिणाभिमुखं तथा ॥३८॥
पात्रधारणयन्त्र तु विशेषेण निशामय ।
स्वर्णरूपोद्भवं ताम्रं त्रपुलोहोद्भवं तथा ॥३९॥
नागपात्रं विशेषेण वश्यादिषु च कर्मसु ।
पात्राधारे तु षट्कोणे तथा बीजानि विन्यसेत् ॥४०॥
हौं हौं हौं हां फ्रें हौं क्रमात् ।
अग्निकोणं समाश्रित्य कोणे कोणे यथाक्रमम् ।
मध्ये हनुमद्-गायत्रीं तां शृणुष्व षडानन ॥४१॥

रामदूताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि ।
तन्नो हनुमान् प्रचोदयात् ॥

ततो मन्त्रेण दीपपात्रं वेष्टयेत् ।

'ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं वज्रतुण्डकाय लङ्कश्वरवधाय महासेतुबन्धाय महाशैलप्रवाह-गगनेचर एह्येहि भगवन् महाबल-पराक्रम-भैरवायाऽऽज्ञा एह्येहि महारौद्र दीर्घपुच्छेन वेष्टय वैरिणो भञ्जय भञ्जय हुँ फट्' इति मन्त्रं समुच्चार्य, ब्रह्मचर्यंजप जपेत् ।

पञ्चाशदधिकं पात्रे यन्त्रं मन्त्रेण वेष्टयेत् ।
छुरिका अग्रतः स्थाप्या करवीरैश्च पूजयेत् ॥४२॥
अथ मन्त्रं प्रवक्ष्यामि मन्त्रेण च प्रपूजयेत् ।

ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रैं ह्रौं ह्रैं फ्रें हनुमान् प्रकटपराक्रम आक्रान्त-दिङ्मण्डल-यशोधवलीकृत-जगत्त्रितय वज्रदेह ज्वलत्सूर्य-कोटिसप्रभ तनुरुद्रावतार लङ्कापुरदन उदधिलंघन-दशग्रीवशिरःकृतान्त सीताश्वासनिवारक वायुसुत अञ्जनिगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर-कपिसैन्यप्राकार-सुग्रीवसख्यकारण - बलिनिबर्हण द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकास्यच्छेदन वनरक्षाकार-समूहभञ्जन ब्रह्मास्त्र-ब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदन लक्ष्मणशक्तिभेदननिवारण शिशुसमानपीनबालादित्य-सानुग्रसन मेघनादहोमविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षक-राक्षसविदारण कुम्भकर्णादि-वधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर व्योमद्रुमोल्लंघन-महासामर्थ्य-महातेजःपुञ्जविराजमान स्वामि-वचनसम्पादित-अर्जुनसयुगसहाय, कुमार-ब्रह्मचारी गम्भीरस्वर

दक्षिणांशमार्तण्ड-मेरुपर्वतोत्पाटकचरण, सर्वदुष्टनिबर्हण-व्याघ्रादिभयनिवारण-सर्वशत्रुच्छेदनसमपरस्य त्रिभुवन-स्त्री-पुं-नपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय वशय, ममाज्ञाकारं सम्पादय सम्पादय नानानामधेयान् राज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु, सर्ववश्य-अविषाणविध्वंसय विध्वंसय प्रबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय संकार्यादिनादिति साधय साधय सर्वदुर्जनानां मुखानि स्तम्भय कीलय घेघेघे हाहाहा हुंहुंहुं फट् स्वाहा ।

मन्त्रमेतत् पठेन्नित्यं यावद् दीपं समापयेत् ।
दीपाग्रे पठमानस्तु मनोवांछितमाप्नुयात् ॥४३॥

विधिः

भूमिशायी नक्तभोजी वर्णमाला समन्वितः ।
कपीश्वरं स्मरेन्नित्यमेकविंशतिवासरान् ॥४४॥
प्रमाण दीपकरणे कार्यसिद्धिः प्रजायते ।
शकुनान् संप्रवक्ष्यामि आगमोक्तप्रमाणकान् ॥४५॥
कार्पासं रसकुम्भं च विद्धाङ्गं चाऽङ्गवर्जितम् ।
अधिकाङ्गं दुष्टबुद्धिं दृष्ट्वा कार्यं न जायते ॥४६॥
सुवासिनीं सुपुरुषं फलं गां वत्ससंयुताम् ।
तुरङ्गं गजखङ्गं च दृष्ट्वा बाद्यं सुखप्रदम् ॥४७॥
एवं दीपविधानं च मयोक्तं ते विशेषतः ।
हिताय जगतां पुत्र ! तत्क्षणात् सिद्धिकारकम् ॥४८॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देयं कृत्वा परीक्षणम् ।
देवानां च यथा विष्णुर्नदीनां जाह्नवी तथा ॥४९॥

तक्षकः सर्वनागानां धेनूनां कामधुक् तथा ।
तथा सुदर्शन चेयं संहिता परिकीर्तिता ॥५०॥
विष्णुभक्ताय शान्ताय कान्ताय वशवर्तिने ।
सुभक्ताय सुशिष्याय व्रतज्ञाय प्रकाशयेत् ॥५१॥
यथा माहिष्मतीनाथस्तथा वायुसुतः स्मृतः ।
उभयोरन्तरं नास्ति कृत्वा पापमवाप्नुयात् ॥५२॥

इति पण्डित-श्रीशिवदत्तमिश्राशास्त्रि-विरचिते हनुमद्-रहस्ये सुदर्शनसंहितोक्ता हनुमद्-दीपदानविधिः समाप्ता ।



हनुमत्-अनुष्ठान-विधानम्

१. हनुमान् चालीसा का पाठ—

हनुमान्जी के मन्दिर, पीपलवृक्ष तथा घर में ही स्नान आदि नित्य क्रिया से निवृत्त हो, कुशासन या ऊर्णासन पर पूर्वाभिमुख बैठकर, धूप, दीप जलाकर हनुमान्जी का मानसिक ध्यान करता हुआ, शीघ्र फल-दायक प्रसिद्ध हनुमान्-चालीसा का सौ पाठ करने से मुकदमे में विजय अवश्य प्राप्त होती है ।

२. समस्त कार्यों में सिद्धि दायक मन्त्र —

दीनानुबन्धि मेधावि प्रेमाऽब्धि रामवल्लभ ! ।
यद्येयं मारुते वीर ! मेऽभीष्टं देहि सत्त्वरम् ॥

इस मन्त्र का पूर्वोक्त विधान से एक लाख जप, उसका दशांश हवन तथा हवन का दशांश तर्पण, तर्पण का दशांश मार्जन एवं मार्जन का दशांश ब्राह्मण-भोजन कराने से निश्चित ही समस्त कार्य सिद्ध हाते हैं ।

३. शत्रु आदि पर विजय प्राप्त करने का विधान—

पीपल वृक्ष के नीचे अथवा हनुमान्‌जी के मन्दिर में हनुमान्‌जी का विधि-विधान पूर्वक पूजन कर, शत्रुंजय हनुमत्-स्तोत्र का प्रतिदिन बारह, पन्द्रह या इक्कीस पाठ, इकतीस दिन तक नियमपूर्वक करने से निश्चय ही हनुमान्‌जी की कृपा से समस्त शत्रु नष्ट होते हैं।

४. भयंकर आपत्ति नष्ट करने का मन्त्र—

त्वमस्मिन् कार्यनिर्वाहे प्रमाणं हरिसत्तम !।
तस्य चिन्तयतो यत्नो दुःखक्षयकरो भवेत् ॥

(अथवा)

आपदामपहर्तारं दातारं सर्वसम्पदाम्।
लोकाभिरामं श्रीरामं भूयो भूयो नमाम्यहम् ॥

पूर्वाभिमुख बैठकर पीपल वृक्ष या हनुमान् जी के मन्दिर अथवा गृह में ही स-विधि हनुमत्-पूजन कर इन दोनों में किसी एक मन्त्र की एक माला या सत्ताईस बार तथा अशक्ति में ग्यारह बार भी एक मास पर्यन्त पाठ करने से समस्त आपत्तियाँ नष्ट होती हैं।

५. हनुमत् सहस्रनाम-प्रदक्षिणा विधान—

जो व्यक्ति श्री हनुमान्‌जी का विधिवत् पूजन कर, उनकी तथा पीपल वृक्ष की मंगलवार या शनिवार को हनुमत् सहस्रनामस्तोत्र का पाठ करते हुए एक सौ आठ, हजार अथवा एक लाख प्रदक्षिणा करता है, या ब्राह्मणों द्वारा कराता है, उसके समस्त कष्ट नष्ट होते हैं तथा निःसन्देह उसे सभी सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं और संग्राम में शत्रुओं का विनाश, एवं ज्वर, मृगी रोग, वायुगोला, प्लीहा (बरवट) आदि सभी भयंकर रोग नष्ट होते हैं। यदि सहस्र नाम पाठ करने में असमर्थ हो तो हनुमान् चालीसा से ही प्रदक्षिणा द्वारा ऊपर कहे हुए समस्त कार्य सिद्ध होते हैं, यह अनुभूत प्रयोग है।

६. गुदभ्रंश निवारक (काँच निकलने का) अनुभूत प्रयोग—

मंगलवार के दिन रोगी को कमर में हनुमान्‌जी का नाम लेकर गुँदी वृक्ष की जड़ को बाँधने से उपर्युक्त रोग निश्चित ही शान्त होता है। यदि लाभ हो जाय तो भक्तराज हनुमान्‌जी को शुद्ध घी में सिन्दूर मिलाकर लगावे। पुनः उनका विधिवत् पूजन करना चाहिए।

७. सभी रोगों के झाड़ने का मन्त्र—

(१) ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रं ह्स्फ्रें ह्स्फ्रें ह्सौं ह्सौं ॐ नमो हनुमते मम परस्य च क्षय-कुष्ठ-गण्डमाला-स्फोटकं क्षतज्वर-मैकाहिकं द्व्याहिकं त्र्याहिकं चातुर्थिकं सन्ततज्वरं सान्निपातिक-ज्वरं भूतज्वर मन्त्रज्वर-शूल-भगन्दर-मूलकृच्छ-कपालशूल-कर्णशूला-ऽक्षिशूलोदरशूल - हस्तशूल-पादशूलादीन् सर्वव्याधीन् क्षणेन भिन्धि भिन्धि छिन्धि छिन्धि नाशय नाशय निकृन्तय निकृन्तय छेदय छेदय भेदय भेदय महावीर हनुमन् ह्रां ह्रां घे घे ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रूं फट् स्वाहा।

शनिवार एवं मंगलवार के दिन हनुमान्‌जी का मानसिक ध्यान कर, चाकू तथा कुशा द्वारा एक सौ सत्तर अक्षर वाले उपर्युक्त मन्त्रसे झाड़ने पर,क्षय, कुष्ठ, कण्ठमाला, एक दिन, दो दिन, तीन-तीन, चार दिन पर आने वाले ज्वर, सन्निपात, भूतज्वर, मन्त्रज्वर, शूल, भगन्दर, मूत्रकृच्छ, अधकपारी, कर्णशूल, अक्षिशूल, उदरशूल, हस्तशूल, पादशूल आदि सभी रोग समूल नष्ट होते हैं।

८. भूत-प्रेत, आदि झाड़ने का मन्त्र—

(२) ॐ ए श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं स्फ्रें ख्फ्रें ह्सौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं ॐ नमो हनुमते महाबलपराक्रम मम परस्य च भूत-प्रेत-पिशाच-शाकिनी - डाकिनी - यक्षिणी-पूतना-मारी-महामारी-कृत्या-यक्ष-

राक्षस भैरव-वेताल-ग्रह-ब्रह्मग्रह-ब्रह्मराक्षसादिकजात-क्रूरबाधान् क्षणेन हन हन जृम्भय जृम्भय निरासय निरासय वारय वारय बन्धय बन्धय नुद नुद सूद सूद धुनु धुनु मोचय मोचय मामेनं च रक्ष रक्ष रक्ष महामाहेश्वर रुद्रावतार हाहाहा हुं हुं हुं हुं हुं हुं घे घे घे हूं फट् स्वाहा।

श्री हनुमान्‌जी का मानसिक ध्यान कर, भूत-प्रेत आदि बाधाग्रस्त रोगी पर एक सौ इकहत्तर अक्षर वाले इस मन्त्र को पढ़ता हुआ सरसों का दाना फेंकने से भूत, प्रेत, पिशाच, डाकिनी, शाकिनी, यक्षिणी, पूतना, मारी, महामारी, कृत्या, यक्ष, राक्षस, भैरव, वेताल, ग्रह, ब्रह्मग्रह तथा राक्षस आदि से उत्पन्न भयंकर क्रूर बाधाएँ तत्क्षण नष्ट हो जाती हैं।

९. सभी प्रकार के भय एवं विष झाड़ने का मन्त्र—

(३) ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते मम परस्य च महाभयानि सर्प-व्याघ्र-तस्कर-जलाग्नि-विष-जङ्गम-स्थावर - सहज-कृत्रिमोपविष-महासंग्रामारण्य-वाद-विवाद-शस्त्रा-ऽस्त्राग्न्यादिकानि संहर संहर विनाशय विनाशय दुःखं संग्रासय संग्रासय त्रोटय त्रोटय भंज भंज भंजय भंजय स्तम्भय स्तम्भय कुण्ठय कुण्ठय मोचय मोचय वानर-ऋक्ष-महावीर मामेनं च रक्ष रक्ष हांहांहां हुं हुं हूं घेघेघे हूं फट् स्वाहा।

एक सौ इकसठ अक्षर वाले हनुमान्‌जी के इस मन्त्र से झाड़ने पर सर्प, व्याघ्र, चोर, जल, अग्नि, विष, जंगम, स्थावर, आकस्मिक (एक-ब-एक) किसी प्रकार की भी औषधि द्वारा उत्पन्न विष, भयंकर संग्राम, अरण्य, वाद-विवाद, अस्त्र-शस्त्र, अग्नि आदि द्वारा उत्पन्न समस्त भय तत्क्षण विनष्ट होते हैं।

१०. समस्त शत्रुओं को नष्ट करने वाला मन्त्र—

(४) ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्फ्रें ह्ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते राक्षसकुल-दावानल-द्वादशार्क-कोटचर्कप्रभज्वलत्-तनूरुह भीमनाद मम परस्य च दुष्ट-दुर्जन-महापकारक-वादि-विवादि-द्वेषकारक - कार्यभञ्जनक-क्रूरप्रकृतिक-प्रवृद्धकोपावेशक-हन्तुकामुकादीन् दूरस्थान् समीपस्थान् भूत-भविष्यद्-वर्तमनान् पुं-स्त्री-नपुंसकांश्चातुर्वर्ण्यान् क्षणेन सत्वरं हन हन दह दह संहारय संहारय मोहय मोहय मर्दय मर्दय द्वेषय द्वेषय मार्जार-मूषक-वत्सद्यः प्राणैर्वियोजय वियोजय विध्वंसय सिध्वंसय हिह्लि-हिल्लि मूकय मूकय जारय जारय बन्धय बन्धय जृम्भय जृम्भय पातय पातय मम परस्य च पादतलाक्रमितान् कुरु कुरु दासीभूतान् सम्पादय सम्पादय हाहाहा हुं हुं हुं घेघेघे ह्रूं फट् स्वाहा।

हनुमान्जी का षोडशोपचार से पूजन कर, दो सौ पैंसठ अक्षरवाले इस मन्त्र का जप करने से समस्त शत्रु अपने-आप नष्ट होते हैं।

११. समस्त राजकुल एवं मन्त्रिकुल शत्रुओं का विनाशक मन्त्र—

(५) ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्फ्रें ह्ख्फ्रें ह्स्रौं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं नमो हनुमते त्रैलोक्याक्रमणपराक्रम श्रीरामभक्त मम परस्य च शत्रूंश्चतुर्वर्णसम्भवान् पुं-स्त्री-नपुंसकान् भूत-भविष्याद्-वर्तमानान् दूरस्थान् समीपस्थान् नानानामधेयान् नानासङ्करजातीयान् कलत्र-पुत्र-मित्र-बन्धु-सुहृत्समेतान् प्रभुशक्तिसहितान धन-धान्यादि-सम्पत्तिसंयुक्तान् राजपुत्रसेवकान् मन्त्रि-सचिव-सखीनात्यन्तिकान् क्षणेन त्वरया एतद्-दिनावधि-नानोपायै-मारय मारय शस्त्रैश्छेदय छेदय अग्निना ज्वालय ज्वालय

दाहय दाहय अक्षकुमारवत्पादतलाक्रमणेन शिलातले आत्रोटय आत्रोटय घातय घातय बन्धय बन्धय भूतसङ्घैः सह भक्षय भक्षय क्रुद्धचेतसा नखैर्विदारय विदारय देशादस्मादुच्चाटय उच्चाटय पिशाचवद् भ्रंशय भ्रंशय भ्रामय भ्रामय भयातुरान् विसंज्ञांस्तान् सद्यः कुरु कुरु भस्मीभूतानुद्धूलय उद्धूलय भक्त-जनवत्सल सीताशोकापहारक सर्वत्र मामेनं च रक्ष रक्ष हांहांहां हुं हुं हुं घेघेघे हूं फट् स्वाहा ।

विधि-विधान से हनुमान्‌जी का पूजन कर तीन सौ इकतालीस वर्ण वाले इस मन्त्र का जप करने से तत्क्षण राजकुल एवं मन्त्रिकुल में उत्पन्न समस्त शत्रुओं का नाश होता है ।

१२. समस्त दुष्टग्रह, ज्वर, विष, आपत्ति, सर्प, व्याघ्रादि भय तथा शत्रुनाशक मन्त्र—

(१) ॐ ऐं श्रीं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्स्ख्फ्रें ह्सौं ॐ नमो हनुमते प्रकटपराक्रम आक्रान्तदिङ्मण्डल यशोवितानधवलीकृत-जगत्त्रितयवज्रदेह ज्वलदग्नि-सूर्यकोटिसमप्रभ-तनूरुह - रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उदधिलंघन दशग्रीवशिरःकृतान्तक सीताश्वासन-वायुसुत अञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्य-प्राकार सुग्रीवसख्यकारण-बालिनिबर्हणकारण द्रोणपर्वतोत्पाटन अशोकवनविदारण अक्षकुमारकच्छेदन वनरक्षाकरसमूहविभञ्जन ब्रह्मास्त्र-ब्रह्मशक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण शल्य-विशल्यौषधि समानयन बालोदितभानुमण्डलग्रसनमेघनादहोम-विध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीतारक्षक राक्षससंघविदारण

कुम्भकर्णादिवधपरायण श्रीरामभक्तितत्पर समुद्रव्योमद्रुमलंघन महासामर्थ्य-महातेजःपुञ्जविराजमान स्वामिवचनसम्पादित अर्जुनसंयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीरशब्दोदयदक्षिणाशामार्तण्ड मेरुपर्वतपीठिकार्चन सकलमन्त्रागमाचार्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्तिनिवारण सर्वदुष्टादिनिबर्हण सर्पव्याघ्रादिभयनिवारण सर्वशत्रूच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवन-पुं-स्त्री-नपुंसकादि-सर्वजीवजातं वशय वशय ममाज्ञाकारकं सम्पादय सम्पादय नानानामधेयान् सर्वराज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय विध्वंसय हांहींहूं हाहाहा एहि एहि एहि ह्सौं ह्स्फ्रें ह्स्रौं स्फ्रें ह्स्फ्रें सर्वशत्रून् हन हन परबलानि परसैन्यानि क्षोभय क्षोभय मम सर्वकार्यजातं साधय साधय सर्वदुष्टजनमुखानि कीलय कीलय घे-घे-घे हां-हां-हां हुं-हुं-हुं फट्-फट्-फट् स्वाहा ।

विधि-विधानपूर्वक श्री हनुमान्जी का पूजन एवं ध्यान कर, पाँच सौ अक्षर वाले इस मन्त्र का जप करने से उपर्युक्त सभी कार्य निःसन्देह सिद्ध होते हैं।

मन्त्र-सिद्धि विधान—उपर्युक्त हनुमद्-गह्वर में वर्णित छहों मन्त्रों को सिद्ध करने का विधान इस प्रकार है—

साधक को चाहिए कि मूल मन्त्र से हृदयादि-करादि न्यास कर, [1]वानरीमुद्रा से बारह हजार जप करने से मन्त्र सिद्ध होता है। तत्पश्चात् मंगलवार के दिन हनुमान्जी का पूजन कर कँगुनी, धान्य, दही, दूध, घृत, केला, मातुलिंग, (बिजौरा नीबू), आम्र फल से हवन करे।

---

१. दोनों अँगूठों का छिपाकर औरों अंगुलियों को मोड़कर, हाथ जोड़ने वाली मुद्रा को 'वानरी मुद्रा' कहते हैं।

तदनन्तर बाईस ब्रह्मचारी ब्राह्मणों का भोजन कराने से सभी मन्त्र सिद्ध होते हैं।

ग्रहों के दोषों में एक सौ आठ बार हनुमान्‌जी के मन्त्र से भस्म एवं जल फूँक कर ग्रहदोष-व्याधिग्रस्त मनुष्य के ऊपर जल छिड़कने एवं भस्म लगाने से वह रोगमुक्त हो जाता है। इसी प्रकार भूत, प्रेत, विष, ग्रह, चेटक आदि द्वारा समस्त बाधाएँ और चोर, अग्निकाण्ड इत्यादि सभी उपद्रव इस विधि के अनुसार कार्य करने से शान्त होते हैं। पूर्व, उत्तर की ओर अंगुष्ठ प्रमाण की सम्पूर्ण मूर्ति तथा विस्तृत हृदय वाली हनुमान् जी की प्रतिमा निर्माण कर, उस पतिमा में वैदिक-विधान से प्राणप्रतिष्ठा आदि कर, सिन्दूर आदि लगा षोडशोपचार से पूजित कर, सायंकाल दरवाजे की ड्योढ़ी खनकर उस मूर्ति को गाड़ देने से उपर्युक्त सभी कार्य निश्चित सिद्ध होते हैं।

दस दिन तक रात्रि में छह सौ या तीन सौ मन्त्र जपने से राजकृत तथा शत्रुकृत भय नष्ट होते हैं।

इसी प्रकार अभिचार, भूत आदि ज्वर में छह सौ या तीन सौ जप द्वारा क्रोधपूर्वक तीन दिन तक वह जल एवं भस्म रोगी पर छिड़कने से निश्चित ही उपर्युक्त सभी बाधाएँ नष्ट होती हैं। यदि इसी मन्त्र को दस बार जप कर, नवीन औषधि एवं रस निर्माण में उस अभिमन्त्रित जल को मिला दे, तो वह औषधि तथा रस सफल सिद्ध होता है।

शस्त्र-स्तम्भन और घाव सुखाने का विधान –

इसी प्रकार सौ बार इस मन्त्र से अभिमन्त्रित भस्म धारण एवं जलपान करने से निश्चित ही युद्ध में शत्रु के शस्त्र कुण्ठित होते हैं। और शस्त्र आदि से उत्पन्न चोट-चपेट आदि पर तीन बार अभिमन्त्रित जल लगाने से उस चोट की पीड़ा शीघ्र ही शान्त होती है, और वह घाव जल्दी ही सूख जाता है।

शत्रु-उच्चाटन एवं वशीकरण विधि —

सूर्यास्त से लेकर अरुणोदय पर्यन्त हनुमान्‌जी के मन्त्र के जप-द्वारा अभिमन्त्रित भस्म और जल शत्रु के द्वार पर सत्रह दिन तक छिड़कने से शत्रु एवं उसके सभी परिवार का उच्चाटन होता है और निःसन्देह उसके शत्रुगण नष्ट होते हैं। इसी प्रकार उक्त भस्म और जल में चन्दन मिलाकर उसे अपने ललाट आदि पूरे शरीर में लगाने से, उसे देखने वाले सभी लोग उसके वश हो जाते हैं। इतना ही नहीं, अपितु देवगण एवं क्रूर प्राणी-सिंह, सर्पादि भी वश में होते हैं, तो मनुष्यों का कहना ही क्या ? तथा अग्निशान्ति के लिए भी यह प्रयोग अनुभूत है।

शत्रुमारण प्रयोग—

शुद्ध स्थान पर अर्धचन्द्राकृति वेदी बनाकर, बाल खोले हुए साधक को चाहिए कि वह रात्रि में, श्मशान में अत्यन्त क्रोधित मुद्रा से भस्म अथवा मिट्टी के द्वारा शत्रु की आकृति निर्माण और उसकी प्राणप्रतिष्ठा कर, उस मूर्ति के हृदय में शत्रु का नाम लिखे। तत्पश्चात् अत्यन्त क्रुद्ध मुद्रा से मूल मन्त्र (हनुमन्मन्त्र) पढ़ता हुआ, एवं शत्रु के नाम के पश्चात् 'छिन्धि भिन्धि मारय' इस प्रकार कहता हुआ शत्रु का नाम लेकर शस्त्र से दाँत और होंठ भींचते हुए सात दिन तक इस क्रिया को करे। तत्पश्चात् कड़ुवा तेल, नमक, धतूर का फूल, श्लेष्मा, विष, रोम, नख, कौवा, उल्लू तथा गीध के पंख मिलाकर, दक्षिण मुख बैठकर, सात दिन के भीतर ही तीन सौ बार मन्त्र पढ़कर, हवन करने से शत्रु मृत्यु को प्राप्त होता है। यदि स्वयं भगवान् शंकर भी उसकी रक्षा करें तो उसे वे नहीं बचा सकते।

वेताल-सिद्धि —

इसी प्रकार श्मशान-भूमि में, रात्रि में तीन दिन तक छह सौ बार हनुमन्मन्त्र का जप करने से निश्चय ही प्रेत (शव) उठ जाता है।

और वह वेताल हमेशा के लिए अपना सेवक बन जाता है । और भूत, भविष्यत् तथा वर्तमान तीनों काल का ज्ञान साधक को कराता है और साधक के समस्त मनोरथ पूर्ण करता है । उस शव की प्रतिमा में एक हजार बार हनुमान्जी के मन्त्र को पढ़कर तीन दिन तक अभिमन्त्रित भस्म एवं जल को उस प्रतिमा पर छिड़कने से सभी बड़े और छोटे कार्य इस मन्त्र के प्रभाव से निःसन्देह सिद्ध होते हैं । यहाँ तक कि असाध्य कार्य भी सिद्ध होता है । उक्त मन्त्र द्वारा वशीकरण, भय, विवाद, शस्त्र, रणसंकट, द्यूत, देवताओं का वश करना, स्तम्भन, विद्वेषण, मारण, एवं वेताल-सिद्धि आदि कार्य भी सद्यः सिद्ध होते हैं तथा विष, व्याधिगतज्वर, भूतग्रह दुष्टकृत्या आदि दोष, चोट-चपेट, फोड़े, घनघोर जंगल में भय तथा सिंह आदि क्रूर प्राणियों द्वारा उत्पन्न भय आदि समस्त विघ्न शीघ्र दूर होते हैं ।

कारागार (जेलखाने) से छूटने का प्रयोग—

उसी प्रकार हनुमान्जी की प्रतिमा बनाकर, उस व्यक्ति के नाम के आगे द्वितीयान्त पद लिखकर, उसके बाद 'विमोचय-विमोचय' का उल्लेख कर. उस मूर्ति पर, बाँयें हाथ से कुश-जल-द्वारा एक सौ आठ बार मार्जन कर, उस मूर्ति का विसर्जन करता हुआ, पुनः मूर्ति-निर्माण कर, उपर्युक्त विधि से जल से मार्जन कर, एक सौ आठ बार, मूर्ति बनावे और उसका विसर्जन करने से निश्चित ही जेलखाने में बन्द व्यक्ति शीघ्र ही छूट जाता है । चाहे वह व्यक्ति फाँसी की ही सजा क्यों न पाये हो । उस व्यक्ति को राजा भी दण्ड देने में असमर्थ हो जाता है । यह प्रयोग अनुभूत है ।

कार्य-विशेष में हवन-सामग्री –

स्तम्भन प्रयोग में हनुमान्जी के मन्त्रका दशांश हवन, ताजा जव, पीपल का फल, हल्दी, तिल, शल्लकी फल, सेमर का फूल एवं तीनों मधु से हवन करे । उच्चाटन में—लिसोड़े के फूल से, वशीकरण में—सरसों, अंगूर, मधूक और गुग्गुल से हवन करे । विद्वेषण में—करवीर के पत्र तथा उसकी लकड़ी और लिसोड़े का पत्र एवं उसकी लकड़ी,

जीरा, काली मिर्च, कड़ुवा तेल मिश्रित राई से हवन करना चाहिए। उसी प्रकार ज्वर, ताप-शूल, कण्ठमाला, भगन्दर रोग में-दूब, गुरुच के टुकड़े, घी, दूध, दही, नागफनी, रेंड़ की लकड़ी, कुबेराक्ष, निर्गुण्डी की समिधा तथा तिल के तेल से दशांश हवन करे।

धन-प्राप्ति के लिए – कमल, बिल्वपत्र तथा उसकी लकड़ी से दशांश हवन करे। मन की शान्ति के लिए—पनस (कटहल) का रस, नारियल जल, ऊख का रस एवं तीनों मधु, केले के फल के साथ मिलाकर दशांश हवन करे।

सौभाग्य-सुख एवं सम्पत्ति-प्राप्ति के लिए—कपूर, केसर, कस्तूरी, गोरोचन, चन्दन, तज, वीरण, लौंग, इलायची, अगर, जटामांसी, चमेली का पत्र एवं उसका फल, लोहबान सभी वस्तुओं को घृत में मिलाकर दशांश हवन करे।

पुष्प चढ़ाने का प्रयोग—

उत्तम फल-प्राप्ति के लिए हनुमान्‌जी को सुगन्धित पुष्प चढ़ाना चाहिए। विद्वेषण और मारण में—धतूरा और राई का पुष्प चढ़ावे। अथवा कौवा, उल्लू और गीध के पंख तथा कड़ुवे तेल में मिले हुए नमक से हवन करे। आकर्षण में-वृक्ष के नीचे की मिट्टी, राई और नमक से हवन करे। मोहनमें—धतूरे का फूल एवं उसकी लकड़ी से हवन करे। धान्य से हवन करने से धान्य-प्राप्ति। अन्न से हवन करने पर अन्न की प्राप्ति। तेल, घी, दूध, दही से हवन करने से पृथ्वी, हाथी और सभी सम्पत्तियाँ प्राप्त होती हैं। साधक को चाहिए कि उपर्युक्त विधान से, श्रेष्ठ तान्त्रिक गुरु की दीक्षा से दीक्षित होकर एवं उसके निर्देशानुसार पुरश्चरण कर हनुमान्‌जी की सेवा करता हुआ अनेक प्रयोगों की सिद्धि करे।

इस प्रकार पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्री विरचित हनुमद्-रहस्यान्तर्गत हनुमद्-गह्वरमन्त्रोक्त अनुष्ठानविधान समाप्त।

*

हनुमत्-तन्त्रम्

हनुमद्-ध्यानम्

ध्यायेद् बालदिवाकर-द्युतिनिभं देवारि-दर्पापहं
देवेन्द्र-प्रमुख-प्रशस्त-यशसं देदीप्यमानं रुचा ।
सुग्रीवादि-समस्त-वानरयुतं सुव्यक्त-तत्त्वप्रियं
संरक्तारुणलोचनं पवनजं पीताम्बरालङ्कृतम् ॥ १ ॥
उद्यन्मार्तण्ड-कोटि-प्रकटरुचियुतं चारुवीरासनस्थं
मौञ्जी-यज्ञोपवीता-ऽऽभरण-रुचिशिखा-शोभितं कुण्डलाढ्यम् ।
भक्तानामिष्टदान-प्रवणमनुदिनं वेदनादप्रमोदं
ध्यायेद् देवं विधेयं प्लवगकुलपतिं गोष्पदीभूतवार्धिम् ॥ २ ॥
मनोजवं मारुततुल्यवेगं जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम् ।
वातात्मजं वानरयूथमुख्यं श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये ॥ ३ ॥

यन्त्रोद्धारः

वक्ष्ये हनुमतो यन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।
वलयत्रितयं लेख्यं पुच्छाकार-समन्वितम् ॥ १ ॥
साध्यनाम लिखेन्मध्ये पाशबीजप्रवेष्टितम् ।
उपर्युष्टदलं कृत्वा वर्म-पत्रेषु संलिखेत् ॥ २ ॥
वलयं बहिरालिख्य तद्बहिश्चतुरस्रकम् ।
चतुरस्रस्य रेखाग्रे त्रिशूलानि समालिखेत् ॥ ३ ॥
भूपुरस्याऽष्टवज्रेषु हसौं बीजं लिखेत्ततः ।
कोणेष्वङ्कुशमालिख्य मालामन्त्रेण वेष्टयेत् ॥ ४ ॥
तत्सर्वं वेष्टयेद् यन्त्रे वलयत्रितयेन च ।
वस्त्रे शिलायां फलके ताम्रपात्रेऽथ कुड्यजे ॥ ५ ॥
भूर्जे वा ताडपत्रे वा रोचना-नाभि-कुङ्कुमैः ।
मन्त्रमेतत् समालिख्य त्यक्ताशीर्ब्रह्मचर्यवान् ॥ ६ ॥

माला-प्रार्थना

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्तिस्वरूपिणि !।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥ १ ॥
अविघ्नं कुरु माले ! त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्धयर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥ २ ॥

हनुमन्मालामन्त्रः

ॐ नमो हनुमते प्रकटपराक्रम आक्रान्त-दिङ्मण्डल यशोवितान-धवलीकृत-जगत्त्रितय-वज्रदेह ज्वलदग्निसूर्यकोटिसमप्रभ-तनूरुह-रुद्रावतार लङ्कापुरीदहनोदधिलङ्घन दशग्रीवशिरःकृतान्तक सीताश्वासन वायुसुताऽञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीराम-लक्ष्मणाऽऽनन्दकर-कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसख्यकारण बालिनिर्बहणकारण द्रोणपर्वतोत्पाटनाऽशोक-विदारणा-ऽक्षकुमारकच्छेदन-वनरक्षाकरसमूहनिभञ्जन ब्रह्मास्त्र-ब्रह्म-शक्तिग्रसन लक्ष्मणशक्तिभेदनिवारण विशल्यौषधिसमानयन बालो-दितभानुमण्डलग्रसन मेघनादहोमविध्वंसन इन्द्रजिद्वधकारण सीता-रक्षक-राक्षसीसङ्घविदारण कुम्भकर्णादिवधपरायण श्रीरामभक्ति-तत्पर समुद्रव्योमद्रुमलङ्घनमहासामर्थ्य महातेजःपुञ्जविराजमान स्वामिवचनसम्पादिता-ऽर्जुनयुगसहाय कुमारब्रह्मचारिन् गम्भीर-शब्दोदय-दक्षिणाशामार्तण्ड-मेरुपर्वतपीठिकार्चन सकलमन्त्रागमाचार्य मम सर्वग्रहविनाशन सर्वज्वरोच्चाटन सर्वविषविनाशन सर्वापत्ति-निवारण सर्वदुष्टनिर्बहण सर्प-व्याघ्रादिभय-निवारण सर्वशत्रूच्छेदन मम परस्य च त्रिभुवन-पुं-स्त्री-नपुंसकात्मकं सर्वजीवजातं वशय-वशय ममाज्ञाकारकं सम्पादय-सम्पादय नानानामधेयान् सर्वान् राज्ञः सपरिवारान् मम सेवकान् कुरु-कुरु सर्वशस्त्रास्त्रविषाणि विध्वंसय-विध्वंसय ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रां ३ एह्येहि ह्सौं ह्स्ख्फ्रें ह्स्रौं, ख्फ्रें ह्स्फ्रें ह्रौं सर्वशत्रून् हन-हन परदलानि परसैन्यानि क्षोभय-क्षोभय मम सर्व-कार्यजातं साधय-साधय सर्वदुष्टदुर्जनमुखानि कीलय-कीलय घे-घे-घे हा-हा-हा हुँ-हुँ-हुँ फट्-फट्-फट् स्वाहा ।

पुरश्चरणम्

पुरश्चर्यास्य मन्त्रस्य प्रोक्ता चाऽर्कसहस्रिका ।
भौमस्य वासरे पूजा कार्या हनुमतो ध्रुवम् ॥
प्रियङ्गवो व्रीहयश्च दध्याज्य-क्षीर-संयुतैः ।
कदली-मातुलिङ्गा-ऽऽम्रफलैर्नानाविधैर्हुनेत् ॥
दशांशेन ततो ब्रह्मचारिणो भोजयेद् ध्रुवम् ॥

हनुमद्-गायत्रीमन्त्रः

ॐ अञ्जनीजाय[1] विद्महे वायुपुत्राय धीमहि ।
तन्नो[2] हनुमान् प्रचोदयात् ।

हनुमदष्टार्णमन्त्रोद्धारः

वियदग्नियुतं दीर्घषट्काद्यं तारसम्पुटम् ।
अष्टार्णो मन्त्र आख्यातः...................... ॥

हनुमदष्टार्णमन्त्र.

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः ॐ ।

हनुमद्-द्वादशाक्षरमन्त्रोद्धारः

हुँकारमादौ सम्प्रोक्त हनुमते तदनन्तरम् ।
रुद्रात्मकाय हुँ चैव फडिति द्वादशाक्षरम् ॥

हनुमद्-द्वादशाक्षरमन्त्रः

हुँ हनुमते रुद्रात्मकाय हुँ फट् ।

हनुमद्-दशार्णमन्त्रोद्धारः

श्रीबीजं पूर्वमुच्चार्य पवनं च ततो वदेत् ।
नन्दनं च ततो देयं ङेऽवसानेऽनलप्रिया ॥

हनुमद्-दशार्णमन्त्रः

श्रीपवननन्दनाय स्वाहा ।

इति देवरिया मण्डलान्तर्गत-'मझौली राज्य' (सम्प्रति वाराणसी)-
निवासि-पण्डित-श्रीसन्तशरणमिश्रात्मज-व्याकरणाचार्य-साहित्य-
वारिधि-आचार्य-पण्डितश्रीशिवदत्तमिश्रशास्त्रि-विरचितं
हनुमद्-रहस्य समाप्तम् ।

---

१. 'रामदूताय' । २. 'तन्नः कपिः' इत्यपि पाठः ।

हनुमद्-वडवानल-स्तोत्रम्

सङ्कल्प:—ॐ अस्य श्रीहनुमद्वडवानलस्तोत्रमन्त्रस्य श्रीरामचन्द्र ऋषि:, श्रीवडवानलहनुमान् देवता, मम समस्त-रोग-प्रशमनार्थम् आयुरारोग्यैश्वर्याऽभिवृद्ध्यर्थं समस्त-पापक्षयार्थं सीतारामचन्द्रप्रीत्यर्थं च हनुमद्वडवानलस्तोत्रजपमहं करिष्ये।

ध्यानम्

मनोजवं मारुत-तुल्य-वेगं, जितेन्द्रियं बुद्धिमतां वरिष्ठम्।
वातात्मजं वानरयूथ-मुख्यं, श्रीरामदूतं शरणं प्रपद्ये॥

ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते प्रकटपराक्रम सकलदिङ्मण्डल-यशोवितान-धवलीकृत-जगत्-त्रितय-वज्रदेह रुद्रावतार लङ्कापुरीदहन उमा-अर्गलमन्त्र-उदधिबन्धन दशशिर:-कृतान्तक सीताश्वसन वायुपुत्र-अञ्जनीगर्भसम्भूत श्रीरामलक्ष्मणानन्दकर कपिसैन्यप्राकार सुग्रीवसाह्यरण-पर्वतोत्पाटन कुमार-ब्रह्मचारिन् गभीरनाद सर्व-पापग्रहवारण-सर्वज्वरोच्चाटन डाकिनी-विध्वंसन ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते महावीरवीराय सर्व-दु:खनिवारणाय ग्रहमण्डल-सर्वभूत-मण्डल-सर्वपिशाचमण्ड-

---

यह वडवानल स्तोत्र सर्वसिद्धि प्रदायक है। इसके पाठ से मनुष्य की सभी कामनाएँ पूर्ण होती हैं। अत: सर्वप्रथम हाथ में जल लेकर 'ॐ अस्य श्रीहनुमद्-वडवानलस्तोत्रमन्त्रस्य०' यह संकल्प वाक्य पढ़कर जल छोड़े। पश्चात् 'ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते०' से आरम्भ कर 'हुँ फट् स्वाहा' तक का पाठ करना चाहिए।

लोच्चाटन-भूतज्वर-एकाहिकज्वर - द्वयाहिकज्वर - त्र्याहिकज्वर-चातुर्थिकज्वर - सन्तापज्वर-विषमज्वर-तापज्वर-माहेश्वर-वैष्णव-ज्वरान् छिन्धि छिन्धि यक्ष-ब्रह्मराक्षस-भूत-प्रेत-पिशाचान् उच्चाटय उच्चाटय ।

ॐ ह्रां श्रीं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः आं ह्रां ह्रां ह्रां ह्रां ॐ सौं एहि एहि एहि ॐ हं ॐ हं ॐ हं ॐ नमो भगवते श्रीमहाहनुमते श्रवणचक्षुर्भूतानां शाकिनी-डाकिनीनां विषमदुष्टानां सर्वविषं हर हर आकाशभुवनं भेदय भेदय छेदय छेदय मारय मारय शोषय शोषय मोहय मोहय ज्वालय ज्वालय प्रहारय प्रहारय शकलमायां भेदय भेदय ।

ॐ ह्रां ह्रीं ॐ नमो भगवते महाहनुमते सर्वग्रहोच्चाटन परबलं क्षोभय क्षोभय सकलबन्धनमोक्षणं कुरु कुरु शिरःशूल-गुल्मशूल-सर्वशूलान्निर्मूलय निर्मूलय नागपाशानन्त-वासुकि-तक्षक-कर्कोटकालियान् यक्षकुलजगत्-रात्रिञ्चर-दिवाचर - सर्पा - न्निर्विषं कुरु कुरु स्वाहा ।

राजभय-चोरभय-परमन्त्र - परयन्त्र-परतन्त्र-परविद्याश्छेदय छेदय स्वमन्त्र-स्वयन्त्र-स्वतन्त्रकाविद्याः प्रकटय प्रकटय सर्वारिष्टान्नाशय नाशय सर्वशत्रून्नाशय नाशय असाध्यं साधय साधय हुँ फट् स्वाहा ।

इति विभीषणकृतं हनुमद्-वडवानलस्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

*

हनुमान-चालीसा

दोहा

श्रीगुरु चरन सरोज रज, निज मन मुकुरु सुधारि।
बरनउँ रघुवर बिमल जसु, जो दायकु फल चारि॥
बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुधि विद्या देहु मोहिं, हरहु कलेस बिकार॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर, जय कपीस तिहुँ लोक उजागर।
रामदूत अतुलित बलधामा, अंजनि-पुत्र पवनसुत नामा॥
महावीर विक्रम बजरंगी, कुमति निवार सुमति के संगी।
कंचन बरन विराज सुबेसा, कानन कुंडल कुंचित केसा॥
हाथ वज्र औ ध्वजा विराजै, काँधे मूँज जनेऊ साजै।
संकर सुवन केसरीनंदन, तेजप्रताप महा जग बंदन॥
विद्यावान गुनी अति चातुर, राम काज करिबे को आतुर।
प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया, राम लखन सीता मन बसिया॥
सूक्ष्म रूप धरि सियहिं दिखावा, विकट रूप धरि लंक जरावा।
भीम रूप धरि असुर सँहारे, रामचन्द्र के काज सँवारे॥
लाय सजीवन लषन जियाये, श्रीरघुवीर हरषि उर लाये।
रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई, तुम मम प्रिय भरत सम भाई॥
सहस बदन तुम्हरो जस गावैं, अस कहि श्रीपति कंठ लगावैं।
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा, नारद सारद सहित अहीसा॥

जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते, कवि कोविद कहि सके कहाँ ते ।
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा, राम मिलाय राज पद दीन्हा ॥
तुम्हरो मन्त्र विभीषन माना, लंकेश्वर भये सब जग जाना ।
जुग सहस्र योजन पर भानू, लील्यो ताहि मधुर फल जानू ॥
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं, जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं ।
दुर्गम काज जगतके जेते, सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ॥
राम दुआरे तुम रखवारे, होत न आज्ञा बिनु पैसारे ।
सब सुख लहै तुम्हारी सरना, तुम रक्षक काहू को डरना ॥
आपन तेज सम्हारो आपै, तीनौं लोक हाँक ते काँपै ।
भूत पिशाच निकट नहिं आवै, महाबीर जब नाम सुनावै ॥
नासै रोग हरै सब पीरा, जपत निरंतर हनुमत बीरा ।
संकट तें हनुमान् छुड़ावै, मन क्रम वचन ध्यान जो लावै ॥
सब पर राम तपस्वी राजा, तिनके काज सकल तुम साजा ।
और मनोरथ जो कोइ लावै, सोइ अमित जीवन फल पावै ॥
चारों जुग परताप तुम्हारा, है परसिद्ध जगत उजियारा ।
साधु संत के तुम रखवारे, असुर निकंदन राम दुलारे ॥
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता, अस बर दीन जानकी माता ।
राम रसायन तुम्हरे पासा, सदा रहो रघुपति के दासा ॥
तुम्हरे भजन राम को भावै, जनम-जनम के दुख बिसरावै ।
अन्त काल रघुबरपुर जाई, जहाँ जन्म हरि-भक्त कहाई ॥
और देवता चित्त न धरई, हनुमत सेइ सर्व सुख करई ।
संकट कटै मिटै सब पीरा, जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ॥

जै जै जै हनुमान गोसाइँ, कृपा करहु गुरु देव की नाइँ ।
जो सत बार पाठ कर कोई, छूटहि बंदि महा सुख होई ॥
जो यह पढ़ै हनुमान चालीसा, होय सिद्ध, साखी गौरीसा ।
तुलसीदास सदा हरि चेरा, कीजै नाथ हृदय महँ डेरा ॥

दोहा

पवन-तनय संकट हरन, मंगल मूरति रूप ।
रामलषन सीता सहित, हृदय बसहु सूर भूप ॥

इस प्रकार हनुमद्-रहस्य में हनुमान-चालीसा समाप्त ।

*

संकट मोचन हनुमानाष्टक

(मत्तगयन्द छन्द)

बाल समय रवि भक्षि लियो तब तीनहुँ लोक भयो अँधियारो ।
ताहि सों त्रास भयो जग को यह संकट काहु सों जात न टारो ॥
देवन आनि करी बिनती तब छाँड़ि दियो रवि कष्ट निवारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो ॥
बालि की त्रास कपीस बसै गिरि जात महाप्रभु पंथ निहारो ।
चौंकि महामुनि साप दियो तब चाहिय कौन बिचार बिचारो ॥
कै द्विज रूप लिवाय महाप्रभु सो तुम दास के सोक निवारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो ॥
अंगद के संग लेन गये सिय खोज कपीस यह बैन उचारो ।
जीवत ना बचिहौ हम सों जु बिना सुधि लाये इहाँ पगु धारो ॥

हेरि थके तट सिंधु सबै तब लाय सिया-सुधि प्रान उबारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो ॥
रावन त्रास दई सिय को सब राक्षसि सों कहिं सोक निवारो ।
ताहि समय हनुमान महाप्रभु जाय महा रजनीचर मारो ॥
चाहत सीय अशोक सों आगि सु दै प्रभु मुद्रिका सोक निवारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकट मोचन नाम तिहारो ॥
बान लग्यो उर लछिमन के तब प्रान तजे सुत रावन मारो ।
लै गृह बैद्य सुषेन समेत तबै गिरि द्रोन सु बीरु उपारो ॥
आनि सजीवन हाथ दई तब लछिमन के तुम प्रान उबारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकटमोचन नाम तिहारो ॥
रावन जुद्ध अजान कियो तब नाग कि फाँस सबै सिर डारो ।
श्रीरघुनाथ समेत सबै दल मोह भयो यह संकट भारो ॥
आनि खगेस तबै हनुमान जु बन्धन काटि सुत्रास निवारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकट मोचन नाम तिहारो ॥
बंधु समेत जबै अहिरावन लै रघुनाथ पताल सिधारो ।
देविहिं पूजि भली विधि सों बलि देउ सबै मिलि मंत्र बिचारो ॥
जाय सहाय भयो सब ही अहिरावन सैन्य समेत सँहारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकट मोचन नाम तिहारो ॥
काज किये बड़ देवन के तुम बीर महाप्रभु देखि बिचारो ।
कौन सो संकट मोर गरीब को जो तुमसों नहिं जात है टारो ॥
बेगि हरो हनुमान महाप्रभु जो कछु संकट होय हमारो ।
को नहिं जानत है जग में कपि संकट मोचन नाम तिहारो ॥

दोहा - लाल देह लाली लसे, अरु धरि लाल लंगूर।
बज्र देह दानव-दलन, जय-जय-जय कपिसूर ॥
यह अष्टक हनुमान् को विरचित तुलसी दास।
विनती 'शिवदत्त मिश्र' की पढ़ै सुनै दुखनास ॥

इस प्रकार हनुमद्-रहस्य में संकटमोचन हनुमानाष्टक सम्पूर्ण।

*

श्री बजरंग बाण

दोहा

निश्चय प्रेम प्रतीत ते, विनय करैं सनमान।
तेहि के कारज सकल शुभ, सिद्ध करैं हनुमान ॥

चौपाई

जय हनुमन्त सन्त हितकारी। सुनि लीजै प्रभु अरज हमारी ॥
जन के काज विलम्ब न कीजै। आतुर दौरि महा सुख दीजै ॥
जैसे कूदि सिन्धु वहि पारा। सुरसा बदन पैठि विस्तारा ॥
आगे जाइ लंकिनी रोका। मारेहु लात गई सुरलोका ॥
जाय विभीषण को सुख दीन्हा। सीता निरखि परम पद लीन्हा ॥
बाग उजारि सिन्धु महँ बोरा। अति आतुर यम कातर तोरा ॥

श्रद्धा-भक्ति से गोस्वामी तुलसीदास कृत इस 'बजरंग बाण' के नित्य-प्रति पाठ करने से मनुष्य के सभी कष्ट तथा भूत, प्रेत आदि बाधाएँ दूर होती हैं। एवं युद्ध, यात्रा, परीक्षा, इण्टरव्यू आदि में विशेष सफलता प्राप्त होती है। मंगलवार तथा शनिवार को ११ पाठ करना लाभप्रद है।

अक्षय कुमार को मारि संहारा । लूम लपेटि लंक को जारा ॥
लाह समान लंक जरि गई । जय-जय धुनि सुर पुर मँह भई ॥
अब विलम्ब केहि कारन स्वामी । कृपा करहु प्रभु अन्तर्यामी ॥
जय-जय लक्ष्मण प्राणके दाता । आतुर होइ दुःख करहु निपाता ॥
जय गिरधर जय-जय सुख सागर । सुर-समूह समरथ भटनागर ॥
ॐ हनु हनु हनु हनुमन्त हठीले । बैरिहिं मारु वज्र के कीले ॥
गदा बज्र लै बैरिहिं मारो । महाराज प्रभु दास उबारो ॥
ॐकार हुँकार महावीर धावो । बज्रगदा हनु विलम्ब न लावो ॥
ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं हनुमन्त कपीसा । ॐ हुँ हुँ हुँ हनु अरि उर शीशा ॥
सत्य होहु हरि शपथ पाय के । रामदूत धरु मारु जाय के ॥
जय-जय-जय हनुमन्त अगाधा । दुख पावत जन केहि अपराधा ॥
पूजा जप-तप नेम अचारा । नहिं जानत हौं दास तुम्हारा ॥
वन-उपवन मग गिरि गृह माहीं । तुम्हरे बल हम डरपत नाहीं ॥
पाँय परौं कर जोरि मनावौं । यहि अवसर अब केहि गोहरावौं ॥
जय अंजनिकुमार बलवन्ता । शंकर सुवन वीर हनुमन्ता ॥
बदन कराल काल कुल घालक । राम सहाय सदा प्रतिपालक ॥
भूत प्रेत पिशाच निशाचर । अग्नि वैताल काल मारीमर ॥
इन्हैं मारु तोहिं शपथ रामकी । राखु नाथ मरजाद नाम की ॥
जनकसुता हरिदास कहावो । ताकी शपथ बिलम्ब न लावो ॥
जय-जय-जय धुनि होत अकाशा । सुमिरत होत दुसह दुखनाशा ॥
शरण-शरण कर जोरि मनावौं । यहि अवसर अब केहि गोहरावौं ॥
उठु-उठु चलु तोहिं राम दोहाई । पाँय परौं कर जोरि मनाई ॥

ॐ चं चं चं चं चपल चलन्ता। ॐ हनु हनु हनु हनु हनुमन्ता ॥
ॐ हं हं हाँक देत कपि चंचल। ॐ सं सं सहमि पराने खलदल ॥
अपने जन को तुरत उबारो। सुमिरत होय आनन्द हमारो ॥
यहि बजरंग बाण जेहिं मारो। ताहि करो फिर कौन उबारो ॥
पाठ करै बजरंग बाण की। हनुमत रक्षा करैं प्राण की ॥
यह बजरंग बाण जो जापै। तेहि ते भूत प्रेत सब काँपै ॥
धूप देय अरु जपे हमेशा। ताके तन नहिं रहे कलेशा ॥

प्रेम प्रतीतिहिं कपि भजे, सदा धरैं उर ध्यान।
तेहि के कारज सकल शुभ, सिद्ध करैं हनुमान ॥

इति श्री गोस्वामी तुलसीदास कृत हनुमत्-बजरंग बाण समाप्त।

*

हनुमान्-साठिका

चौपाई

जय जय जय हनुमान अडंगी।
महावीर विक्रमबजरंगी ॥ १ ॥
जय कपीश जय पवनकुमारा।
जय जगबन्दन शील अगारा ॥ २ ॥

प्रतिदिन 'हनुमान्-साठिका' के पाठ से पाठक संकटमुक्त होकर उनकी सभी मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। मंगलवार का पाठ तो विशेष सिद्धिप्रद है। जैसा कि साठिका के अन्त में सन्त तुलसी दासजी ने कहा है—

'जो नित पढ़ै यह साठिका, तुलसी कहैं विचारि।
रहै न संकट ताहि को, साक्षी हैं त्रिपुरारि ॥'

जय आदित्य अमर अविकारी।
अरि मरदन जय-जय गिरधारी ॥ ३ ॥
अंजनि उदर जन्म तुम लीन्हा।
जय-जयकार देवतन कीन्हा ॥ ४ ॥
बाजै दुन्दुभि गगन गभीरा।
सुर मन हर्ष असुर मनपीरा ॥ ५ ॥
कपि के डर गढ़ लंक सकानी।
छूटी बन्दि देवतन जानी ॥ ६ ॥
ऋषि - समूह निकट चलि आये।
पवन - तनय के पद सिर नाये ॥ ७ ॥
बार - बार अस्तुति करि नाना।
निर्मल नाम धरा हनुमाना ॥ ८ ॥
सकल ऋषिन मिलि अस मत ठाना।
दीन बताय लाल फल खाना ॥ ९ ॥
सुनत वचन कपि मन हर्षाना।
रविरथ उदय लाल फल जाना ॥ १० ॥
रथ समेत कपि कीन अहारा।
सूर्य बिना भये अति अँधियारा ॥ ११ ॥
विनय तुम्हार करै अकुलाना।
तब कपीश की अस्तुति ठाना ॥ १२ ॥
सकल लोक वृत्तान्त सुनावा।
चतुरानन तब रवि उगिलावा ॥ १३ ॥

कहा बहोरि सुनो बलशीला ।
रामचन्द्र करि हैं बहुलीला ॥ १४ ॥
तब तुम उन कर करब सहाई ।
अबहीं बसहु कानन में जाई ॥ १५ ॥
अस कहि विधि निजलोक सिधारा ।
मिले सखा संग पवनकुमारा ॥ १६ ॥
खेलैं खेल महा तरु तोरैं ।
ढेर करैं बहु पर्वत फोरैं ॥ १७ ॥
जेहि गिरिचरण देहि कपि धाई ।
गिरि समेत पातालहिं जाई ॥ १८ ॥
कपि सुग्रीव बालि को त्रासा ।
निरख रहे राम मगु आसा ॥ १९ ॥
मिले राम तहँ पवन कुमारा ।
अति आनन्द सप्रेम दुलारा ॥ २० ॥
मणि मुँदरी रघुपति सों पाई ।
सीता खोज चले सिर नाई ॥ २१ ॥
शत योजन जलनिधि विस्तारा ।
अगम अपार देवतन हारा ॥ २२ ॥
जिमि सर गोखुर सरिस कपीशा ।
लाँघि गये कपि कहि जगदीशा ॥ २३ ॥
सीता चरण सीस तिन नाये ।
अजर अमर के आशिष पाये ॥ २४ ॥

रहे दनुज उपवन रखवारी।
एक से एक महाभट भारी ॥ २५ ॥
तिन्हैं मारि पुनि कहेउ कपीशा।
दहेउ लंक कोप्यो भुज बीसा ॥ २६ ॥
सिया बोध दै पुनि फिर आये।
रामचन्द्र के पद सिर नाये ॥ २७ ॥
मेरु उपारि आपु छिन माहीं।
बाँधे सेतु निमिष इक माहीं ॥ २८ ॥
लक्ष्मण शक्ति लागी जबहीं।
राम बुलाय कहा पुनि तबहीं ॥ २९ ॥
भवन समेत सुखेण लै आये।
तुरत सजीवन को पुनि धाये ॥ ३० ॥
मग महँ कालनेमि कह मारा।
अमित सुभट निशिचर संहारा ॥ ३१ ॥
आनि सजीवन गिरि समेता।
धरि दीन्हों जहँ कृपा निकेता ॥ ३२ ॥
फनपति केर शोक हरि लीना।
वर्षि सुमन सुर जय-जय कीना ॥ ३३ ॥
महिरावण हरि अनुज समेता।
लै गयो तहाँ पाताल निकेता ॥ ३४ ॥
जहाँ रहे देवी अस्थाना।
दीन चहै बलि काढ़ि कृपाना ॥ ३५ ॥

पवन-तनय प्रभु कीन गुहारी ।
कटक समेत निशाचर मारी ॥ ३६ ॥
रीच्छ कीशपति सबै बहोरी ।
राम लषन कीने यक ठोरी ॥ ३७ ॥
सब देवतन की बन्दि छुड़ाये ।
सो कीरति मुनि नारद गाये ॥ ३८ ॥
अक्षय कुमार दनुज बलवाना ।
सानकेतु कहँ सब जग जाना ॥ ३९ ॥
कुम्भकरण रावण कर भाई ।
ताहि निपात कीन्ह कपि राई ॥ ४० ॥
मेघनाद पर शक्ती मारा ।
पवन-तनय तब सों बरियारा ॥ ४१ ॥
रहा तनय नारान्तक जाना ।
पल महँ ताहि हते हनुमाना ॥ ४२ ॥
जहँ लगि मान दनुज कर पावा ।
पवन-तनय सब मारि नसावा ॥ ४३ ॥
जय मारुत-सुत जय अनुकूला ।
नाम कृशानु शोक सम तूला ॥ ४४ ॥
जहँ जीवन पर संकट होई ।
रवि तम सम सो संकट खोई ॥ ४५ ॥
बन्दि परै सुमिरै हनुमाना ।
संकट कटै धरै जो ध्याना ॥ ४६ ॥

जाकी बाँध बाम पद दीन्हा ।
मारुत सुत व्याकुल बहु कीन्हा ॥ ४७ ॥
सो भुजबल का कीन कृपाला ।
आछत तुम्हें मोर यह हाला ॥ ४८ ॥
आरत हरन नाम हनुमाना ।
सादर सुरपति कीन बखाना ॥ ४९ ॥
संकट रहै न एक रती को ।
ध्यान धरे हनुमान जती को ॥ ५० ॥
धावहु देखि दीनता मोरी ।
कहौं पवनसुत युग कर जोरी ॥ ५१ ॥
कपिपति बेगि अनुग्रह करहू ।
आतुर आइ दुसह दुख हरहू ॥ ५२ ॥
राम शपथ मैं तुमहिं सुनाया ।
जवन गुहार लाग सिय जाया ॥ ५३ ॥
पैज तुम्हार सकल जग जाना ।
भव-बन्धन भंजन हनुमाना ॥ ५४ ॥
यह बन्धन कर केतिक बाता ।
नाम तुम्हार जगत सुखदाता ॥ ५५ ॥
करौ कृपा जय-जय जगस्वामी ।
बार अनेक नमामि नमामी ॥ ५६ ॥
भौमवार कर होम विधाना ।
धूप दीप नैवेद्य सुजाना ॥ ५७ ॥

मंगल दायक को लौ लावै।
सुर नर मुनि वांछित फल पावै ॥ ५८ ॥
जयति जयति जय-जय जग स्वामी।
समरथ पुरुष सुअन्तर जामी ॥ ५९ ॥
अंजनि तनय नाम हनुमाना।
सो तुलसी के प्राण समाना ॥ ६० ॥

दोहा

जय कपीश सुग्रीव तुम, जय अंगद हनुमान।
राम लखन सीता सहित, सदा करो कल्यान ॥ १ ॥
बन्दौं हनुमत नाम यह, भौमवार परमान।
ध्यान धरै नर निश्चय, पावै पद कल्यान ॥ २ ॥
जो नित पढ़ै यह साठिका, तुलसी कहैं विचार।
रहै न संकट ताहि को, साक्षी हैं त्रिपुरारि ॥ ३ ॥

इति हनुमान-साठिका समाप्त।

हनुमान-लहरी

दोहा

गुरुपदपंकज धारि उर, सुर नर शीश नवाय।
मारुतसुत बरबीर कहँ, ध्यावत चितमन लाय ॥
प्रथम वन्दि सियरामपद, अवधनारि नर संग।
बन्दौं चरण सुध्यान धारि, हनुमत कंचन रंग ॥
मन चित देइ सुनो विनै, हौं तुम दीन दयाल।
और नहीं कछु वासना, दासहि करहु निहाल ॥
तात बड़ाई रावरी, बिछुवत जोति अमन्द।
सब विधि हीन मलीन मति, अहै दीन ब्रजनन्द ॥

जानै जग दातव्यता, नाथ मोर सरवस्त्र ।
पै विरलै कोउ जानि हैं, यह अति गूढ़ रहस्य ॥
जै जयदारुण दुखदलन, महावीर रणधीर ।
कर गहि लेउ उवार ब्रज, आय जुरी अति भीर ॥
गद-गद गिरा गुमान तजि, जुगल पानि ब्रज जोर ।
हनुमत अस्तुति करत है, सिगरी भाँति निहोर ॥

[छप्पै छन्द]

जै सुत पवन दयानिधान दारिद दुखभंजन ।
जैति अजनी-तनय सदा सतन मनरंजन ॥
जैति वीर-सिरताज लाज राखउ मम आजू ।
जै-जै रघुवरदास जासु साजेव शुभ काजू ॥
प्रभु जस अरिबंधुसुईस कहँ कियो पार दुख सिन्धुसों ।
व्रज तस मेरो दुख दूर करि होउ सहाय सुबन्धुसों ॥

[रोला छन्द]

जैति जैति दुखहरन सरन अब मोको दीजै ।
जैति जैति हनुमन्त अन्त थारो न पईजै ॥
जै अंजनिसुत वीर धीर अति धरम धुरन्धर ।
जय-जय रघुकुल कुमुद चेर जय मच्छक रविकर ॥
जय मारुत सुत तेजवान दुखदुन्द दलैया ।
जय सीता सुख मूल तूल सम लंक जलैया ॥
रघुवर कर सब काज लाल तुव आप सँवारो ।
रुचिर वाटिका दशकन्धर कर नाथ उजारो ॥

बानर दल कहँ विजय तात तुम आप दिवायो ।
लंका कहँ सन्धान करी सीता सुधि पायो ॥
सुग्रीवहिं पहँ राम आनि शुभ सखा बनायो ।
लाय विभीषण नाथ निकट तुम अभय करायो ॥
सागर उतरेउ पार मेल मुद्रिका मुख माहीं ।
सुन शुभमय संवाद करै अचरज कोउ नाहीं ॥
लाय सजीवनि भूरि लखन कहँ जीवित दीनो ।
शोक-जलधि सो आप काढ़ि रघुवर कहँ लीनो ॥
रघुपति सादर सखा भाषि उर लावत भयऊ ।
सकलशोक तत्काल हृदय सों बाहर गयऊ ॥
श्रीमुख रौरे विशद गुणन को भाष्यो स्वामी ।
भरत बाहु बल होय तोहि कह अन्तरयामी ॥
भाखि सुखद संवाद तात भय भरत नसायो ।
हरषि सुजस ततकाल अवध नारी नर गायो ॥
रघुपति कर कछु काज तात तुम बिन नहिं सरितो ।
सुरपुर मो जय जैति शब्द तुव बिन को भरितो ॥

दोहा

देह बड़ाई बानरन, असुरन को वध कीन ।
तो सम को प्रिय सीय की, जासु शोक हर लीन ॥
जै-जै शंकर सुजन जैति जै केशरीनन्दन ।
जै-जै पवन कुमार जयति रघुवर पद बन्दन ॥
जय-जय जनक कुमारि प्यारि यह रघुपति पायक ।
जैति-जैति जै जैति तात सुर साधु सहायक ॥

सकल द्वारसों हार हाय तुव द्वारहि आयउँ ।
दान शीलता देखि रावरी हिय सुख पायउँ ॥
यादर सो महरूम तात अब कहाँ सिधारूँ ।
विपत काल में अहो नाथ अब काहि पुकारूँ ॥
कर गहि लेउ उबार नाथ हम दास तिहारो ।
कर गहि लेउ उबार नाथ कछु है न सहारो ॥
कर गहि लेउ उबार नाथ निज ओर निहारी ।
कर गहि लेउ उबार नाथ सिगरी विधि हारी ॥
कहि कर अजउँ उबारु नाथ भवसिन्धु अथा है ।
गहि कर अजउँ उबारु नाथ व्रज डूबन चाहै ॥
द्रवहु-द्रवहु यहि काल नाथ मोको कोउ नाहीं ।
द्रवहु-द्रवहु यहि काल हार आयउँ तुव पाहीं ॥
द्रवहु-द्रवहु हनुमत कीस दल के सिरताजू ।
द्रवहु-द्रवहु कपिराज ताज तुम संत समाजू ॥
विनवत हौं कर जोर अजौं टारहु मम संकट ।
बिनवत हौं कर जोर नाथ काटहु मम कंटक ॥
विनवत हौं हे नाथ दया को रन ते हेरहू ।
विनवत हौं हे नाथ इहाँ दारुण दुख टेरहू ॥
पद गहि विनवौं नाथ तोहिं कहँ कस नहिं भावै ।
पद गहि विनवौं हाय नाथ तुव दया न आवै ॥
पद गहि विनवौं हाय अजहुँ मो अभय करीजै ।
पद गहि विनवौं हाय अजहुँ सुख सम्पति दीजै ॥

दोहा

सुख सागर आनन्द घन, सन्तन के सिर मौर।
दुख-वन-पावक नाथ तुम, सिर पर सोहत खौर॥

[रोला छन्द]

आज जुरयो यहि काल मोहिपै दारुण सोको।
सूझत ना तिहुँ लोक माह तोसो कोउ मोको॥
स्वारथ हित सब जगत माँझ राखत है प्रीती।
पै रौरी हे नाथ हाय अहै अति नूठी रीती॥
हाय-हाय हे नाथ हाय अब मों न बिसारहु।
हाय-हाय हे नाथ हाय अब कोप निवारहु॥
धन बल विद्या हाय कछु नहिं मों ढिग साईं।
कवन सम्पदा कवन तात कब तो बिन पाई॥
दीन हीन सब भाँति हूजिये वेग सहायक।
फेरिये कृपा-कटाक्ष आप सब विधि सब लायक॥
सुखद कथा तुव हाय नाथ कस दीन सुभाखै।
सदा सुचरन पाहिं चित्त आपन कस राखै॥
काम क्रोध मद लोभ मोह मोहिं सदा सतावै।
चित्त वित्तसो हीन दीन कस तो कहँ पावै॥
अजहूँ होय सहाय मोर सब काज सँवारहुँ।
गयउँ सकल विधि हारि हाय अब मोहिं सँभारहुँ॥
सदा कहत सब लोग आप कहँ संकट मोचन।
सदा कहत सब लोग आप दारुन दुखमोचन॥

अपनहिं ओर निहारि नाथ मों कहँ जनि हेरहु ।
आय जुरेउ दुख विकट ताहि कहँ तुरतहिं टेरहु ॥
और कहौ कत नाथ तोहिं कह बहुत बुझाई ।
और कहौ कत हाथ मोहिं सों कहि नहिं जाई ॥
सदन गुनन के खान दीन हित जन-सुखदायक ।
ब्रजनन्दन दुख देख अजहुँ प्रभु होहु सहायक ॥

[सोरठा छन्द]

अजहूँ होय सहाय, तात निवारो दुख सब ।
कहा कहो समुझाय, अजहुँ न बिगरेउ काज कछु ॥

[हरिगीतिका छन्द]

बहु भाँति विनय बहोरि हे प्रभु जोरि कर भाखत अहौं ।
तुव चरण रत मम मन रहे कछु और वर जासों लहौं ॥
रघुवीर पायन पदुम पावन भृंग मोहिं बनाइये ।
भव-सिन्धु अगम अगाध सो ब्रज वाद अजहुँ लगाइये ॥
तुम तजि कहौं कासों विपति अब नाथ करो मेरी सुनै ।
रावरि भरोस सुवास तजि ब्रज और को कछु ना गुनै ॥
वैरी समाज विनाश करि हनुमान मोहि विजयी करौ ।
मेरी ढिठाई दोष अवगुन पै न चित सांई धरौ ॥
जब लगि सकल न गुमान तजि नर आइ राउर पद गहै ।
तब लगि दवानल पाप को बहु भाँति तन मनही दहै ॥
जब लगि न रावरि होय नर सब भाँति मन क्रम वचन ते ।
तब लगि न रघुवर दास होत करोर जोखिम यतन ते ॥

यदि मान जिय परमान निहचै सरन राउर व्रज गहै ।
परलोक लोक भरोस तजि नित नाथ का दरशन चहै ॥
हम अपनि ओर निहोर बहु विधि नाथ नित विनती करौं ।
हरषाय सादर नाथ तुव गुनगाथ निज हियरा धरौं ॥
जनि करहु मोहि अनाथनाथ सुदास है व्रज रावरो ।
हनुमान हैं शुचि पतित पावन दास जोपै पाँवरो ॥
अबहूँ करो न सनाथ नाथ तो जगत मोहि तोहि का कहै ।
यह रुचिर पावन स्वामि सेवक नेह नातो क्यों रहै ॥

दोहा

विजय चहैं निज काज महँ, हनुमत कहँ सिरनाय ।
लखि व्रज कर अब दुरदसा, द्रवहु अबहुँ तुम धाय ॥

[सोरठा]

हार देत सब काज, नाथ रावरे हाथ महँ ।
सजहु सकल शुभ साज, भाजहु जनि अब मोहि तजि ॥
पंगु भइ मो बुद्ध, अकथ कथा कस कहि सकौं ।
करहु काज मम सिद्ध, और कहा तोसों कहौं ॥
सुनै न समुझै रीत, मगन भयो मम प्रेम महँ ।
अब न सिखावहु नीत, यासो मोहि न काज कछु ॥
नहिं दर छाँड़ब हाथ, मारहु या जीवन रखहु ।
अजनन्दन बिलखाय, भाखत साखी दै सियहिं ॥
पाहि पाहि भगवन्त, अब सुधि लीजै दास की ।
दीजै दरस तुरन्त, करिय कृतारथ दीन जन ॥

माँगत दोउ कर जोरि, अभै दान तुम सन सदा।
बारहिं बार निहोरि, कहत करहु फुर मो वचन ॥
जो याको चित्त लाय, करे पाठ शुचि प्रेम सों।
ताकर सकल बलाय, हरहु रहहु दारुण बिपति ॥

दोहा

संवत् उन्निससै बरस, बीते तीन पचास।
नौमी तिथि सित पाख सुठि, रुचिर सुमाधव मास ॥
'हनूमान-लहरी' रचत, हिय धरि पवनकुमार।
सुजन दया करि दास पै, छमि हैं चूक अपार ॥

[सोरठा]

अखतियार पुर ग्राम, आरा जिला सुहावनो।
'व्रजनन्दन' मम नाम, सुत शिवनन्दन सुकवि को ॥
'व्रजबिहारि' लघुबन्धु, प्रेम नेम लखि जाहिकर।
प्रगट करौं सुखसिन्धु, 'हनुमान-लहरी' सरल ॥

इति हनुमान-लहरी समाप्ता।

*

हनुमानबाहुक[1]

[छप्पय]

सिंधु-तरन, सिय-सोच-हरन, रबि-बालबरन-तनु ।
भुज बिसाल, मूरति कराल कालहु को काल जनु ॥
गहन-दहन-निरदहन-लंक निःसंक, लंक-बुव ।
जातुधान-बलवान-मान-मद-दवन पवनसुव ॥
कह तुलसिदास सेवत सुलभ, सेवकहित संतत निकट ।
गुनगनत, नमत, सुमिरत, जपत, समन सकल-संकट-बिकट ॥१॥

स्वर्न-सैल-संकास कोटि-रबि-तरुन-तेज-घन ।
उर बिसाल, भुजदंड चंड नख बज्र बज्रतन ॥

---

१. विक्रम संवत् १६६४ के लगभग गोस्वामी तुलसीदासजी की बाहुओं में वात-व्याधि की भयंकर पीड़ा उत्पन्न हुई थी। और फोड़े-फुन्सियों के कारण उनके पूरे शरीर में पीड़ा होने लगी। दर्द कम होने के लिए ओषधि, यन्त्र, मन्त्र एवं अनेक टोटके वगैरह किये गये, किन्तु घटने के बदले रोग दिनों-दिन बढ़ता ही जाता था। असहनीय कष्टों से हताश होकर अन्त में उसकी निवृत्ति के लिए गोस्वामी तुलसीदासजी ने प्रस्तुत 'हनुमान-बाहुक' द्वारा हनुमानजी की वन्दना की थी। अञ्जनीकुमार की असीम अनुकम्पा से उनकी सारी व्यथा नष्ट हो गयी। यह वही चौवालिस पद्यों का प्रसिद्ध 'हनुमानबाहुक' नामक स्तोत्र है। श्रीहनुमान् जी के असंख्य उपासक निरन्तर इसका पाठ करते हैं और अपने वांछित मनोरथ को प्राप्त करके प्रसन्न होते हैं। संकटकालीन अवस्था में सद्यःफलदायक इस स्तोत्र का श्रद्धा-विश्वासपूर्वक पाठ अत्यधिक फलदायक सिद्ध हुआ है।

पिंग नयन, भृकुटी कराल रसना दसनानन ।
कपिस केस, करकस लँगूर, खल-दल-बल-भानन ।।
कह तुलसिदास बस जासु उर मारुतसुत मूरति विकट ।
संताप पाप तेहि पुरुष पहिं सपनेहुँ नहिं आवत निकट ।। २ ।।

[झूलना]

पंचमुख-छमुख-भृगुमुख्य भट-असुर-सुर,
सर्व-सरि-समर समरत्थ सूरो ।
बाँकुरो बीर बिरुदैत बिरुदावली,
बेद बंदी बदत पैजपूरो ।।
जासु गुनगाथ रघुनाथ कह, जासु बल
बिपुल-जल-भरित जग-जलधि झूरो ।
दुवन-दल-दमन को कौन तुलसीस है
पवन को पूत रजपूत रूरो ।। ३ ।।

[घनाक्षरी]

भानुसों पढ़न हनुमान गये भानु मन
अनुमानि सिसुकेलि कियो फेरफार सो ।
पाछिले पगनि गम गगन मगन-मन,
क्रम को न भ्रम, कपि बालक-बिहार सो ।।
कौतुक बिलोकि लोकपाल हरि हर विधि,
लोचननि चकाचौंधी चित्तनि खभार सो ।
बल कैधौं बीररस, धीरज कै, साहस कै,
तुलसी सरीर धरे सबनि को सार सो ।। ४ ।।

भारत में पारथ के रथकेतु कपिराज,
गाज्यो सुनि कुरुराज दल हलबल भो।
कह्यो द्रोन भीषम समीरसुत महाबीर,
बीर-रस-बारि-निधि जा को बल जल भो॥
बानर सुभाय बाल केलि भूमि भानु लागि,
फलँग फलाँगहू तें घाटि नभतल भो।
नाइ-नाइ माथ जोरि-जोरि हाथ जोधा जोहैं,
हनुमान देखे जगजीवन को फल भो॥ ५॥
गोपद पयोधि करि, होलिका ज्यों लाई लंक,
निपट निसंक परपुर गलबल भो।
द्रोन-सो पहार लियो ख्याल ही उखारि कर,
कंदुक-ज्यों कपिखेल बेल कैसो फल भो॥
संकटसमाज असमंजस भो रामराज,
काज जुग-पूगनि को करतल पल भो।
साहसी समत्थ तुलसी को नाह जाकी बाँह,
लोकपाल पालन को फिर थिर थल भो॥ ६॥
कमठ की पीठि जा के गोड़नि की गाड़ैं मानो
नापके भाजन भरि जलनिधि-जल भो।
जातुधान-दावन परावन को दुर्ग भयो,
महामीनबास तिमि तोमनि को थल भो॥
कुंभकर्न-रावन-पयोदनाद-ईंधन को
तुलसी प्रताप जा को प्रबल अनल भो।

भीषम कहत मेरे अनुमान हनुमान-
सारिखो त्रिकाल न त्रिलोक महाबल भो ॥ ७ ॥
दूत रामराय को, सपूत पूत पौन को, तू
अंजनी को नंदन प्रताप भूरि भानु सो ।
सीय-सोच-समन, दुरित-दोष-दमन,
सरन आये अवन, लखनप्रिय प्रान सो ॥
दसमुख दुसह दरिद्र करिबे को भयो,
प्रकट तिलोक ओक तुलसी निधान सो ।
ज्ञान-गुनवान बलवान सेवा सावधान,
साहेब सुजान उर आनु हनुमान सो ॥ ८ ॥
दवन-दुवन-दल भुवन-विदित बल,
बेद जस गावत बिबुध बंदीछोर को ॥
पाप-ताप-तिमिर तुहिनबिघटन-पटु,
सेवक-सरोरुह सुखद भानु भोर को ।
लोक-परलोकतें बिसोक सपने न सोक,
तुलसी के हिये है भरोसो एक ओर को ॥
राम को दुलारो दास बामदेव को निवास,
नाम कलि-कामतरु केसरी-किसोर को ॥ ९ ॥
महाबल-सीम, महाभीम, महाबानइत,
महाबीर बिदित, बरायो रघुबीर को ।
कुलिस-कठोरतनु जोर परै रोर रन,
करुना-कलित मन धारमिक धीर को ॥

दुर्जन को काल सो कराल पाल सज्जन को
सुमिरे हरनहार तुलसी को पीर को।
सीय-सुखदायक दुलारो रघुनायक को,
सेवक सहायक है साहसी समीर को ॥१०॥
रचिबे को बिधि जैसे, पालिबे को हरि, हर
मीच मारिबे को, ज्याइबे को सुधापान भो।
धरिबे को धरनि, तरनि तम दलिबे को,
सोखिबे कृसानु, पोषिबे को हिम-भानु भो॥
खल-दुख-दोषिबे को, जन-परितोषिबे को,
माँगिबो मलीनता को मोदक सुदान भो।
आरत की आरति निवारिबे को तिहूँ पुर,
तुलसी को साहेब हठीलो हनुमान भो ॥११॥
सेवक स्योकाई जानि जानकीस मानै कानि,
सानुकूल सूलपानि नवै नाथ नाँक को।
देवी देव दानव दयावने ह्वै जोरैं हाथ,
बापुरे बराक कहा और राजा राँक को॥
जागत सोवत बैठे बागत बिनोद मोद,
ताकै जो अनर्थ सो समर्थ एक आँक को।
सब दिन रूरो परै पूरो जहाँ-तहाँ ताहि,
जाके है भरोसो हिये हनुमान हाँक को ॥१२॥
सानुग सगौरि सानुकूल सूलपानि ताहि,
लोकपाल सकल लखन राम जानकी।

लोक-परलोक को बिसोक सो तिलोक ताहि,
तुलसी तमाइ कहा काहू बीर आनकी ॥
केसरीकिसोर बंदीछोरके नेवाजे सब,
कीरति बिमल कपि करुनानिधान की ।
बालक-ज्यों पालिहैं कृपालु मुनि सिद्ध ता को,
जाके हिये हुलसति हाँक हनुमान की ॥१३॥

करुना निधान, बलबुद्धि के निधान, मोद-
महिमानिधान, गुन-ज्ञान के निधान हौ ।
बामदेव-रूप, भूप राम के सनेही, नाम
लेत देत अर्थ धर्म काम निरबान हौ ॥
आपने प्रभाव, सीतानाथ के सुभाव सील,
लोक-बेद-बिधि के बिदुष हनुमान हौ ।
मन की, बचन की, करम की तिहूँ प्रकार,
तुलसी तिहारो तुम साहेब सुजान हौ ॥१४॥

मनको अगम, तनसुगम किये कपीस,
काज महाराज के समाज साज साजे हैं ।
देव-बंदीछोर रनरोर केसरीकिसोर,
जुग जुग जग तेरे बिरद बिराजे हैं ॥
बीर बरजोर, घटि जोर तुलसी की ओर
सुनि सकुचाने साधु, खलगन गाजे हैं ॥
बिगरी सँवार अंजनीकुमार कीजे मोहिं,
जैसे होत आये हनुमान के निवाजे हैं ॥१५॥

सवैया

जान सिरोमनि हौ हनुमान सदा जन के मन बास तिहारो।
ढारो बिगारो मैं का को कहा केहि कारन खीझत हौं तो तिहारो॥
साहेब सेवक नाते ते हातो कियो सो तहाँ तुलसी को न चारो।
दोष सुनाये तें आगेहुँ को होशियार ह्वै हौं मन तौ हिय हारो॥१६॥
तेरे थपे उथपै न महेस, थपै थिर को कपि जे घर घाले।
तेरे निवाजे गरीबनिवाज बिराजत वैरिन के उर साले॥
संकट सोच सबै तुलसी लिये नाम फटै मकरी के-से जाले।
बूढ़ भये बलि, मेरिहि बार, कि हारि परे बहुतै नत पाले॥१७॥
सिंधु तरे, बड़े बीर दले खल, जारे हैं लंक से बंक मवासे।
तैं रन-केहरि केहरि के बिदले अरि-कुंजर छैल छवा से॥
तोसों समत्थ सुसाहेब सेइ सहै तुलसी दुख-दोष दवा से।
बानर-बाज बढ़े खल-खेचर, लीजत क्यों न लपेटि लवा-से॥१८॥
अच्छ-बिमर्दन कानन-भानि दसानन आनन भा न निहारो।
बारिदनाद अकंपन कुंभकरन्न-से कुंजर केहरि-बारो॥
राम-प्रताप-हुतासन, कच्छ, बिपच्छ, समीर समीरदुलारो।
पाप तें, साप तें, ताप तिहूँ तें सदा तुलसी कहँ सो रखवारो॥१९॥

घनाक्षरी

जानत जहान हनुमान को निवाज्यो जन,
मन अनुमानि, बलि, बोल न बिसारिये।
सेवा-जोग तुलसी कबहुँ कहा चूक परी,
साहेब सुभाव कपि साहिबी सँभारिये॥

अपराधी जानि कीजै सासति सहस भाँति,
मोदक मरै जो, ताहि माहुर न मारिये ।
साहसी समीर के दुलारे रघुबीरजू के,
बाँह पीर महाबीर बेगि ही निवारिये ॥२०॥
बालक बिलोकि, बलि, बारेतें आपनो कियो,
दीनबंधु दया कीन्हीं निरुपाधि न्यारिये ।
रावरो भरोसो तुलसी के, रावरोई बल,
आस रावरीयै, दास रावरो बिचारिये ॥
बड़ो बिकराल कलि, काको न बिहाल कियो,
माथे पगु बली को, निहारि सो निवारिये ।
केसरीकिसोर, रनरोर, बरजोर बीर,
बाँहुपीर राहुमातु ज्यौं पछारि मारिये ॥२१॥
उथपे थपनथिर थपे उथपनहार,
केसरीकुमार बल आपनो सँभारिये ।
राम के गुलामनि को कामतरु रामदूत,
मोसे दीन दूबरे को तकिया तिहारिये ॥
साहेब समर्थ तोसों तुलसी के माथे पर,
सोऊ अपराध बिनु बीर, बाँधि मारिये ।
पोखरी बिसाल बाँहु, बलि बारिचर पीर,
मकरी ज्यौं पकरिकै बदन बिदारिये ॥२२॥
राम को सनेह, राम साहस लखन सिय,
राम की भगति, सोच संकट निवारिये ।

मुद-मरकट रोग-बारिनिधि हेरि हारे,
जीव-जामवंत को भरोसो तेरो भारिये ॥
कूदिये कृपाल तुलसी सुप्रेम-पब्बयतें,
सुथल सुवेल भालु बैठि कै बिचारिये ।
महाबीर बाँकुरे बराकी बाँहपीर क्यों न,
लंकिनी ज्यों लातघात ही मरोरि मारिये ॥२३॥
लोक-परलोकहूँ तिलोक न बिलोकियत,
तोसे समरथ चष चारिहूँ निहारिये ।
कर्म, काल, लोकपाल, अग-जग जीवजाल,
नाथ हाथ सब निज महिमा बिचारिये ॥
खास दास रावरो, निवास तेरो तासु उर,
तुलसी सो देव दुखी देखिअत भारिये ।
बात तरुमूल बाँहुसूल कपिकच्छु बेलि,
उपजी सकेलि कपिकेलि ही उखारिये ॥२४॥
करम-कराल-कंस भूमिपाल के भरोसे,
बकी बकभगिनी काहू तें कहा डरैगी ।
बड़ी बिकराल बालघातिनी न जात कहि,
बाँहुबल बालक छबीले छोटे छरैगी ॥
आई है बनाइ बेष आप ही बिचारि देख,
पाप जाय सब को गुनी के पाले परैगी ।
पूतना पिसाचिनी ज्यौं कपिकान्ह तुलसी की,
बाँहपीर महाबीर, तेरे मारे मरैगी ॥२५॥

भाल की कि काल की कि रोष की त्रिदोष की है,
वेदन विषम पाप-ताप छलछाँह का।
करमन कूट की कि जंत्र-मंत्र बूट की,
पराहि जाहि पापिनी मलीन मनमाँह की॥
पैहहि सजाय, नत कहत बजाय तोहि,
बावरी न होहि बानि जानि कपिनाँह की।
आन हनुमान की दोहाई बलवान की,
सपथ महावीर की जो रहै पीर बाँह की॥२६॥
सिंहिका सँहारि बल, सुरसा सुधारि छल,
लंकिनी पछारि मारि बाटिका उजारी है।
लंक परजारि मकरी बिदारि बार-बार,
जातुधान धारि धूरिधानी करि डारी है॥
तोरि जमकातरि मन्दोदरी कढ़ोरि आनी,
रावन की रानी मेघनाद महँतारी है।
भीर बाँहपीर की निपट राखी महाबीर,
कौन के सकोच तुलसी के सोच भारी है॥२७॥
तेरो बालकेलि बीर सुनि सहमत धीर,
भूलत सरीरसुधि सक्र रबि-राहु की।
तेरी बाँह बसत बिसोक लोकपाल सब,
तेरो नाम लेत रहै आरति न काहु की॥
साम दाम भेद बिधि बेदहू लबेद सिधि,
हाथ कपिनाथ ही के चोटी चोर साहु की।

आलस अनख परिहास कै सिखावन है,
एते दिन रही पीर तुलसी के बाहु की ॥२८॥

टूकनि को घर-घर डोलत कँगाल बोलि,
बाल ज्यौं कृपाल नतपाल पालि पोसो है।
कीन्ही है सँभार सार अंजनीकुमार वीर,
आपनो बिसारि हैं न मेरेहू भरोसो है॥
इतनो परेखो सब भाँति समरथ आजु,
कपिराज साँची कहौं को तिलोक तोसो है।
साँसति सहत दास कीजे पेखि परिहास,
चीरी को मरन खेल बालकनि को सो है ॥२९॥

आपने ही पाप तें त्रिताप तें कि साप तें,
बढ़ी है बाँहबेदन कही न सहि जाति है।
औषध अनेक जंत्र-मंत्र-टोटकादि किये,
बादि भये देवता मनाये अधिकाति है॥
करतार, भरतार, हरतार, कर्म, काल,
को है जगजाल जो न मानत इताति है।
चेरो तेरो तुलसी तू मेरो कह्यो रामदूत,
ढील तेरी बीर मोहिं पीर तें पिराति है ॥३०॥

दूत रामराय को, सपूत पूत बाय को,
समत्थ हाथ पाय को सहाय असहाय को।
बाँकी बिरदावली बिदित बेद गाइयत,
रावन सो भट भयो मुठिका के घाय को॥

एते बड़े साहेब समर्थ को निवाजो आज,
सीदत सुसेवक बचन मन काय को।
थोरी बाँहपीर की बड़ी गलानि तुलसी को,
कौन पाप कोप, लोप प्रगट प्रभाय को ॥३१॥
देवी देव दनुज मनुज मुनि सिद्ध नाग,
छोटे बड़े जीव जेते चेतन अचेत हैं।
पूतना पिसाची जातुधानी जातुधान बाम,
रामदूत की रजाइ माथे मानि लेत हैं॥
घोर जंत्र मंत्र कूट कपट कुरोग जोग,
हनूमान आन सुनि छाड़त निकेत हैं।
क्रोध कीजे कर्म को प्रबोध कीजे तुलसी को,
सोध कीजे तिन को जो दोष दुख देत हैं ॥३२॥
तेरे बल बानर जिताये रन रावन सों,
तेरे घाले जातुधान भये घर-घर के।
तेरे बल रामराज किये सब सुरकाज,
सकल समाज साज साजे रघुबर के॥
तेरो गुनगान सुनि गीरबान पुलकत,
सजल बिलोचन बिरंचि हरि हर के।
तुलसी के माथे पर हाथ फेरो कीसनाथ,
देखिये न दास दुखी तोसे कनिगर के ॥३३॥
पालो तेरे टूक को परेहू चूक मूकिये न,
कूर कौड़ी दू को हौं आपनो ओर हेरिये।

भोरानाथ भोरेही सरोष होत थोरे दोष,
पोषि तोषि थापि आपनो न अवडेरिये ॥
अंबु तू हौं अंबुचर, अंब तू हौं डिंभ, सो न,
बूझिये बिलंब अवलंब मेरे तेरिये।
बालक बिकल जानि पाहि प्रेम पहिचानि,
तुलसी की बाँह पर लामी लूम फेरिये ॥३४॥
घेरि लियो रोगनि कुजोगनि कुलोगनि ज्यौं,
बासर जलद घन घटा धुकि धाई है।
बरसत बारि पीर जारिये जवासे जस,
रोष बिनु दोष, धूम-मूल मलिनाई है ॥
करुनानिधान हनुमान महाबलवान,
हेरि हँसि हाँकि फूँकि फौजैं तैं उड़ाई है।
खाये हु तो तुलसी कुरोग राढ़ राकसनि,
केसरीकिसोर राखे बीर बरिआई है ॥३५॥

सवैया

रामगुलाम तुही हनुमान्
गोसाँइ सुसाँइ सदा अनुकूलो।
पाल्यो हौ बाल ज्यों आखर दू
पितु मातु सों मंगल मोद समूलो ॥
बाँहकी बेदन बाँहपगार
पुकारत आरत आनँद भूलो।

श्रीरघुबीर निवारिये पीर
रहौं दरबार परो लटि लूलो ॥३६॥

घनाक्षरी

काल की करालता करम कठिनाई कीधौं,
पाप के प्रभाव की सुभाय बाय बावरे ।
बेदन कुभाँति सो सही न जाति राति दिन,
सोई बाँह गही जो गही समीरडाबरे ॥
लायो तरु तुलसी तिहारो सो निहारि बारि,
सींचिये मलीन भो तयो है तिहूँ तावरे ।
भूतनि की आपनी पराये की कृपानिधान,
जानियत सब ही की रीति राम रावरे ॥३७॥
पायँपीर पेटपीर बाँहपीर मुँहपीर,
जरजर सकल सरीर पीर भई है ।
देव भूत पितर करम खल काल ग्रह,
मोहिं पर दवरि दमानक सी दई है ॥
हौं तो बिन मोल के बिकानो बलि बारे ही तें,
ओट रामनाम की ललाट लिखि लई है ।
कुंभज के किंकर बिकल बूड़े गोखुरनि,
हाय रामराय ऐसी हाल कहूँ भई है ॥३८॥

ताडुक-सुबाहु नीच लीचर-मरीच मिलि,
मुँहपीर-केतुजा कुरोग जातुधान हैं।
रामनाम जपजाग कियो चहों सानुराग,
काल कैसे दूत भूत कहा मेरे मान हैं ॥
सुमिरे सहाय रामलखन आखर दोऊ,
जिनके समूह साके जागत जहान हैं।
तुलसी सँभारि ताड़का-सँहारि भारि भट,
बेधे बरगद से बनाइ बानवान हैं ॥३९॥
बालपने सूधे मन राम सनमुख भयो,
रामनाम लेत माँगि खात टूकटाक हौं।
पर्यो लोकरीतिमें पुनीत प्रीति रामराय,
मोहबस बैठो तोरि तरकितराक हौं ॥
खोटे-खोटे आचरन आचरत अपनायो,
अंजनीकुमार सोध्यो रामपानि पाक हौं।
तुलसी गोसाइँ भयो भोंड़े दिन भूलि गयो,
ताको फल पावत निदान परिपाक हौं ॥४०॥
असन-बसन-हीन विषम-विषाद-लीन,
देखि दीन दूबरो करै न हाय हाय को।
तुलसी अनाथ सो सनाथ रघुनाथ कियो,
दियो फल सीलसिंधु आपने सुभाय को ॥

नीच यहि बीच पति पाइ भरुहाइगो,
बिहाइ प्रभु-भजन बचन मन काय को।
तातें तनु पेषियत घोर बरतोर मिस,
फूटि-फूटि निकसत लोन रामराय को ॥४१॥
जिऔं जग जानकीजीवन को कहाइ जन,
मरिबेको बारानसी बारि सुरसरि को।
तुलसी के दुहूँ हाथ मोदक है ऐसे ठाउँ,
जाके जिये मुये सोच करिहैं न लरि को ॥
मो को झूठ साँचो लोग राम को कहत सब,
मेरे मन मान है न हर को न हरि को।
भारी पीर दुसह सरीर तें बिहाल होत,
सोऊ रघुबीर बिनु सकै दूर करि को ॥४२॥
सीतापति साहेब सहाय हनुमान नित,
हित उपदेस को महेस मानो गुरु कै।
मानस बचन काय सरन तिहारे पाँय,
तुम्हरे भरोसे सुर मैं न जाने सुर कै॥
ब्याधि भूतजनित उपाधि काहू खल की,
समाधि कीजे तुलसी को जानि जन फुर कै।
कपिनाथ रघुनाथ भोलानाथ भूतनाथ,
रोगसिंधु क्यों न डारियत गाय खुरकै ॥४३॥

कहौं हनुमान सों सुजान रामराय सों,
कृपानिधान संकर सों सावधान सुनिये।
हरष विषाद राग रोष गुन दोषमई, ।।
बिरची बिरंचि सब देखियत दुनिये ।।
माया जीव काल के करम के सुभाय के,
करैया राम बेद कहैं साँची मन गुनिये।
तुम्ह तें कहा न होय हाहा सो बुझैये मोंहि,
हौं हुँ रहों मौन ही बयो सो जानि लुनिये ।।४४।।

इस प्रकार हनुमद्-रहस्य में गोस्वामी तुलसीदासकृत हनुमानबाहुक समाप्त।

*

इति आचार्य पण्डित श्रीशिवदत्तमिश्र शास्त्रि रचित हनुमद्-रहस्य समाप्त।



हनुमान्‌जी की आरती

आरति कीजै हनुमान लला की । दुष्टदलन रघुनाथ कला की ॥
जाके बल से गिरिवर काँपै । रोग दोष जाके निकट न झाँपै ॥
अंजनि - पुत्र महा बलदाई । संतन के प्रभु सदा सहाई ॥
दे बीरा रघुनाथ पठाये । लंका जारि सीय सुधि लाये ॥
लंका सो कोटसमुद्र-सी खाई । जात पवनसुत बार न लाई ॥
लंका जारि असुर संहारे । सियाराम जी के काज सँवारे ॥
लक्ष्मण मूर्छित पड़े सकारे । आनि सजीवन प्रान उबारे ॥
पैठि पताल तोरि जम-कारे । अहिरावण की भुजा उखारे ॥
बाँयें भुजा असुर दल मारे । दहिने भुजा संतजन तारे ॥
सुर नर मुनि आरती उतारे । जै-जै-जै हनुमान उचारे ॥
कंचन थार कपूर लौ छाई । आरति करत अंजनी माई ॥
जो हनुमान की आरति गावै । बसि बैकुंठ परमपद पावै ॥

इति हनुमत्-आरती समाप्त ।

*

